

धर्म-शिक्षा

शक्तिवाद प्रवर्तक

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

प्रकाशक: www.shaktibad.net

असल बँगला संस्करण: आनुमानिक 1950 C.E.

पूर्व संस्करण: 1977 C.E.

वर्तमान इन्टारनेट संस्करण: March 10, 2013 C.E. (शिवरात्रि)

इस पुस्तक सभी मनुष्यों के लिए है। मूलको विकृत न करके इसका प्रचार और प्रकाश सदा ही आदरणीय है।

सूची-पत्र

पाठकों के प्रति।	5-8
धर्म किसे कहते हैं? पूर्णता ही धर्म।	9-10
कर्म धर्म ही अध्यात्म धर्म का प्रधान अंग है। वेद में चार वर्णोंमें प्रीति का आदेश। शिष्टाचार। आत्म विकाश के लिए अनेक दीक्षा। स्वराज प्राप्ति के लिए वेद का आदेश। शक्तिमान और तेजस्वी नेता का अनुशासन करना ही वेद का आदेश।	10-17
उपासना किसे कहते हैं? विकास के भेद में उपासना का भेद होता है। सात प्रकार की उपासना।	18-21
संक्षेप में सन्ध्योपासना का क्रम	21-24
महाव्याहृति	24-29
सगुण ब्रह्म। गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव, शक्ति।	29-34
मूर्ति विज्ञान, नारायण शिला, शिवमूर्ति।	34-43
लिंग मूर्ति और शास्त्र का प्रमाण	44-50
अवतार उपासना। कलाविज्ञान। श्रीकृष्ण, श्रीराम, श्रीबुद्ध	50-56
महापुरुष उपासना। सिद्ध स्वयम्भुव मनु, सप्तर्षि, व्यासदेव, जैमिनी, गौतम, कणाद, कपिल, पातञ्जलि, पाणिनी, याज्ञबल्क्य, नागार्जुन, हरिश्चन्द्र, हनुमान, शिवि, ययाति, भीष्म, कर्ण, अर्जुन, प्रताप सिंह, शिवाजी, गुरु गोविन्द, दयानन्द, विवेकानन्द। सती, गार्गी, राधिका, शवरी।	56-75
देवता उपासना। दैवी सम्पदाये, आसुरिक सम्पदाये। सत्य, अभय, अहिंसा, शान्ति, तेज। दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, पारुष्य।	76-80
पितृ उपासना।	80-82
प्रेत उपासना।	82-84
शीतला मूर्ति। मूर्ति पूजा।	84-85
अस्त्र प्रतीक। कृपाण।	85-86
उपासना में अग्नि, जल और ब्रह्मनाडी।	86
ज्ञानधर्म।	86-87
ग्रन्थिभेद ज्ञान। ब्रह्म ग्रन्थि, विष्णु ग्रन्थि, रुद्र ग्रन्थि।	87-90

दार्शनिक ज्ञान।	91
महामन्त्र ज्ञान।	91-92
सृष्टि के विभिन्न स्तर का ज्ञान।	92-93
उपनिषद् का ज्ञान।	94-97
धर्मग्रन्थ। वेद, षडंगवेद, उपवेद, स्मृति, पुराण, तन्त्र, रामायण, महाभारत, योग शास्त्र। रुद्री, गीता, चण्डी।	97-100
स्वास्थ्य धर्म। व्यायाम। हठ योग।	101-103

चित्र सूची

ब्रह्मनाड़ी चित्र	27
मस्तिष्क चित्र	31
शिव मूर्ति, आज्ञा, बीज और अंकुर चित्र (I-IV)	39
मस्तिष्क में आज्ञा, सहस्रार और शिव पिण्ड चित्र	41
मस्तिष्क के वैज्ञानिक चित्र (I-III)	42-43

पाठकों के प्रति

‘धर्म शिक्षा’ पुस्तक विद्यालयों के छात्र-छात्राओं के लिए लिखी गयी है। इसके द्वारा हिन्दू मात्र ही उपकृत होंगे। बहुत दिनों से हमारी शिक्षा के अन्तर्गत धर्म शिक्षा अन्तरभुक्त न होने के कारण हमलोग अपने धर्म के सम्बन्ध में विशेष अनभिज्ञ रह गये हैं। विरुद्धवादी लोग हमारे सम्बन्ध में समालोचना करने पर भी हमलोगों में उनका जवाब देने की शक्ति भी खो गये। बहुत दिनों से धर्म सम्बन्धीय कोई आलोचना न रहने के कारण धर्म की कोई विज्ञान हम कहने में सक्षम नहीं रह गये। हिन्दूधर्म अत्यन्त वैज्ञानिक एवं दार्शनिक धर्म है। धर्म के विज्ञान एवं दार्शनिकता सबके लिए जानना जरूरी है। इसके कर्म विज्ञान, उपासना विज्ञान एवं दार्शनिकता सब युक्तिवाद के ऊपर प्रतिष्ठित है। हिन्दूधर्म के प्रकृत वैज्ञानिक एवं दार्शनिक रहस्य उद्घाटन के लिए यह पुस्तक लिखी गयी है। इसी कारण यह हिन्दूमात्र को धर्मानुष्ठान में श्रद्धा वृद्धि करने में सक्षम होगी। अहिन्दू लोग भी इस पुस्तक का पाठ करने से अच्छी तरह समझ जायेंगे कि मनुष्य का कर्म धर्म, उपासना धर्म एवं ज्ञान धर्म का वैज्ञानिक भित्ति है एवं विश्वासवाद धर्म को धर्म नहीं कहा जा सकता है।

विभिन्न श्रेणी या विभिन्न उम्र के बालक, बालिकाओं के लिए विभिन्न प्रकार का धर्मग्रन्थ न लिखकर एक ही ग्रन्थ रखा गया है। मानव जीवन में संस्कार एवं शिक्षा एक अपूर्व वस्तु है। संस्कार द्वारा ही मनुष्य बर्बर, पशु एवं असुर होता है और संस्कार ही मनुष्य को शक्तिशाली देवत्व दान करता है। दुर्बल संस्कार द्वारा मनुष्य की मनोवृत्ति दुर्बल हो जाती है। धर्मशिक्षा हिन्दू जाति को हिन्दूत्व के आदर्श में ढालने का एक संस्कार धारा मात्र है। विभिन्न उमर के भाषाज्ञान को नकल करने से कोई संस्कार सम्भव नहीं होगा। वरन् पुस्तक का भार वहन करना होगा। निम्न श्रेणी के विद्यार्थियों को पहले ही नित्य उपासना विधि से परिचित करना होगा। यह विधि नित्य अनुष्ठान हो इसलिए विशेषरूप से पिता-माता एवं शिक्षक आदि को सचेष्ट रहना होगा। बाद में धीरे-धीरे सब रहस्य कहना पड़ेगा। प्रथम से दशम श्रेणी तक एक ही पुस्तक पाठ्य होने के कारण आलोचना द्वारा ही धर्म के सब रहस्य सब उमर के विद्यार्थी के आयत्त में आ जायगी एवं हिन्दू समाज के सब शाखा में निजी धर्मग्रन्थ प्रकाशित हो जायेगी। फलस्वरूप हमारा राष्ट्रीय समाज एवं धर्मजीवन एक सुनिर्दिष्ट वैज्ञानिक, दार्शनिक, शक्तिशाली भित्ति लेकर उठ सकेगा। विश्वविद्यालय, विद्यालय परिचालक मण्डली, टोल, शिक्षक, अभिभावक, मठधारी या साधु सन्यासी सभी को धर्मशिक्षा द्वारा समाज को शक्तिशाली संस्कार में सहायक होने के लिए अनुरोध करते हैं।

समाज धर्म एवं कर्म व्यवस्था ही कर्मधर्म है। इस अध्याय में समाज धर्म का किस प्रकार प्रवर्तन हुआ था एवं आजकल इसका क्या रूप हुआ है, इसका संशोधन इत्यादि विशद आलोचना किया गया है। आवश्यक विरोधिता निरसन के लिए ही सब स्थानों पर वेद से प्रमाण उद्धृत किया गया है। पाठक देखेंगे कि हिन्दू धर्म का समाजधर्म अत्यन्त शक्तिशाली है। यह भूलकर ही हमारा समाज पदान्त हो गया है।

उपासना धर्म अंश में निर्गुण ब्रह्मोपासना, अवतार, देवता, पितृ, महापुरुष, प्रेत उपासनार्थे किस प्रकार एक ही ब्रह्म उपासना के शाखा है, इस सम्बन्ध में भी विस्तारित आलोचना की गई है। नारायण शिला, शिव मूर्ति, कृपाण, शीतला, हनुमान प्रभृति मूर्ति वैज्ञानिक दृष्टि से स्पष्ट किया गया है। अनेक शास्त्र प्रमाण द्वारा एवं वैज्ञानिक चित्र द्वारा शिवमूर्ति के सम्बन्ध में सन्देह दूर किया गया है। नित्य उपासना स्तोत्र, कुछ सगुण ब्रह्म स्तुति, अभय सुक्त, वेद के महामन्त्र, उपनिषद् के ज्ञान अंश के उद्धृत मन्त्रों को आयत्त कर लेना सब का कर्तव्य है। महापुरुष उपासना अंश में बहु पूज्य नारी के जीवन चरित्र इस प्रकार आलोचित हुआ है जिससे प्रत्येक चरित्र के ऊपर एक-एक प्रकार का महान प्रेरणा प्रतिष्ठित करेगा। इस अध्याय में जीवन चरित्रों के द्वारा समाज एवं जाति गठन को प्रेरणा एवं ब्रह्मज्ञान रहस्य का उदधाटन किया गया है। यह छोटे-छोटे बालक-बालिकाओं के चरित्र गठन में विशेष सहायक होगा। ज्ञानधर्म अंश में उपनिषद् के ज्ञान, दार्शनिक ज्ञान, योग निर्दिष्ट ग्रन्थिभेद ज्ञान, सृष्टि के विभिन्न स्तर का ज्ञान विशेष समन्वय रूप से आलोचित हुआ है।

हिन्दू धर्म किस रूप युक्तिवादिता का धर्म है, इस अध्याय एवं समस्त ग्रन्थ में ही उसके दिकदर्शन में त्रुटि नहीं किया गया है।

हिन्दू धर्म के साथ अन्य धर्म की दार्शनिकता में क्या भेद है इस पुस्तक के अनेक स्थानों में दिखाया गया है। ज्ञानधर्म अध्याय में समग्र हिन्दू शास्त्र का एक साधारण परिचय दिया गया है। जो बालक वृद्ध एवं प्रत्येक हिन्दू नर-नारी को जानना जरूरी है।

ग्रन्थ के अन्त में “स्वास्थ्य धर्म” नामक एक सुन्दर अध्याय दिया गया है। इसमें समवेत व्यायाम के लिए संस्कृत शब्दसम्बलित कूचकावाज सन्निवेश किया गया है। सहज साध्य एवं स्वास्थ्य रक्षा के अत्यन्त प्रयोजनीय अनेक व्यायाम इसमें दिया गया है। जो नरनारी मात्र ही सम्पूर्ण जीवन तक अनुष्ठित करके स्वस्थ्य रह सकेगा।

ग्रन्थ के शेष भाग में सामवेदीय सन्धोपासना देने का इच्छा थी किन्तु आवश्यक टीका-टीप्पणी एवं सहज शान्तिप्रद योग विधानें आलोचना न करने से इस अध्याय का वैशिष्ट्य कम हो जाएगा एवं ग्रन्थ के आकार में वृद्धि अशोभन है शोचकर हम इस इच्छा का त्याग किये हैं।

ग्रन्थ में पौरुहित्यवाद एवं ब्राह्मण्यवाद का विषय आया है। वह सब बातें स्पष्ट की जा रही हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र (मजूर) कर्म के भाग के अनुसार शास्त्र में चार वर्ण हैं। बौद्धधर्म के प्रभाव से भारत के अनेक स्थान से ही चार वर्ण की भित्ति टूट गई है। जो भी हो, ब्राह्मणगण हमारे समाज में ब्रह्मण्यवाद और पौरुहित्यवाद के प्रतिष्ठाता हैं। क्षत्रियगण शक्तिवाद (पुरुषोत्तमवाद) एवं आसुरिकवाद की स्थापना किये हैं। वैश्य से समाजपालन एवं शोषणवाद (राक्षसवाद) आया है। शूद्र से कर्तृत्वहीन कर्मवाद एवं तामसिकता आया है। सब समान है एवं सभी में एक ही आत्मा विद्यमान है यह ब्राह्मण्यवाद है। समाज के अंश विशेष एवं उनलोगों का वंश श्रेष्ठ है। उनके भिन्न अन्यान्य अंश एवं उनका वंश निकृष्ट है, देवाल्यों में, तीर्थ में, मन्त्र में, शास्त्र में ये ही ईश्वर के ठिकेदार एवं अन्यान्य अंश नोकर-चाकर हैं, यह मतवाद ही पौरुहित्यवाद है। ब्राह्मण्यवाद को समाज वन में प्रतिष्ठित रखने के पक्ष में राक्षस एवं असुर लोग अत्यन्त विपद्जनक शत्रु हैं, इनलोगों को दमन रखकर समाज के समस्त अंग के विकाशनीति प्रतिष्ठित रखने का कर्मनीति ही शक्तिवाद एवं पुरुषोत्तम वाद है। पौरुहित्यवाद, आसुरिकवाद, शोषणवाद एवं तामसिकता को वहिष्कार करना होगा, यही पुरुषोत्तमवाद है। पौरुहित्यवाद जिस देश में जितनी वृद्धि होगी उस देश में दिन-प्रतिदिन शूद्र की संख्या और तामसिकता भी वृद्धि होगी। “तामसिकगणों को हजार जूता मारो, अपमान करो, लेकिन उनलोगों को न होश न हवास है।” खुद नित्य उपासना करोगे। मठ में मन्दिर में, देवाल्यों में तुमलोग ब्रह्मस्तुति या सगुण ब्रह्मस्तुति का पाठ कर जल, फुल, दीपादि एवं पुष्पम निवेदन करोगे। फलस्वरूप पौरुहित्यवाद नष्ट हो जायगा।

एकदल मूर्ख सर्वत्र है जो हिन्दूधर्म को अहिन्दूधर्म की तरह विश्वासवाद कहकर प्रमाण करना चाहते हैं। उनलोगों को हम यह पुस्तक पाठ करने के लिए कहते हैं। जो वैज्ञानिक एवं दार्शनिक धर्म का अनुष्ठान करते हैं चिरजीवन धर्मानुष्ठान को जीवन का पवित्रतम व्रत मानकर जीवन व्यतीत करते हैं, इस पृथ्वीपर वे ही लाभवान होते हैं। धर्मानुष्ठान सिद्ध होने पर उसके द्वारा शक्ति, सुख एवं आत्मज्ञान लाभ होता है। यदि सिद्ध नहो तो इस शरीर में आंशिक सुख, आंशिक शान्ति, आंशिकज्ञान एवं परकाल में सुख होता है, जन्मान्तर में इस पृथ्वी पर धनी, सुखी एवं कर्तृत्व सम्पन्न होने का भाग्य लेकर जन्म ग्रहण करता है। वैज्ञानिक रूप से अनुष्ठित कर्म, उपासना एवं ज्ञान मनुष्य का केवल आत्मज्ञान लाभ करने में सहायक नहीं होता बल्कि वह मनुष्य को लौकिक ऐश्वर्य प्राप्ति में भी विशेषरूप से सहायक होता है। वैज्ञानिक धर्माचरण के अभाव में या मूर्ख एवं बर्बर धर्म के अनुशीलन के फलस्वरूप मनुष्य अंगहीन, ऐश्वर्यहीन, प्रतिष्ठाहीन, यशहीन, भाग्यहीन होकर जन्म लेते हैं। इस सम्बन्ध में वेद एवं गीताका आदेश देखिए:-

प्राप्य पुण्य कृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते॥ ६-४१॥

जो लोग योग भ्रष्ट होते हैं वे लोग पुण्य लोक प्राप्त करते हैं, एवं वहाँ पर बहु युग तक सुख से अतिवाहित करते हैं, वे लोग शुद्ध वंश में एवं ऐश्वर्ययुक्त गृह में जन्म ग्रहण करते हैं।

इह चेदशकद्बोद्धुं प्राक्षरीरस्य विस्रसः।

ततः सर्गेषु लोकेषु शरीरत्वाय कल्पते॥ कठ ११३॥

इस देह में ही यदि कोई ब्रह्मतत्त्व जान सके एवं जानते हो, शरीरपात के पूर्व ही वह समस्त संसार के बन्धन से विमुक्त हो जायेगा। जो समझने में असक्त होते हैं वे उसके फलस्वरूप स्वर्गादि सुखस्थान में शरीर लाभ करने के अधिकारी होते हैं।

इति -

ग्रन्थकार

॥ ॐ हंसः षट् श्रीमद् गुरवे नमः॥

धर्म किसे कहते हैं?

तुमलोग नदी देखे हो। नदी समुद्र के तरफ प्रवाहित होकर आखिर में जाकर समुद्र में मिलती है, समुद्र में मिल जाना नदी का धर्म है। ऐसे ही मनुष्य धीरे-धीरे विकास के पथ में अग्रसर होकर पूर्णता या ब्रह्मत्व प्राप्त करता है। पूर्णता को प्राप्त करना ही मानव का धर्म है। तुमलोग जानते हो कि समुद्र का जल वाष्प बनकर पहाड़ में और देश के सर्वत्र में गमन करता है। फिर वर्षा रूप में वही जल पृथ्वी में पतित होता है बाद को वही जल समुद्र में जाकर मिलता है। ठीक इसी रूप में सब जीवों की उत्पत्ति ब्रह्म से ही होती है। जीव और जगत की उत्पत्ति और लय के इस नियम को धर्म जानो। जब तक इस नियम को हम नहीं जानते तब तक हमारे मन में शान्ति और तृप्ति नहीं आती है। इस नियम को जानने के लिए इस पृथ्वी में जो धर्म की उत्पत्ति हुई है उसका नाम है “हिन्दू-धर्म”। इस नियम को जानने के लिए अनेक योगी, ऋषि, महात्मा हमारे हिन्दू समाज में जन्म लेकर त्याग, तपस्या और ब्रह्मचर्य को पालन करते हुए जीवन का निर्वाह कर रहे हैं। आज तक हिन्दूओं में इस निगुड तत्व के जानने के लिए योगी और तपस्वी की कमी नहीं है। हिन्दू धर्म को छोड़कर अन्य धर्म में इस निगुड तत्व को जानने के लिए किसी प्रकार की वैज्ञानिक पथ आविष्कृत नहीं हुई।

मनुष्यों के समाज धर्म, राष्ट्र धर्म, शिक्षा और साधना सभी पूर्णता के पथ को खोज रहे हैं। मनुष्य समाज का सभी नियम पूर्णता का पथ चाहते हैं। मनुष्यों का यही धर्म है। जबतक पूर्णता को प्राप्त नहीं करते हैं तबतक उसकी द्वारा हमलोगों का ठीक-ठीक शान्ति और तृप्ति नहीं होता है। अतः तुमलोग धर्म शिक्षा के भीतर पूर्णता के नियम को ढूँढने की चेष्टा करो।

आजकल अनेक अहिन्दू धर्मों के नाम भी सुने जाने हैं। वे सभी धर्म विश्वास मात्र हैं। उसमें किसी प्रकार की दार्शनिकता या युक्ति नहीं है। हमारे देश में भी आधुनिक काल में बिना प्रयोजन में अनेक उपधर्म या शाखा धर्म प्रवर्तित हुए हैं। मनुष्य उन सब धर्मों में शामिल एवं विश्वास भी करते हैं किन्तु दार्शनिकता और युक्तिवाद द्वारा उसका विचार करने से मनुष्य एक दिन भी वे सब धर्म के प्रतिपालन कर नहीं सकते। आधुनिक काल में अनेक प्रकार के उपधर्म पृथ्वी में प्रचलित होने के कारण आजकल हमारे धर्म हिन्दू धर्म के नाम पर प्रसिद्ध हो रहा है। तुमलोग शास्त्रों को पाठ करने के बाद देख पाओगे कि हिन्दू धर्म के नाम पर कोई धर्म दुनिया में नहीं है। धर्म शास्त्र में समाज धर्म, राष्ट्र धर्म, राज धर्म, प्रजा धर्म, सन्यास धर्म, गृहस्थ धर्म, पति धर्म, नारी धर्म

इत्यादि धर्म के अनेक नाम पाये जाते हैं। हमारे धर्म का अर्थ है समाज जीवन की चलाने के लिए और अध्यात्म जीवन को पुष्ट करने के लिए सभी प्रकार के उन्नत नीति को प्राप्त करने की चेष्टा।

हिन्दुस्तान में जितने प्रकार के धर्मवाद उत्थित होकर देश व विदेश में प्रचारित हुए हैं सभी हिन्दू धर्म है। नवीन, प्राचीन, वैदिक, तान्त्रिक, पौराणिक, प्राकृतिक, बौद्ध, सिख, जैन सर्व प्रकार शाखा धर्म को ही हिन्दू धर्म जानो। और तुमलोग हिन्दू धर्म के ये सभी शाखाओं को आलोचना करने से स्पष्ट देख पाओगे कि वेद निर्दिष्ट ॐ का उपासना सब शाखा में ही विद्यमान है।

हिन्दू धर्म का तीन विशेष भेद है वह कर्म, उपासना और ज्ञान के नाम से प्रसिद्ध है। वेद को आश्रय करके कर्म धर्म, उपासना धर्म और ज्ञान धर्म की भित्ति सुप्रतिष्ठित है। वेदिक भित्तिहीन, आधुनिक उपधर्मों के भीतर कर्म उपासना और ज्ञान का सामंजस्य नहीं है।

कर्म धर्म

समाज रक्षा के लिए हमारे लिए एक स्वाभाविक कर्तव्य है, और उसी का नाम है कर्म धर्म। हमलोग यदि कर्म धर्म को ठीक रूप से पालन न कर सकें तो हमारा समाजजीवन ध्वंस हो जायेगा। यदि समाज जीवन नष्ट हो जाय तो अध्यात्म जीवन और धर्म जीवन असम्भव हो जायेगा। जब से हिन्दूलोग पराधीन हो गये तब से हिन्दूओं का समाज जीवन मृतप्राय हो गया।

कर्म धर्म की विशृंखलता ही हमारे पतन और पराधीन होने का प्रधान कारण है। कर्म धर्म, उपासना धर्म, ज्ञान धर्म एक ही अध्यात्म या आत्म धर्म की तिन विशेष दिशाये हैं। इन तीन प्रकार के धर्म का लक्ष्य है, लौकिक जीवन का सुख और समृद्धि और मनोजगत की शान्ति। इन तीन धर्म का सम्बन्ध ऐसे ही जड़ित है कि एक को त्याग कर दुसरे को सुन्दर नहीं बना सकते।

हमारे समाज जीवन के मूल-भ्रान्ति के कारण हमलोग दुर्बल और पराधीन हो गये। हमारे समाज जीवन की समस्या अब शक्तिवादी दृष्टिकोण से ही समाधान करना पड़ेगा। हमारे कृष्टि हमारी सभ्यता और हमारी प्राचीनता के साथ सामंजस रखते हुए हमारे नवीन समाज को पुनः गढ़ लेना पड़ेगा। समाज जीवन को शक्तिशाली बनाना, इसको शक्तिशाली रखना, इसको सुखमय बनाना और सुखमय रखना भी हमारा असल समाज धर्म है। समाज जीवन को शक्तिशाली रखने के लिए ही हमारा पारस्परिक व्यवहार और कर्तव्य निर्दिष्ट कर दिया गया था। हमलोग यदि समाज जीवन के असल लक्ष्य को भूल

जाते हैं तो हमारे अन्यान्य कर्तव्य भी उद्देश्यहीन और लक्ष्यहीन हो जायेगा। समाज धर्म का असली भित्ति है प्रेम। समाज जीवन के पतन के भूल में हमारी घृणा और विद्वेष ही प्रधान कारण हो गया था। यह है कर्म धर्म के पतन का लक्षण, यह तुमलोग याद रखना।

हम देखते हैं कि विगत डेढ़ हजार वर्षों से हिन्दू समाज में विद्वेष-वाद का अनुशीलन बहुत जोर हुआ है। जिसके कारण इसका मेरुदण्ड बिल्कुल टूट गया। अब तो हमलोगों को चाहिए कि शक्तिशाली चिन्ता की भित्ति पर समवेत उपासना का भित्ति बनावें।

हिन्दू धर्म के धर्म विधान में विश्वासवाद और सभी धर्मों के मुताबिक नहीं है। हिन्दू धर्म सम्पूर्णरूप में युक्तिवाद, दार्शनिकता और विज्ञान की भित्ति पर अवस्थित है। यदि तुमलोग दार्शनिकता व युक्ति ठीक ठीक समझ सकते हो तो हिन्दू धर्म को भी समझ सकते हैं।

युक्तिवाद और दार्शनिकता को समुच्चशिखर में स्थान देने के लिए हमारे देश में अनेक दर्शनशास्त्र की उत्पत्ति हुई है। वेदान्त, मीमांसा, पातंजल, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, बौद्ध दर्शन, इत्यादि। तुमलोग जब एक दर्शन शास्त्र पढ़ोगे तो मालूम होगा कि यह एक अकाट्य दर्शन है, इसकी युक्ति को कोई काट नहीं सकता किन्तु यह भी एक आश्चर्य है कि दूसरा दर्शन शास्त्र के पढ़ने के बाद यह जान लगे कि जो अकाट्य रहा वह भी कट गया।

यह भी एक आश्चर्य की बात है कि सब कोई अपना-अपना प्रमाण वेद से लिया है। एक मात्र बौद्ध दर्शन वेद के प्रमाण को संग्रह नहीं किया है, किन्तु तुमलोग जान लो कि वेद में बौद्ध दर्शन के अनुकूल बहुत से मंत्र हैं। और बौद्ध दर्शनका भित्ति सांख्य दर्शन है और उसका लक्ष्य भी अद्वैतवाद है।

वेद में लौकिक और अलौकिक सर्व प्रकार की चिन्ता धारा का स्थान पाया जाता है। वेद किसी एक व्यक्ति कृत ज्ञान शास्त्र नहीं है। इसमें अनेक ऋषि के मन्त्रों का संग्रह है। ज्ञान का अनेक स्तर है। एक ऋषि जिस समय जिस स्तर में रहते हैं उस समय उन्होंने उसी स्तर के ज्ञान को अनुभव करते हैं। ज्ञान के स्तर भेद के कारण ही हमारे देश में बहुत से दर्शन शास्त्र हुए हैं।

इतने दर्शन शास्त्र रहते हुए भी विद्या और क्रिया के सम्बन्ध में और धर्म विचार में हिन्दू लोगों में कोई मतभेद नहीं है। तुमलोग भी योगानुशीलन में दार्शनिकता और युक्ति का प्रयोग कर विभ्रान्त न हो जाओ और उपदेशक के उपदेश का पालन करते हुए धर्मानुशीलन में तत्पर हो जाओ।

तुमलोग मनुस्मृति का नाम सुने हो। स्मृति शास्त्र माने समाज व्यवस्था मूलक ग्रन्थ। समाज व्यवस्था मूलक ग्रन्थ भी हमारे समाज में बहुत है। सब कोई वेद को श्रेष्ठ

प्रमाण माने हैं। आजकल बहुत मनुष्य हैं जो कि वर्णभेद प्रथा समर्थन नहीं करते हैं। हम वर्ण भेद समर्थन करते हैं। समाज की रक्षा लिए उसका प्रयोजन है किन्तु हमलोग अछूतवाद नहीं मानते, अछूतवाद हमारे धर्म के सम्पूर्ण रूप में विरुद्ध है। हमारे शास्त्र जाति भेद को मानने पर भी उपासना भेद को समर्थन नहीं करते। तुमलोग शिवरात्रि के व्रत को मानते हो। इस व्रत का प्रथम प्रवर्तक या पुजारी एक व्याध (अछूत) है। काशी के प्राचीन विशनाथ मन्दिर जिस स्थान में प्रतिष्ठित है उसी जगह पर व्याध ने शिवरात्रि में शिव पूजन किया था, उस मन्दिर स्थान, की सारी बातें शिवरात्रि व्रत कथा में स्थान पाया है। अतः उपासना में जाति भेद प्रथा बिल्कुल अशास्त्रीय है। हमारे देश में इस अशास्त्रीय प्रथा का संशोधन बहुत शीघ्र ही होगा। इसमें सन्देह नहीं।

हमारे देश में उपासना का भेद भाव स्थापना के विषय में अनेक भाव वादी, महात्मा भी काफी गलती किये हैं। पुजारी वादी ब्राह्मण भी अपने स्वार्थ को कायम करने के लिए इसके समर्थक थे। उपासना में भेद वाद लाने के कारण हमारे लिए जाति भेद प्रथा तिक्त रूप धारण किया है। शक्ति वाद का प्रचार बड़ने के साथ साथ यह तिक्तता मुक्त हो जायेगा।

वेद में कर्म भेद को केन्द्र करके जाति भेद प्रथा आया है किन्तु कहीं विद्वेष स्थान वेद में नहीं मिलता है बल्कि प्रेम ही वेद वाद का प्रधान भित्ति है।

यथा –

ॐ रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजेसु न स्कृधि।

रुचं विश्वेषु शुद्रेषु मयी, मयि धेहि रुचा रुचम्॥

हे परमात्मा! हम लोगों का अत्यन्त प्रीति ब्रह्म ज्ञानियों के प्रति स्थापना करो। हम लोगों का अत्यन्त प्रीति योद्धागण के प्रति स्थापना करो, हमारे अत्यन्त प्रीति से भी अधिक प्रीति व्यापारी और मजदूरों के प्रति स्थापना करो।

यजुर्वेद अध्याय १८ मन्त्र ४८॥

उपासना के लिए और विभिन्न जाति या विभिन्न सम्प्रदाय के लिए विभिन्न विधि वेद ने नहीं कहा है।

यथा –

ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।

ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चर्थाय स्वाय चारणाय।

प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भुयासमयं।

मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु॥

इस तरह (ईश्वर) यह सब वेद वाणी जो कि बहुत ही कल्याणमयी है जो कि समस्त मनुष्यों के लिए है जो कि सबके लिए हम कहे हैं। तुम लोग भी वैसा प्रचार

करो। ब्राह्मण और क्षत्रियों के लिए शूद्रों के लिए, वैश्यों के लिए अपनी स्त्री व नौकरादि के लिए और अति शूद्रों के लिए हमारा यह कामना वृद्धि हो कि मूर्खों को शिक्षा और उपदेश दिया जाय। हमारा वह ज्ञान जो मनुष्य दान करेंगे हम उनके प्रिय होंगे। दाता और गृहता को समृद्धि और आत्म कल्याण को प्राप्त होगा (प्रियोदेवानां = मूर्ख। यह पाणिनी का सूत्र में है।)

यजुर्वेद अ: २६ म: २॥

तुम लोग वेद को इस महान आदर्श का अनुसरण करते हुए वैदिक धर्मानुशीलन करते रहो और दूसरे को भी कराते रहो। तुम लोग देख रहे हो कि जो मनुष्य वेद के इन महान आदर्श को त्याग करके अपना मनमानी धर्म उपदेश दूसरों को शिक्षा देते रहते हैं वे लोग वेद का आदेश न मानकर अपने ही अन्याय करते हैं और दूसरे के लिए अन्याय करते हैं। वेद के मध्य में समाज धर्म का सबसे शक्तिशालि उपदेश विद्यमान है। यदि तुम लोग संहिता भाग (वेद) का पाठ करो तो देख पाओगे की वीरत्व निर्भिकता को बहुत उच्च स्थान वेद ने दिया है और आसुरिक आक्रमण को, संगठन को तोड़ देने के लिए वेद युक्ति-युक्त आदेश अनेक मन्त्रों द्वारा दिये हैं।

वेद में कहीं भी चार जाति में पारस्परिक व्यवहार की बातें आयी है वही देख पाओगे कि वेद समदृष्टि के ऊपर जोर दे रहा है कहीं असम दृष्टि की बात नहीं हैं।

यथा –

ॐ तां मे सहस्राक्षोदेवो दक्षिण हस्ते आ दधत।

तयाहं सर्व्व पश्यामि यश्च शुद्रः उतार्य्यः॥

अर्थ – वे सहस्र अक्षि पुरुष (अर्थात् अनन्त ज्ञानमय पुरुष) मुझे दक्षिण हस्त में स्थापना किये हैं (अर्थात् वे पुरुष मुझे अपना कर्म वाद को सम्पन्न करने कि लिए हमें कर्मी बनाये हैं। शक्ति वादी कर्मी बनाये हैं।) हम उन्हीं का ज्ञान मय दृष्टि में आर्य (पंडित) शुद्र (अशिक्षित) सबको दर्शन करते हैं।

अथर्वकाण्ड ४ सूक्त २०॥

तुम लोग यदि गीता पाठ करोगे तो वेद का कर्म, वेद का उपासना और वेद के ज्ञान के सम्बन्ध में तुम स्पष्ट धारणा लाभ कर सकोगे। गीता को एक छोटी वेद कहा जा सकता है। गीता के आधुनिक व्याख्याकार और टिप्पणीकारों के भीतर शक्तिवादी पुरुष बहुत कम हैं। जिस कारण गीता के वास्तव जीवन के समबन्ध में हमलोग अत्यन्त अज्ञ रह गये। गीता के टिप्पणीकारों के भीतर भाववादी और पुजारी वादीयों का प्रभाव बहुत अधिक हैं। वे हमलोगों को वेद के वास्तव जीवन से वंचित कर दिए हैं।

यदि तुमलोग दर्शन शास्त्रों को पढ़ोगे तो देख पाओगे कि सृष्टि के मूल में एक प्राकृतिक नियम है। इस नियम का नाम है त्रिगुण (सत्त्व, राज, तमः) इन तीन गुणों के

वैषम्य (विसमता) के कारण ही मनुष्यों की प्रकृति एक रूप नहीं होती है। इसी कारण कर्म का भी भेद आया है। हजार कोशिश करो मनुष्यों की प्राकृतिक कर्म और प्रकृति किसी हालत में एक नहीं हो सकता। सबका मन एक ही कर्म के लिए एक रूप में योग्य नहीं होते हैं। समाज जीवन और प्राकृतिक नियम में ऐसे ही वैषम्य रहने के कारण और इस वैषम्य में समाज की सृष्टि होने के कारण एक ही कर्म द्वारा समाज नियमित नहीं होता।

समाज के मध्य में कुछ मनुष्य हैं जो कि सात्त्विक प्रकृति के हैं (ब्राह्मण)। कुछ मनुष्य हैं जो कि सत्व राजस प्रकृति के हैं (क्षत्रिय)। कुछ मनुष्य हैं जो रजतामस प्रकृति के हैं (वैश्य)। कुछ मनुष्य हैं जो कि तामस प्रकृति के हैं (शुद्र)। फिर ऐसे बहुत मनुष्य हैं जो कि तम प्रधान राजस प्रकृति या आसुरिक प्रकृति के मनुष्य होते हैं।

जिसकी जैसी प्रकृति है और जिसमें जैसा कर्मप्रकृति रहता है वे मनुष्य समाज में वैसे ही कर्म को चुन लेते हैं। क्रमशः वंश परम्परा में यदि सब कोई अपना वृत्ति और कर्म का अनुशीलन करते रहते हैं तो उस वंश को सभी लोग एक विशेष वृत्ति या जाति के लोग कहेंगे। यह स्वाभाविक नियम है। कर्म भेद के ही कारण जाति भेद की उत्पत्ति हुई है किन्तु यदि तुम मनुष्यों के स्वभाव व कर्म को छोड़कर विशुद्धरूप में एक मनुष्य होकर विचार करो तो देख पाओगे कि सभी मनुष्य एक ही आत्मा या ब्रह्म स्वरूप हैं इसी कारण सन्यासियों में जाति भेद नहीं है।

जन्म से लेकर मृत्यु काल तक हमारे जीवन में अनेक प्रकार के कर्तव्य के भीतर से प्रवाहित होता है। यह सब कर्तव्य ही कर्मनाम से प्रसिद्ध है। हमारे शरीर और मन में तीन गुण के तारतम्य हैं इसी कारण हमारा स्वभाव व कर्म भेद स्वाभाविक है। इस स्वभाव के साथ जन्मगत वैशिष्ट्य खूब अधिक प्रभाव दान करने वाला है, इसको भी सब क्षेत्र में कहा नहीं जाता।

हमारे समाज में जन्मगत कारण में किसी को उच्च, किसी को हीन कहने का एक भ्रान्त शिक्षा का नियम है। इस भ्रान्त शिक्षा को छोड़ कर जन्मगत विधन में ऐसा कोई प्राकृतिक नियम नहीं है कि एक मनुष्य उच्च होगा या एक मनुष्य नीच हो जायेगा। हम लोगों का कहना है कि उच्च तथा वैज्ञानिक आचार और व्यावहार सब श्रेणी के मनुष्यों में प्रतिष्ठित करने की चेष्टा हम लोगों में रहना चाहिए। तुम लोग वैदिक धर्मानुष्ठान को केन्द्र करके समस्त समाज शाखा में उच्च तथा वैज्ञानिक आचार धर्म की स्थापना करने को सचेष्ट हो जाना।

ज्ञान प्रधान कर्म, अस्त्र प्रधान कर्म, कृषि और व्यापार कर्म और शारीरिक मेहनत कर्म, यह चार प्रकार का कर्म नियम स्वाभाविक है। इस नियम के साथ वंशगत सम्बन्ध बहुत कम है। एक युग में हमारे पूर्व पुरुष अस्त्र धारण करते थे। इस युग में हम ज्ञान

की चेष्टा करते हैं। एक युग में हमारे पूर्व पुरुषगण मजदूरों के काम को करते थे। इस युग में हम और हमारे पिता गणित विद्या में दक्ष हुए हैं। एक ऋषि के चार पुत्र हैं। उसमें एक ज्ञान प्रधान कर्म करते हैं। एक योद्धा है। एक कृषक, एक मजदूर का कार्य करते हैं। अब मजदूर का पुत्र यदि ज्ञान का अनुशीलन करे तब उनको मजदूर कहना ठीक न होगा। एक युग में हमारे पूर्व पुरुषगण ज्ञान की चर्चा करते थे इस युग में हम रसोई के कार्य करते हैं, तब हम जानी कहाँ रह गए।

अनेक स्थान में देखा जाता है कि शूद्र शब्द ठीक गाली के समकक्ष हो गया है। हम पूछते हैं कि मजदूरों का काम अपराध का कार्य कैसे है? इसी से प्राचीन युग में किसी का पूर्व पुरुष यदि मजदूर का कार्य करे और समाज की सेवा करे और उसमें उनका क्या अपराध हुआ कि युद्ध द्वारा समाज सेवक वंश से अपने निकृष्ट वंश हो जायेंगे? एक मनुष्य न तो चोरी किया न तो अनाचार अत्याचार किया न तो मिथ्या वादी हुए तब भी वह अपराधी है? क्या उनका वंश अपराधी वंश होंगे? तुम लोग जान लो कि यह सब पुजारी वादियों की कुकीर्ति है। इससे बच कर चलना चाहिए। इस समय उत्पादन करने के उपकरण को स्टेट के हाथ में देना चाहते हैं। हम लोग उसको दूरदर्शी नीति नहीं मानते। हमारे देश में वृत्ति ग्रहण वंश परम्परा में होता था यह बहुत ही अच्छी नीति है।

आसुरिक लक्षण सम्पन्न गण चोरी, डाका, बदमाशी, गुण्डापन, नारी निर्यातन, लूट, गृह दाह, नर हत्या आदि करके समाज का नुकसान करते हैं। इन लोगों के लिये राज शक्ति और समाज शक्ति का कठोर विधान रखना पड़ेगा। वेद से आरम्भ करके गीता आदि समस्त शास्त्र में इन लोगों को असुर नाम दिया गया है। इस श्रेणी के ऊपर कठोर नीति का समर्थक होने को कहा है, आसुरिक लक्षण और ठग लक्षण युक्त समाज को भ्रान्ति पथ अपने समाज में या परिजन में मिलने देना नहीं चाहिए क्योंकि इसमें सदा ही मन्द फल हुआ करता है।

तुम लोग पिता, माता, भाई, बहन, गुरु, शिक्षक और अन्यत्र आत्मियों के प्रति कर्तव्यशील रहना समाज और राष्ट्रीय कर्तव्य में भी अवहेला न करना। सबको सही परामर्श देना स्वास्थ्य रक्षा व उपार्जन में निष्ठा रखना। यह सब कर्म धर्म के अन्तर्गत की बातें हैं।

आचार और शिष्टाचार भी कर्म धर्म के अन्तर्गत के अंग हैं। स्वास्थ्य रक्षा के लिए कुछ आचार विधान हमारे समाज में प्रचलित हैं। उन सब नियमों को तुम लोग अवश्य प्रतिपालन करोगे। यथा – प्रति ऊषाकाल में शैया त्याग, मल मूत्र त्याग, दाँतून, कुल्ला, स्नान, कपड़ा साफ करना, स्वावलम्बी होना, व्यायाम करना, आहारान्ते मुँह धोना, मादक द्रव्य व्यवहार न करना, चाय आदि का अभ्यास न रखना, मल मूत्र, जूठा वासस्थान से दूर में परित्याग करना। इस पृथ्वी में हिन्दुओं का आहार प्रस्तुत प्रणाली

अत्यन्त पवित्र है। उसको पालन करना, आहार्य वस्तुओं के निकट छींक, खाँसी और किसी प्रकार अपवित्रता को अमल में न लाना चाहिए। आहार में और खाद्य वस्तुओं में उच्छिष्ट विधान को मान्य करना, ये सब स्वास्थ्य रक्षा के लिए अतीव प्रयोजनीय नियम हैं। पानी पीने के बाद गिलास और भोजन के अन्त में थाला आदि को शुद्ध मिट्टी द्वारा माँज व धो के रखना चाहिए। एक मनुष्य का उच्छिष्ट बर्तन खाद्य और पानी कभी व्यवहार नहीं करना चाहिए। इसके द्वारा कठिन संक्रामक रोग एक शरीर से दुसरे शरीर में संक्रमित होता है। मुँह के मध्य मैला हाथ न देना चाहिए और मुँह में हाथ देने के बाद हाथ को धोना चाहिए।

शिष्टाचार के मध्य में गुरुजनों का श्रद्धा करना किसी से परिचय के समय ॐ नमः ॐ भद्र ॐ नमस्ते करना इत्यादि शिष्टाचार दिखा कर आलाप करना और उक्त नियम में विदा लेने के अभ्यास को मानते रखना, विशेष गुरुजन को विशेष श्रद्धा दिखाने के लिए नमोनमः कहना चाहिए। महात्मा लोगों को ॐ नारायण कहकर श्रद्धा दिखाना चाहिए। याद रखो शिष्टाचार के प्रदर्शन में कुछ भी खर्चा नहीं है किन्तु इसके द्वारा हमारे मनुष्यत्व लाभ का श्रेष्ठ स्वरूप हम लोग पाते हैं।

समाज जीवन का कर्तव्य को सुन्दर रूप में सम्पन्न करने के लिए हमारे शास्त्रों में जीवन काल को एक सौ वर्ष मान लिया और उनको चार भाग में विभक्त कर लिया। यथा – ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, व सन्यास। प्रत्येक भाग में पच्चीस वर्ष समझना चाहिए। शिक्षा जीवन ही ब्रह्मचर्य जीवन है। इस समय संयम को अवलम्बन करके विद्याध्ययन करना चाहिए। गृहस्थ जीवन में सबसे प्रयोजनीय कर्म उपार्जन और समाज पालन। वानप्रस्थ काल में अपने आत्म ज्ञान को प्राप्त करना और दूसरे को अपने अभिज्ञता का शिक्षा देना चाहिए, सन्यास जीवन का अर्थ है ज्ञानमय जीवन। यह है भोग, मोह व अहं शून्य (अनहं) कर्म रूप ज्ञान मय जीवन। अनेक मनुष्य हैं जो कि ब्रह्मचर्य या गृहस्थ जीवन से ही सन्यास को ग्रहण करते हैं। तुम लोग पूरा जीवन ही सतेज रहने की चेष्टा करना। तुम लोग देख पाओगे कि जीवन कि अभिज्ञता द्वारा तुम लोगों कि चिन्ताधारा ठीक वही चार धारा में गठित हो रहा है। ऋषिगण हमारे शिक्षा जीवन को गर्भ से ही निर्दिष्ट कर गये हैं और अनेक प्रकार के आश्चर्य जनक वैदिक संस्कार का प्रवर्तन भी किया है यथा – गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्त उन्नयन, जात कर्म, निष्क्रामण, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, कर्ण वेध, विद्यारम्भ, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह। प्रथम तीन संस्कार अत्यन्त वाल्यकाल में अनुष्ठित होता है। उसके बाद पाँच वर्ष के भीतर परवर्ती तीन संस्कार होता है। पाँच वर्ष के बाद १६ वर्ष के भीतर उपनयन और वेदारम्भ संस्कार का समय होता है। इसके बाद शिक्षा काल शेष होने के बाद जीवन किस रूप में अतिवाहित करना होगा उसके सम्बन्ध में उपदेश ग्रहण करके माता के पास आने

का नाम ही समावर्तन संस्कार है। इसके बाद गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने का नाम विवाह संस्कार है।

सन्यास जीवनोचित ज्ञान लाभ करने के लिए अनेक संस्कार हैं। उन संस्कारों नाम दीक्षा है। यथा – (१) शाक्त दीक्षा (२) पूर्ण दीक्षा (३) क्रमदीक्षा (४) साम्राज्य दीक्षा (५) महा साम्राज्य दीक्षा (६) योग दीक्षा (७) महा पूर्ण दीक्षा (८) सन्यास।

सन्यास – हिन्दू लोग अपने जीवन और समाज जीवन को गठित करने के लिए इस प्रकार के कठोर जीवन व कठोर नियम को पालन करते थे। उसको यदि तुमलोग जानना चाहते हो तो इन सब संस्कारों के विज्ञान का आलोचन करना पड़ेगा। (सिद्ध साधक ग्रन्थ को देखो)।

इन सब संस्कारों का धारा इस समय समाज में बहुत ही कम अनुष्ठित हुआ करता है। संस्कारों के कुछ अंश पुरोहितों के उपार्जन के लिए अभी तक टूटा-फूटा रूप में समाज में प्रचलित है। दीक्षा के धारा अब लुप्त प्रायः हो गया है। दुर्बलवादी महात्मा लोग सस्ते में भाव वाद धर्म को फैलाकर समाज के चिन्तन को बहुत ही दुर्बल बना दिए हैं। देश की स्वाधीनता, स्वराज्य, शक्ति सभी डेड़ हजार वर्ष के विस्मृत स्वप्न में परिणत हो गया है। (समाज किताब देखो)।

वर्तमान कर्म धर्म की सबसे प्रयोजनीय कथा है देश को शक्तिशाली धारा में परिचालित राष्ट्र। जो लोग चाहते हैं कि आसुरिक व बर्बर लोगों को प्रश्रय देकर सस्ते में स्वराज्य व शासन चल सकता है। उनपर विश्वास नहीं किया जा सकता।

महाराज पृथ्वीराज आसुरिक लक्षण युक्त मुहम्मद गोरी को सत्रह बार परास्त किये और अपने दुर्बलवादिता के कारण उसे छोड़ दिया इसके परिणाम में हमलोग राष्ट्र जीवन में असुरों के हाथ में उतपीड़ित होने लगे। इसका सुधार एकमात्र शक्तिवाद ही कर सकता है। देश के लिए अब तो बहुत ही शक्तिशाली व असुर विरोधी नेता की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में वेद का कहना है –

ॐ प्रह्यभीहि धृष्णु है न ते बज्रो निशंयते।

इन्द्र नृष्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जयः।

अपर्चन्नूतु स्वराज्यम्।

हे इन्द्र (नेता) स्वराज्य के प्राप्त करने के लिए आप साधना करते-करते अग्रवर्ति हो जाओ, सम्मुख में आओ (डरना मत) तुम बाधा का अतिक्रम करोगे तुम्हारा बज्र कभी पराजित नहीं होता अर्थात् दिव्य अस्त्र व्यवहार में तुम विचलित मत हो। हे इन्द्र (नेता) तुम निश्चय ही स्वराज्य रूप ऐस्वर्य को प्राप्त करोगे। तुम अपने शक्ति द्वारा वृत्र रूप बाधा को धंस करो सर्व कार्य में जय लाभ करो।

सामवेद, ५म प्रपाठक ३ दशम्। मन्त्र ४१३।

उपासना

नित्य कर्तव्य उपासना और नैमित्तिक कर्तव्य उपासना का इस प्रकार दो भेद है। दिन रात के मध्य में पाँच संधि काल है। यह पाँच प्रकार की उपासना के नाम नित्य कर्तव्य उपासना है। इस पाँचों में यदि तुमलोग त्रिकाल (प्रातः मध्याह्न, सायं) उपासना का अभ्यास करोगे तो तुमलोगों का शरीर और मन का विशेष लाभ दायक कार्य होगा। जिनको त्रिसंध्या के उपासना में असुविधा होवे, तो एक या दो सन्ध्योपासना कर सकते हैं। (प्रातः सायं)। “सृष्टि, स्थिति, लय, तुरीया और ब्रह्म” ब्रह्म ज्ञान का ऐसे ही पाँच स्तर हैं अर्थात् यह पाँच प्रकार के ज्ञान ही ब्रह्म ज्ञान हैं। प्रातः, मध्याह्न, सायं, मध्यरात्रि एवं ब्रह्म मुहूर्त। ये पाँच प्रकार के समय ब्रह्म ज्ञान के पाँच प्रकार भाव प्रकृति में इन पाँच प्रकार के ज्ञान विकाश – साधकों के ब्रह्म ज्ञान प्राप्ति में सहायक होता है। इसी कारण उपासना के लिए ये पाँच सन्ध्याकाल निर्दिष्ट हुए हैं।

उपासना किसे कहते हैं?

जो कुछ सुन्दर है, ज्ञानमय, तृप्तिमय, त्यागमय, और पूर्णरूप है वह आत्मा ही का वहिर्लक्षण है। इसी कारण वह सब वस्तु और तत्व के ओर हमारे मन का एक स्वाभाविक और पवित्र आकर्षण है। इस आकर्षण का नाम ही उपासना है। तुमलोग भक्ति के नाम से जो कुछ समझते हो वही उपासना के नाम से प्रसिद्ध है। उप = समीप। आसन = स्थित होना या बैठना। उन्नत नत्वों के निकटवर्ती होना या ईश्वर, आत्मा या ब्रह्म तत्व में श्रद्धामय अनुष्ठान ही उपासना है। उपासना बिना किए हमलोगों का मन अन्तर्मुखी नहीं होता है। अतः मन की शान्ति और ज्ञान को प्राप्त करने के लिए उपासना बहुत ही आवश्यक कर्तव्य है। जो लोग उपासना नहीं करते वे लोग अच्छा कर्मी भी नहीं हो सकते। अतः तुमलोग एक दिन के लिए भी उपासना में अवहेलन न करो। समस्त जीवन में उपासना ही सबसे पवित्र अनुष्ठान है। हिन्दुओं की उपासना विधि इस पृथ्वी में सबसे सुन्दर और दार्शनिकता में परिपूर्ण है। मनुष्यों के मनोविकास और मनुष्यत्व को प्राप्त करने के लिए हिन्दुओं की उपासना एक आश्चर्य प्रकार की दैव अनुष्ठान है।

नैमित्तिक उपासना साल के भीतर विशेष किसी दिन में या महीने में या विशेष किसी तिथि में अनुष्ठित होता है। नैमित्तिक उपासना नित्य करने का प्रयोजन नहीं होता है। नित्य-नैमित्तिक भेद में सब उपासना के कुल सात भेद होते हैं।

१ - निर्गुण ब्रह्म उपासना या महाशक्ति की उपासना। इसी को सन्ध्योपासना कहते हैं।

२ - सगुण ब्रह्म उपासना या पंचदेवता उपासना। निम्न शिव, गणेश, सूर्य, विष्णु, उन्नत शिव और शक्ति यही है, पंचदेव उपासना। पंचदेव उपासना की अर्थ है मनुष्य समाज का मनोविकाश के पांच प्रकार के भेद में हमारा समाज प्रतिष्ठित है, निम्नशिव माने साधारण जनता। ये लोग सरल जीवन, सरल विश्वास में प्रतिष्ठित साधारण मनुष्य है। शरीर के मेहनत से ये लोग जीवन यापन करना पसन्द करते हैं, मनुष्यों में इस स्तर के मनुष्यों की संख्या सब स्तर के मनुष्यों से अधिक से अधिक है। इन लोगों की बुद्धि कम विकसित होने के कारण डेमोक्रेसी नामक शासन व्यवस्था आज तक समाज का विशेष कल्याणदायक अवस्था में नहीं आया।

गणेश स्तर के मनुष्य स्थापत्य विभाग (इंजिनियारिंग), विचार विभाग, विज्ञान विभाग में अधिक पाये जाते हैं। आजकल कम्युनिजम का नाम सभी लोग जानते हैं। मानव मन का विकास साढ़े चार कला से सोलह कला तक माना गया। निम्नशिव ४½ कला वाले हैं; पाँच कला के भी राष्ट्र व्यवस्था समाज में आयी है। इसको आजकाल कम्युनिजम कहते हैं। इसमें भी राष्ट्र व्यवस्था मानव कल्याण के अनुकूल न हुआ, क्योंकि पाँच कला के विकास द्वारा सोलह कला के विकास सम्पन्न समाज चल नहीं सकता। पाँच कला का विकास अधिकतर नास्तिकता का विकास है। इये लोग विचार और युक्ति को अधिक मानते हैं। किन्तु मनुष्य के विकास में स्नेह, प्रेम, सन्तान पालन की प्रवृत्ति प्रबल रूप में विद्यमान है। सिर्फ विचार द्वारा इसका ठीक शासन चल नहीं सकता।

छः कला के विकास को सूर्य विकास कहा जाता है। यह प्रेममय और विश्वासवादी विकास है। शिक्षा, कला, चिकित्सा, जनसेवा इस कला से आया है। इस कला का विकास अधिक स्नेहशील होने के कारण इसके द्वारा आसुरिक समाज और अपुष्टवादी समाज को दमन नहीं किया जा सकता है। मानव समाज में इस स्तर से भी राष्ट्र व्यवस्था आयी है। महाराज युधिष्ठिर, पृथ्वीराज और बौद्धों के समाज व्यवस्था में इस स्तर का मानव बहुत है और इसके द्वारा भारत का अकल्याण आसुरिक समाज द्वारा बहुत हुआ है।

सप्तम कला - सप्तम कला को विष्णु कला कहते हैं। हम विष्णु कला को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं। (१) शक्तिवादी विष्णु (२) आसुरिक विष्णु (३) अपुष्ट विष्णु।

सप्तम कला में प्रशासन आया है। इस सप्तम कला के साथ अष्टम कला माने ऋषि कला की चिन्ता धारा सम्मिलित होके जो शासन व्यवस्था चलती है वही शक्तिवादी शासन है। हमारे देश में इसी को राम शासन कहते हैं। आसुरिक विकाश में रावण,

दुर्योधन, कंस और सब मुसलमान शासक इस तानाशाही शासन को चलाते रहे। अपुष्ट कला आसुरिक कला से भी हीन कला है। यह तो गुण्डा, बदमाश, चोर और मिथ्यावादियों का राज है। अंग्रेजों को हमारे देश से चले जाने के पहले से ही इस प्रकार का शासन चल रहा था और अभी तक चल रहा है। इसको विस्तृत रूप से कोई जानना चाहे तो शक्तिवाद ग्रन्थावली पढ़े।

३ – **अवतार उपासना।** अष्टम कला में ऋषि स्तर का विकास है। नवम, दशम, एकादश, द्वादश, त्रयोदश, चतुर्दश कला को अवतार कला कहते हैं। शक्तिवाद ग्रन्थावली में इसकी पूरी आलोचना है।

४ – **महापुरुष उपासना।** महापुरुष उपासना के विषय में हम आगे जाकर कहेंगे।

५ – **पितृ उपासना।** हमारे देश में पिता माता के मृत्यु के बाद अनेक प्रकार की पूजा पाठ ध्यान आदि होता है। इस विषय पर भी आलोचना आगे होगी।

६ – **देवता उपासना।** मनुष्य ही देवता बनते, अरु बनते और निम्न स्तर का अपुष्ट पुरुष बनते हैं। गीता में २६ प्रकार के दैविक सम्पदा है। जिन लोगों में दैविक सम्पदा का विकास है मृत्यु के बाद वही लोग देवता स्तर को प्राप्त करते हैं।

७ – **प्रेत उपासना।** प्रेत उपासना हमारे शास्त्र में बहुत विस्तृत आलोचना किया गया है। अज्ञानी मनुष्य, मूर्ख स्तर के मनुष्य, अयौक्तित विश्वास वादी, और नास्तिक वादी, प्रायः प्रेत लोक में प्रवेश करते हैं। हमारे पूजा विधि में इन लोगों के लिए भी पूजा विधि है। आत्मा का अंश होने के कारण हम लोग इन लोगों को भी सम्मान करते हैं।

निर्गुण ब्रह्म उपासना ही हमारी सर्व प्रधान उपासना है। अन्य उपासना इस ब्रह्मोपासना के अङ्ग प्रत्यङ्ग मात्र हैं। सोझे ब्रह्म ज्ञान को प्राप्त करने के लिए योग्य मनुष्य बहुत कम हैं। तुम लोगों को चाहिए कि नित्य संध्योपासना करो। संध्योपासना नहीं करते हो तो तुम अपना शरीर और मन की पुष्टि में काफी नुकसान सहन करोगे। प्रतिदिन जैसे शरीर के रक्षा के लिए भोजन का प्रयोजन होता है वैसे ही मानसिक पुष्टि के लिए वैज्ञानिक उपासना करना चाहिए।

वेद में प्रातः मध्याह्न सायं कालीन उपासना के ऊपर अधिक जोर दिया गया है। योगीगण और उन्नत स्तर के साधकगण मध्य रात्रि और शेष रात्रि काल की उपासना भी करते हैं। वेद में शेष रात्रि संधि और सूर्योदय के समय की मध्यवर्ती समय में ब्रह्ममुहूर्त संध्या के लिए उपदेश है। संध्या को यदि तुम सूर्योदय काल में करते हो तो उसका नाम होता है ब्रह्माणी (सृष्टि कारिणी संध्या) की उपासना। तुम लोगों को चाहिए कि सूर्योदय के पूर्व काल में प्रातः संध्या करो। यह संध्या अतीव सुखद उपासना है। दो चार दिन अनुष्ठान होने के बाद ही तुम लोग जान सकोगे की इसका फल कैसा लाभदायक है। ब्रह्माणि सन्ध्या (प्रातः) वैष्णवी सन्ध्या (मध्याह्न) सायं सन्ध्या (शिवानी), तूर्या सन्ध्या

(मध्यरात्रि) इस सन्ध्या शयन का पूर्व के काल में करना चाहिए। यही सन्ध्या ही काली उपासना के नाम से प्रसिद्ध है। ब्राह्म मुहूर्त सन्ध्या ब्रह्मा का ध्यान करके करना चाहिए। हमारे शरीर के भीतर आत्मा ही प्रधान तत्व है। नित्य त्रिसन्ध्या अनुष्ठान करने से बायु-पित्त और कफ साम्य रहते हैं। इसी कारण शरीर और मन भी साम्य रहता है, और स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। आयु वृद्धि होती है। तुमलोग देख रहे हो आयु और स्वास्थ्य रक्षा के लिए सन्ध्योपासना करना आवश्यक है।

तुमलोग नित्य स्वास्थ्य रक्षा के लिए सन्ध्योपासना करते रहना। संक्षेप, अति संक्षेप और विस्तृत रूप में सन्ध्योपासना हो सकता है। प्रातः काल में पूर्व मुख होकर, और समय उत्तराभिमुख होकर सन्ध्या करना अधिक फलदायक है। यदि बैठकर सन्ध्या करने का सुविधा न हो तो खड़े होकर उपासना कर सकते हो। सन्ध्या अनुष्ठान के पहले हाथ पाँव मुख प्रक्षालन कर लेने से सन्ध्यानुष्ठान अधिक शक्तिशाली होता है। मलीन वस्त्र पहनकर विशेष अस्वस्थ अवस्था में समवेत उपासना में शामिल होने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए।

संक्षेप में सन्ध्योपासना का क्रम

(१) मूलाधार में कुण्डलिनी नामक महाशक्ति का ध्यान करो। मूलाधार में विद्युत्कण या विद्युत् लता के सदृश ध्यान करने से ही चलेगा।

(२) सहस्रार के मध्य स्थल में परब्रह्म (शुद्ध स्फटिक वर्ण विन्दु) ध्यान करो। सहस्रार के केन्द्र स्थल को परम ब्रह्म कहते हैं। यही ब्रह्म स्थान है। मस्तिष्क में शेष प्रान्त में यह केन्द्र विद्यमान है, मस्तिष्क नाड़ी केन्द्र परिचय चित्र में ४ चिह्नांकित केन्द्र।

प्राणायाम। मूलाधार में कुण्डलिनी नामक महाशक्ति का ध्यान करो। महाव्याहृति मन्त्र को स्मरण करते हुए प्राणायाम करना पड़ता है। प्राणायाम में तीन क्रियाये हैं। (१) पूरक (२) रेचक (३) कुम्भक ये तीन क्रियाये हैं। दक्षिण नासापुटको दक्षिण हाथ के अंगुष्ठ द्वारा दबा के रखो और वाम नासापुट द्वारा धीरे-धीरे वायु को खींचो। श्वास को खींचने के समय नाभिस्थान में अथवा मणिपुर के केन्द्र में मन को एकाग्र रखने के लिए रक्त वर्ण ब्रह्मा का ध्यान करना पड़ेगा। एक रक्त वर्ण छोटासा शिवलिंग या एक रक्त वर्ण दीप कलिका मणिपुर में (ब्रह्मनाड़ी परिचय चित्र में ३ नम्बर केन्द्र में) ध्यान करते-करते पूरक करना पड़ेगा। पूरक हो जाने के बाद अनाहत स्थान में (ब्रह्मनाड़ी परिचय चित्र ४ नम्बर केन्द्र में) मन को एकाग्र रखना पड़ेगा। इसके लिए अनाहत केन्द्र में (विष्णु ध्यान

नील वर्ण दीप कलिका) ध्यान करना पड़ेगा। ऐसा ही ध्यान करके वायु को रुद्ध रखना पड़ेगा। इसी का नाम है कुम्भक। वामनासापुट अनामिका द्वारा और दक्षिण नासापुट अंगुष्ठ द्वारा बन्द कर देना पड़ेगा। अब वामनासा बन्द ही रहेगा और दक्षिणनाशा द्वारा वायु त्याग धीरे धीरे करना पड़ेगा। रेचन काल में धीरे मन में महाव्याहृति पाठ करना पड़ेगा। इस प्रकार से वायु रेचन होने के बाद पुनः पूरक करना पड़ेगा। पूरक काल में दाहिने नासा द्वारा वायु खींचना पड़ेगा और यथाविधि कुम्भक करने के बाद वाम नाशा द्वारा रेचन करना पड़ेगा। इसी तरह द्वितीय बार का प्राणायाम हो जाने के बाद तृतीय बार का प्राणायाम करना पड़ेगा। इस प्राणायाम में पूरक क्रिया पूर्व लिखित वाम नासा के माफिक होगा। इस प्रकार तीन बार के प्राणायाम को एक प्राणायाम कहते हैं।

प्राणायाम को और शक्तिशाली, और उन्नत करने के लिए इसमें मूल बद्ध, उड्डियन बद्ध एवं जलान्धर बद्ध क्रिया को योग करना पड़ेगा। यह सब क्रिया अभिज्ञ योगी के निर्देश के बिना नहीं किया जा सकता। बल्कि पूरक कुम्भक एवं रेचक संयुक्त प्राणायाम किसी भी व्यक्ति के निकट शिक्षा प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार के प्राणायाम को वैदिक प्राणायाम कहते हैं।

इसमें पूरक कुम्भक रेचक क्रिया का समय एक समान रहता है। योग के अधिकांश प्राणायाम ही पूरक १ कुम्भक ४ रेचक २ के विधान में हुआ करता है। प्राणायाम द्वारा मन अन्तरमुखी होता है, आयु की वृद्धि होती है और मन व्यापक होने का सुयोग प्राप्त करता है। तुमलोग जितने दिन प्राणायाम शिक्षा प्राप्त नहीं करोगे तब तक प्राणायाम के बदले ३, ४, ५ सूत्र अनुसरण करोगे।

(३) पुनः मूलाधार में महाशक्ति को ध्यान करने के बाद मणिपुर (ब्रह्मनाडी चित्र ३ नम्बर) में ब्रह्मा को ध्यान करो, एक रक्तदीप कलिका या शिवलिंग ध्यान करके महाव्याहृति को पाठ करना पड़ेगा।

यथा –

ॐ भूः, ॐ भुवः, ॐ स्वः, ॐ महः, ॐ जनः, ॐ तपः, ॐ सत्यम्, ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्व धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्, ॐ आपो, ज्योतिः, रसः, अमृतं ब्रह्म, ॐ भूः भुवः स्वः ॐ।

(वे आत्मा भूः लोक के स्वरूप हैं, वे भुवः, ॐ स्वः महः जनः तपः सत्यलोक के स्वरूप हैं, वे सविता देवता का पूजनीय तेज स्वरूप हैं, उनको हम ध्यान करते हैं वे हमारे बुद्धि में अपनी शक्ति का प्रेरण करे। आप जीवन स्वरूप हैं आप ज्योति स्वरूप हैं (तेज या वीर्य स्वरूप हैं)। आप रसः स्वरूप अर्थात् आनन्द स्वरूप हैं। आप अमृत (अमर आत्मा) हैं। आप ब्रह्म स्वरूप हैं; आप इच्छा, आप क्रिया और ज्ञान स्वरूप हैं। आप ॐ स्वरूप हैं।)

(४) पूर्वोक्त रूप में महाव्याहृति पाठ करने के पश्चात अनाहत में विष्णु का (नील वर्ण दीप कलिका या शिवलिंग) ध्यान करते हुए महाव्याहृति (ॐ भूः इत्यादि) पाठ करना पड़ेगा।

(५) इस प्रकार अनाहत ध्यान करके महाव्याहृति पाठ करने के बाद आज्ञा चक्र के मध्य में स्थित (ब्रह्मनाड़ी चित्र ६ नं केन्द्र) श्वेत वर्ण शीतल शिवलिंग या दीप कलिका ध्यान करते हुए महाव्याहृति (ॐ भूः इत्यादि) पाठ करना पड़ेगा।

(६) तुम पूर्वोक्त नियम में प्राणायाम करोगे अथवा ३, ४, ५ सूत्र अनुसरण करके महाव्याहृति पाठ करते हुए मूलाधार से सहस्रार पर्यन्त ब्रह्मनाड़ी का ध्यान करते हुए गायत्री एक बार उच्चारण करो एवं ब्रह्म स्तोत्र का पाठ करो।

६ - (क) गायत्री। ॐ भूः भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ। (अर्थः - आप ब्रह्म, महाशक्ति एवं परमात्मा ॐ स्वरूप, आप भूः भुवः एवं स्वः स्वरूप है आप सवितृ देवता के पूजनीय तेज है, आप को ध्यान करते हैं। आप हमारे बुद्धि में अपनी शक्ति को प्रेरण करे।)

(ख) ब्रह्म स्तोत्रम् -

ॐ नमस्ते सते सर्वलौकाश्रयाय, नमस्ते चिते विश्वरूपात्मकाय।
नमो अद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिणे निर्गुणाय॥ १
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यं, त्वमेकं जगत् कारणं विश्वरूपम्।
त्वमेकं जगत् कर्तृ पातृ प्रहर्तृ, त्वमेकं परं निष्कलं निर्विकल्पम्॥ २
भयानां भयं भीषणं भीषणानां, गतिः प्राणीनां पावनं पावनानां।
महाचैः पदानां नियन्तृ त्वमेकं, परेशां परं रक्षकं रक्षकानाम्॥ ३
परेशो प्रभो सर्वरूपोऽविनाश्योऽनिर्देश्य सर्वेन्द्रियागम्य सत्य।
अचिन्त्याक्षर व्यापकाव्यक्त तत्त्व जगत्भासकाधीश पायादपायात्॥ ४
तदेकं स्मरामः तदेकं भजामः, तदेकं जगत् साक्षीरूपं नमामः।
सदेकं निधानम् निरालम्बमीशं, भवाम्भोधिपोतं शरण्यं ब्रजामः॥ ५
पञ्चरत्नमिदं स्तोत्रं ब्रह्मणः परमात्मनः।
यः पठेत् प्रयतो भूत्वा ब्रह्म सायुज्यमाप्नुयात्॥

ब्रह्म स्तोत्र का अर्थ

ॐ आप समस्त विश्व के आश्रय स्वरूप 'सत्' ब्रह्म हैं। आप विश्वरूपात्मक चित ब्रह्म है, आप को प्रणाम। अद्वैत रूपात्मक व मुक्ति को दान करने वाले आप को प्रणाम। निर्गुण एवं व्यापक ब्रह्म को प्रणाम॥ १ ॥ आप ही एकमात्र स्मरण योग्य (जिसका आश्रय लिया जा सकता है।) आप ही एकमात्र पूजनीय, आप ही जगत् के

“कारण” एवं विश्वरूप है। आप ही एकमात्र परम (श्रेष्ठ) निष्कल (जिस तत्व का क्षय अथवा अंश नहीं होता।) एवं निर्विकल्प हैं (विकल्प रहित)। २ ॥ आप भयों के भी भय हैं। आप भीषण से भी भीषण हैं। आप प्राणियों के गति स्वरूप हैं। आप सभी पवित्र वस्तु के पवित्र करने वाले हैं। आप समस्त पद के ऊपर हैं। आप एकमात्र सृष्टि, स्थिति एवं लय के नियमता हैं, आप श्रेष्ठ हैं। आप रक्षकों में श्रेष्ठ रक्षक हैं। ३ ॥ हे प्रभो आप सर्व श्रेष्ठ ईश्वर हैं। आप सर्व स्वरूप होने पर भी आपको समझना सहज नहीं है। आप सब इन्द्रियों के अगोचर हैं। आप सत्य स्वरूप हैं। आप अचिन्त्य हैं। आप अक्षर, व्यापक और अव्यक्त तत्व हैं। आप जगत का उदभाषक होते हैं। आप उसके भी ईश्वर हैं। आप क्षय उदय के रहित परमात्मा हैं। ४ ॥ एकमात्र आप ही को स्मरण करते हैं। आप ही को जप करते हैं। आप जगत के साक्षी स्वरूप हैं। एकमात्र आप ही को प्रणाम करते हैं। आप सत्य स्वरूप हैं। आप निरालम्ब (जो किसी के आश्रय में नहीं रहते हैं)। आप ईश्वर हैं। आप संसार सागर के जहाज हैं। मैं आपका शरण लेता हूँ। ५॥ पाँच रत्न के स्वरूप यह परमात्मा के स्तोत्र हैं। इसको जो एकाग्र मन पाठ करते हैं उनको ब्रह्म ज्ञान प्राप्त होता है।

बहुत संक्षेप में संध्योपासना

१ से लेकर ६ (ख) तक ही संक्षेप संध्योपासना यदि तुम लोग चाहते हो कि इससे भी संक्षेप में संध्योपासना हो तो ब्रह्मनाड़ी का ध्यान करते हुए गायत्री ब्रह्मोपासना स्तोत्र का पाठ करो। विस्तृत रूप में संध्योपासना के लिए हमारे यहाँ एक छोटी पुस्तिका है।

तुम लोग संध्योपासना का नित्य ही अनुष्ठान करना। विस्तारित संक्षेप या अति संक्षेप जैसी सुविधा हो वैसी करो। संध्योपासना के द्वारा मेधा, स्मृति, प्रज्ञा, आयु, विचार शक्ति और युक्तिवाद, प्रवल होता है। यही है निर्गुण ब्रह्म उपासना, प्रत्येक मनुष्यों के लिए यह ही सर्वश्रेष्ठ उपासना है। इस पृथ्वी पर अनेक धर्म और उनके उपासना हैं वे सभी उपासनाएँ गायत्री उपासना के तुलना में बहुत ही नीचे श्रेणी में प्रतिष्ठित हैं। तुम लोग क्रमशः उसको समझ सकोगे।

महाव्याहृति के विषय में

महाव्याहृति के विषय में तुम लोगों की धारणा स्पष्ट किया जा रहा है। गीता में लिखा है -

ॐ इत्ये काक्षरम् ब्रह्मव्याहरण माम् अणुस्मरम्।

यः प्रयाति त्याजन् देहम् स याति परमांगतिम्॥ गीता ८। १३॥

अर्थ - ओमरूप एकाक्षर ब्रह्म व्याहृति सहित स्मरण करते हुए जिन्होंने शरीर को त्याग करते हैं वे ही श्रेष्ठ गति को प्राप्त करते हैं। इस विषय में गीता और भी कहे हैं -
प्रयाण काले मनसा अचलेन भक्तया युक्तो योग वलेन चैव।

भूर्मध्ये प्राण भावष्य सम्मक स तं परं पुरुषमु उपैति दिव्यम्॥ गीता ८। १०॥

अर्थ - मृत्यु काल में निश्चल मन में और भक्ति व योगवल में प्राण को सम्यक रूप में रोकके, भू मध्य स्थान में (शिवपिण्ड) स्थापना करते हुए जो शरीर को त्याग करते हैं वे परम दिव्य पुरुष को लाभ करते हैं। भू मध्यस्थान व्याहृति जगत का एक केन्द्र है। यह व्याहृति तत्त्वतः कौन चीज है इसे समझना चाहिए; क्योंकि सब उपासना के वही लक्ष्य हैं। मृत्यु काल में यदि तुम व्याहृति को स्मरण करना चाहते हो तो समस्त जीवन व्याहृति के स्मरण का अभ्यास करना पड़ेगा। इसके विषय में वेद का आदेश देखो-

ॐ शतं चैका च हृदयस्य नाड्य-

स्तासां मूर्धानमभिनिःसृतैका।

तयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति

विष्वङ्ङन्या उत्क्रमणे भवन्ति॥ कठ १२५॥

अर्थ - हृदय के मध्य में (मस्तिष्क से लेकर मेरुदण्ड का निम्नभाग पर्यन्त स्थान का नाम है हृदय) उसमें एक सौ एक नाड़ी है। (क्रमविकास अष्टम अध्याय देखो)। इन सब नाड़ीयों में एक नाड़ी ब्रह्म रंध्र में आकर निर्गत हुआ है। मनुष्य उस नाड़ी द्वारा उर्ध्व गमन करके अमृत तत्व को प्राप्त करते हैं। ब्रह्म नाड़ी को छोड़कर दूसरा नाड़ी द्वारा यदि मृत्यु काल का गमन होता है तो मृत्यु के बाद ब्रह्म लोक छोड़कर दूसरे लोक में गमन का कारण होता है।

यह ब्रह्म नाड़ी ही व्याहृति है। सदा इस नाड़ी का ध्यान करते हुए ॐ जप सदा करना चाहिये। ब्रह्म नाड़ी = ॐ = व्याहृति = गायत्री = ब्रह्म स्तोत्र का ब्रह्म = आत्मा = परमात्मा = महाशक्ति = गुरु। उन्नत योग विधान और साधना द्वारा मन जिस समय इस ब्रह्म नाड़ी में प्रवेश करता है उसी समय मन एकाग्र और व्यापक होते हैं। उसी समय ज्ञान को प्राप्त होता है। वे सभी विधान यहाँ पर आलोचित नहीं हो सकता।

गीता में श्री कृष्ण ने अनेक स्थान में माम (हमें), अहं (हम), इत्यादि शब्द व्यवहार किया है और उसके द्वारा ब्रह्म ध्यान और साधना की ओर इशारा भी दिया है। इस निम्न में ऐसे ही कई स्थानों से श्लोकों के अर्थ को उद्धृत कर रहे हैं।

अर्थ - हे पार्थ हमारे शत शत प्रकार के और सहस्र प्रकार के रूपों को देखो। गीता ११-५॥

अर्थ - हे जीत नीद्र और भी जो कुछ देखना चाहते हो वे सब देखो। गीता ११-१॥

अर्थ - हमें मन को समर्पण करो, हमारा भक्त बन जाओ और हमें पूजा करो और हमें नमस्कार करो। गीता १८-६५॥

अर्थ - (हे पार्थ) जो मनुष्य पापयोनि में जन्मलाभ किया है (असुर, म्लेच्छ, यवनादि), जो लोग स्त्री, वैश्य, व शूद्र हैं वे लोग भी हमें आश्रय लेकर (अर्थात् ब्रह्म नाड़ी का आश्रय लेकर) परम गति को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार हम शब्द का प्रयोग सिर्फ गीता में ही नहीं हुआ कथोपकथन के काल में तन्त्रादि अनेक शास्त्रों में शिष्य को उपदेश देने के समय में ऐसे “हम” शब्द का प्रयोग सर्वत्र पाये जाते हैं। इस ‘हम’ शब्द का अर्थ है, गुरु, आत्मा, ईश्वर या ब्रह्म। गीता ८-३२॥

अनेक निम्न स्तर के महात्मा व आधुनिक प्रचारकगण गीता का उपास्य तत्व का यह निगुढ़ नीति को ठीक समझ नहीं पाये और शक्तिवादी महात्मा श्री कृष्ण को साधारण भाववादी कृष्ण सजाकर पूजारीवाद धर्म व्यवसाय के केन्द्र बनाये। और उपासना विज्ञान को विकृत किया है।

तुमलोग यदि ज्ञानशक्ति मेधा युक्तिवादिता और शान्ति को प्राप्त करना चाहते हो और समाज जीवन को फिरसे शक्तिशाली करना चाहते हो तो मूल वैदिक विधान को ही भित्ति कर लेना पड़ेगा। अर्जुन श्री कृष्ण को गुरु मान लिया था। गीता २-७॥ जिस कारण श्री कृष्ण ने अनेक स्थान में ‘हम’ शब्द का प्रयोग किये हैं। ‘हम’ का असली लक्ष्य ब्रह्म नाड़ी या आत्मा है।

गीता के एक स्थान (अः ७ श्लोः ७) में बोले हैं कि सूत्र में जैसे कि मणि ग्रथित रहता है ठीक उसी तरह आत्मा में विश्व ब्रह्माण्ड का समस्त वस्तु और जीव ग्रथित रहता है। भूः भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यम् समस्त प्रकार जगत और इन सब जगत स्थित प्राणी में सभी ब्रह्म नाड़ी में ग्रथित है। इसमें सन्देह नहीं है। गीता में मृत्युकालीन ध्यान के सम्बन्ध में और भी कहे हैं कि (अः ८ श्लोः ५) — अन्तकाले च भावेव स्मरणमुक्त्वा कलेवरम्॥

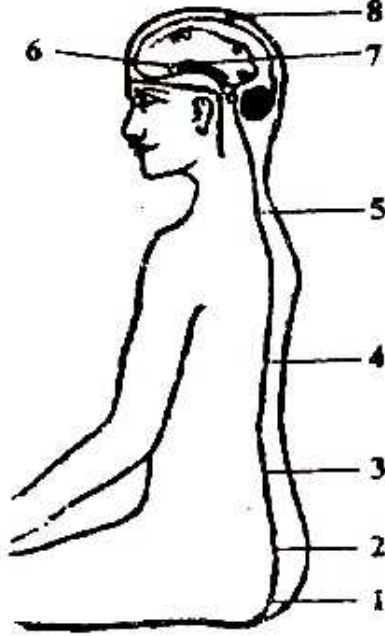
अर्थ - मृत्युकाल में मुझे (आत्मा को) स्मरण करते-करते जो शरीर को त्याग करते हैं वे आत्मा को प्राप्त करते हैं। मृत्युकालीन स्मरणविषय ब्रह्मनाड़ी ही है। इस बात को तुमलोग सदा ही स्मरण रखो।

अब चित्र द्वारा ब्रह्म नाड़ी और व्याहृत को समझाया जा रहा है।

एक से पाँच तक और बाद को शिवपिण्ड के ऊपर स्थित नाड़ी अंश सब मिलाकर ब्रह्म नाड़ी है। मस्तिष्क केन्द्र परिचय में १० नम्बर और ८ नम्बर रेखा ब्रह्मनाड़ी हैं।

तुम लोग जान लो कि बृहत् मस्तिष्क के भीतर ऊपरी हिस्से में दाहिने और बायें में दो टुकड़े में बृहत् मस्तिष्क है। ब्रह्मनाड़ी शिवपिण्ड तक पहुँचने के बाद दो मस्तिष्क में दो भाग हो जाता है किन्तु ध्यान काल में तुम लोग ऐसे दो भाग में ध्यान मत करो

क्योंकि दोनों भाग के ब्रह्म नाड़ी अनेक शाखा नाड़ी द्वारा मिलित होकर अवस्थित हैं, उसी कारण दो मस्तिष्क में दो ब्रह्मनाड़ी को ध्यान करना ठीक नहीं है।



ब्रह्म नाड़ी परिचय चित्र

चित्र परिचय।

१ - भूः = मूलाधार।

२ - भुवः = स्वाधिष्ठान।

३ - स्वः = मणिपुर।

४ - महः = अनाहत।

५ - जनः = विशुद्धाख्य।

६ - तपः = आज्ञा। इसी केन्द्र को शिव पिण्ड कहते हैं।

७ - सत्य = सहस्रार।

८ - गुरुपादुका स्थान या सहस्रार के गर्भ स्थान।

गायत्री में व्याहृति की बात है, वह है भूः, भुवः स्वः।

भूः = इच्छा शक्ति। एक दो और तीन केन्द्र मिलकर भूः है।

भुवः = क्रिया शक्ति = चार केन्द्र।

स्वः = ज्ञान शक्ति = विशुद्धाख्य से लेकर मस्तिष्क के मध्य स्थित समस्त ब्रह्म नाड़ी अंश।

उपासना के मध्य स्थित यह सब उन्नत योगतत्व को बालक और बालिकाओं को सिखाने का विरोधी कुछ लोग हो सकते हैं किन्तु आप लोग जान लेना की उपासना का ज्ञान एक दिन में किसी को लाभ नहीं हो सकता है। यह तो समस्त जीवन का साधना का विषय है। हिन्दू धर्म वैज्ञानिक धर्म होने के कारण उपासना के प्रारम्भ में ही उसको लक्ष्य पर ठीक-ठीक से साधना करना चाहिए। इसी कारण ऋषि लोग ५ वर्ष से लेकर १६ वर्ष के भीतर उपनयन का समय निर्दिष्ट किए थे।

हमारे देश में पूजारीवाद, भाववाद और मूर्खता धर्म के नाम पर बहुत कुछ चल रहा है। तुम अच्छी तरह जान लो कि मूलाधार से सहस्रार तक विस्तृत ब्रह्म नाड़ी और उसको असंख्य शाखा-प्रशाखा ही हिन्दू धर्म का एक मात्र भित्ति है। वैदिक-तान्त्रिक, यौगिक, पौराणिक, बौद्ध, जैन, और समस्त हिन्दू शाखा में ब्रह्म नाड़ी को आश्रय करके धर्म प्रतिष्ठित है। ब्रह्मनाड़ी और ॐ ही हिन्दू धर्म का मूल है।

मध्य युग में बौद्धवाद की विलुप्ति के बाद हमारे देश में पूजारीवाद अत्यन्त प्रबल हुआ। उस समय असल संध्या विधि गोपन करने की प्रवृत्ति बहुत बड़ गया था और कुछ भाववादी महात्मा धर्म को इस प्रकार से प्रचार करने लगे कि धर्म का वैज्ञानिक हिस्सा उपासना के अंश से विच्छिन्न हो गया। तुमलोग कह सकते हो कि बंगदेशीय ब्राह्मण लोग और बंगदेश के बाहर स्थित ब्राह्मण-क्षत्रिय और वैश्य लोग तो वैदिक उपनयन संस्कार को ग्रहण करते हैं। वैदिक उपासना भी करते हैं। तो वे लोग निस्तेज कैसे हो गये? हम कहेंगे शक्तिवाद को न समझकर दुर्बलवाद को न जानकर और असुरवाद को प्रबल मान कर शक्ति उपासना या गायत्री उपासना कभी लाभदायक नहीं हो सकती। बंगदेशीय ब्राह्मण बालकगण उपनयन संस्कार में दीक्षित होने के समय ऐसे कुछ बातें शिक्षा करते हैं कि ब्राह्मण छोड़ दूसरे जाति पर विद्वेष को सीख लेते हैं। जिसके फलस्वरूप शक्तिशाली समाज गठन कठिन हो रहा है।

मानो सायं कालमें तुम एक नाव को किसी पेड़ में बाँध लिया और रात भर तुम नाँव को चलाने के लिए खेना शुरु कर दिये, फिर सवेरा होने पर तुम जरूर ही देखोगे की नाँव सायं को जहाँ रही सुबह भी वहीं है। ऐसे ही शक्ति दीक्षा के समय तुम यदि समाज विद्वेष को अपने धर्म रूपमें मान लेते हो तो समाज को शक्तिशाली बनाने का जो ताकत है वह कभी भी तुममें नहीं आ सकता। तुम यदि दुर्गा पाठ करते हो तो देख पाओगे कि कीलक मन्त्र में – “ददाति प्रतिगृह्णाति नान्य था सा प्रसीदति। इत्थं रूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम्।”

अर्थात् तुम देते रहो और लेते रहो यह छोड़कर के शक्तितत्व को तुम पा नहीं सकते। इस ढंग से शक्ति तत्त्व महादेव द्वारा कीलित हो गया है। तुम अपने को क्षुद्रता,

अज्ञानता, स्वार्थपरता, मलीनता द्वारा आच्छन्न कर लिए और महाशक्ति तुम्हारी क्षुद्रता में अपने शक्तिदान नहीं कर सकते।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र, स्त्री, और यवन प्रभृति में यदि उन्नत संस्कार और वैदिक उपासना को फैलाते हो तो देख पाओगे कि उच्चसभ्यता के संघर्ष में और युक्तिवादिता के सामने में तुम्हारा अपना समाजजीवन दिनदिन महान और उत्कृष्ट हो रहे हैं। कर्म उपासना और ज्ञान के सामंजस पूर्ण जीवन यदि तुम नहीं बना सकते हो तो तुम निश्चय ही निस्तेज हो जाओगे। तुम यदि तेज को अर्जन नहीं कर सकते हो और अपना समाज को विद्वेष के घारा में बन्द करके रखते हो तो तुम अपने को कितना बड़ा ही पण्डित बनाओ पण्डित तुम नहीं बन सकते हो।

जिस स्थान पर पक्षपात रहता है उसी स्थान में योग्य व्यक्ति को वंचित करने का भी एक कुबुद्धि निहित रहता है। यह तो आसुरिक नीति, बर्बर नीति और पूजारी नीति है, इससे किसी भी देश और समाज के लिए सर्वनाश का कारण होता है। जिस कारण उपनयन के माफिक उच्च शक्ति संस्कार लाभ करने के बाद भी हम निस्तेज ही रह जाते हैं।

निर्गुण ब्रह्म उपासना के सम्बन्ध में संक्षेप में सब कुछ कहा गया और अब हम सगुण ब्रह्म उपासना के सम्बन्ध में कुछ कहेंगे। सगुण ब्रह्म में प्रतिष्ठित होना ही उच्च वैज्ञानिक मनोविकाश का पथ है।

सगुण ब्रह्म

गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव और शक्ति ये सगुण ब्रह्म हैं। तुम लोग यदि पूजा पद्धति को पाठ करते हो तो देख पाओगे कि सगुण ब्रह्म का पूजा सभी पूजा विधियों में एक ही रूप में स्थान पाया है। शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती, सूर्य या किसी भी देवता का पूजा क्यों न करो पंच देवता का पूजा तुम्हे करना ही पड़ेगा। गणेश, सूर्य, विष्णु, शक्ति व शिव मूर्ति तुम लोग देखे होंगे। सगुण ब्रह्म को समझाने के लिए ये पाँच प्रकार की मूर्ति वेद में स्थान पाये हैं। इसके द्वारा हम लोगों को ज्ञान विकास के विभिन्न स्तर को समझाया गया है। मूर्तियों की धारणा है कि हिन्दू लोग मूर्ति पूजक हैं। तुमलोग जान रक्खो कि हिन्दू लोग आत्मा ही की उपासना करते हैं। आत्मविकास या मनोविकास के विभिन्न स्तर को समझने के लिए पंचदेवताओं की ध्यान मन्त्र और मूर्ति हैं। मूर्ति स्तरों को समझाने के लिए संकेत मात्र है।

तुम देख रहे हो कि गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव के बाद शक्ति मूर्ति रह गया अर्थात् मनोविकास के चार स्तर को अतिक्रम करने के बाद शक्ति स्तर मिलेगा। शक्तिस्तर ही पूर्वोक्त निर्गुण ब्रह्म उपासना की भित्ति है। शक्ति स्तर में पहुँचने के लिए जितने ज्ञान के स्तर को भेद करना पड़ता है वे सब स्तर ही सगुण ब्रह्म के नाम से परिचित हैं। वैज्ञानिकों के दृष्टि में शक्ति और गति एक वस्तु है।

मनोविकास में इन सभी स्तरों को और भी स्पष्ट करने के लिए हम और भी चेष्टा करेंगे। इसके आगे में ब्रह्म नाड़ी के विषय में तुमलोग सुने हो। वे ब्रह्म नाड़ी के शाखा-प्रशाखा के रूप में और भी असंख्य नाड़ी हमारे मस्तिष्क और मेरुदण्ड के भीतर रहता है। मस्तिष्क के विभिन्न अंश में और मेरुदण्ड के विभिन्न स्थान में अनेक मर्म स्थान है। वे सब मर्म स्थान और मर्म केन्द्र को संयोग करने वाले अनेक नाड़ी भी हैं। नाड़ी और सूत्र करीब एक जातीय चीज है। मर्म केन्द्रों को षठ चक्र कहते हैं। गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव, प्रकृति मस्तिष्क और मेरुदण्ड केन्द्र में रहता है।

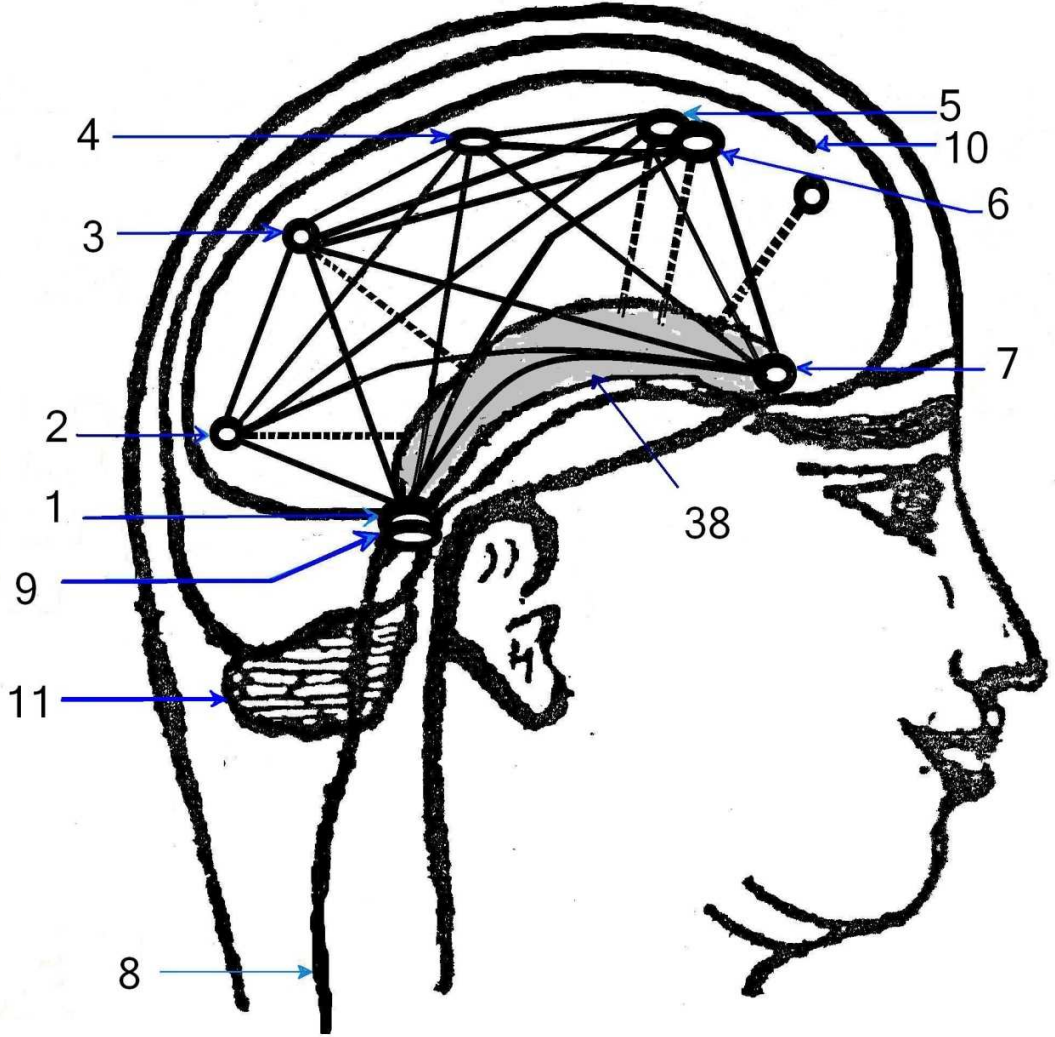
मस्तिष्क स्थित गणेश केन्द्र के साथ मेरुदण्ड स्थित गणेश केन्द्र संयुक्त है। विष्णु केन्द्र के साथ भी मेरुदण्ड स्थित विष्णु केन्द्र का सम्बन्ध है। ऐसे ही मस्तिष्क और मेरुदण्डगत स्वजातीय केन्द्र और उनलोगों का संयोगकारी नाड़ी एक-एक स्तर के अनुभूति में स्पन्दित होता है। सगुण ब्रह्म की अनुभूति और वे सब स्तरों की अनुभूति एक ही चीज है। ऐसे महात्मा लोग के चरित्र गणेश, सूर्य, विष्णु आदि के ध्यान मन्त्र में विद्यमान है। तुम क्रम विकास के पथ आलोचना करो।

गणेश – बुद्धि विवेक विचार का समष्टि ही गणेश है। हमारे मस्तिष्क के भीतर कपाल के तरफ गणेश केन्द्र विद्यमान है। इस बुद्धि का मेरुदण्ड स्थित केन्द्र हृदय अर्थात् अनाहत स्थान में अवस्थित है। ब्रह्म नाड़ी परिचय चित्र में ४ चिह्नित केन्द्र देखो। मस्तिष्क केन्द्र परिचय चित्र में ७ नम्बर केन्द्र गणेश केन्द्र है। शास्त्र में इसी को भ्रूमध्य स्थान कहते हैं।

सूर्य – स्नेह प्रेम ही सूर्य है। यह केन्द्र मस्तिष्क के भीतर में पिछली दिशा में अवस्थित है। इस केन्द्र में लीला की स्मृति रहती है। इसका भी एक शाखा मेरुदण्ड के भीतर है। ब्रह्म नाड़ी परिचय चित्र में ४ नम्बर केन्द्र को देखो। मस्तिष्क केन्द्र परिचय चित्र में २ नम्बर केन्द्र सूर्य केन्द्र है।

विष्णु – समाज प्रेम ही विष्णु है। इसका केन्द्र मस्तिष्क के पीछे की तरफ है। हमलोग जिस स्थान में शिखा या च्युटी को रखते हैं उसी के सम सूत्र में मस्तिष्क के भीतर में यह केन्द्र अवस्थित है। हमारे स्मृति और कर्म फल इस स्थान में जमा रहता है। इसको सुखस्मृति स्थान भी कहते हैं। निद्रा काल में जीव मात्र इस केन्द्र में विश्राम करते हैं। किन्तु स्वप्न काल में हमारी स्मृति सूर्य स्तर में चला जाता है। मेरुदण्ड के

भीतर अनाहत केन्द्र में इसका केन्द्र भी विद्यमान है। मस्तिष्क के भीतर विष्णु केन्द्र चित्र में ३ नम्बर केन्द्र है।



मस्तिष्क केन्द्र परिचय चित्र

चित्र परिचय।

- १ - मन केन्द्र
- २ - सूर्य केन्द्र
- ३ - विष्णु केन्द्र
- ४ - शिव केन्द्र

- ५ - उन्नत शिव केन्द्र
- ७ - गणेश केन्द्र
- ८ - मेरुदण्ड मध्यगत ब्रह्म नाड़ी या शक्ति नाड़ी
- १० - मस्तिष्क स्थित ब्रह्म नाड़ी या शक्ति नाड़ी
- ११ - छोटा मस्तिष्क या प्राण मस्तिष्क
- ३८ - शिवपिण्ड

शिव – शान्ति ही शिव है। मस्तिष्क में दो जगहों में शिव केन्द्र है। उसका एक है शान्ति प्रधान शिव केन्द्र और दूसरा है ज्ञान प्रधान शिव केन्द्र, मेरुदण्ड मध्यस्थित शिव केन्द्र विशुद्धाख्य और स्वाधिष्ठान में विद्यमान है। मस्तिष्क केन्द्र परिचय चित्र में ४ = शान्ति प्रधान शिव ५ = ज्ञान प्रधान शिव। ब्रह्म नाड़ी परिचय चित्र में ५ = विशुद्धाख्य और २ = स्वाधिष्ठान। इस केन्द्र से सदा ही शान्ति रस स्राव होता है, वेद में इस रस को सोम रस कहते हैं। इसके द्वारा हमारा मन स्निग्ध रहता है। इस स्राव को किसी-किसी शास्त्र में गंगा की धारा कहते हैं। यहाँ से यह स्राव निकल कर मेरुदण्ड मध्यगत नाड़ी मण्डल को भी स्निग्ध करके समस्त शरीर को स्निग्ध और निरोग बनाते हैं। तुमलोग पूर्व निर्दिष्ट रूप में उपासना करना उससे यह स्रावधारा तुम लोगों को निरोग रखने के लिए सहायता करेंगे।

शक्ति - मनुष्य में ईश्वरत्व ही शक्ति है। राष्ट्र शासन की नीति और राज्य पालन की नीति में जब बर्बरता, आसुरिकता, शोषण और गुण्डापन आता है उसको तोड़ने के लिए और समाज को सुखी और विकास के अनुकूल रखने के लिए जो शक्ति हौं वही ईश्वरत्व है। आसुरिकता के विरुद्ध करने वाला शक्ति ही ईश्वरत्व की शक्ति है। मस्तिष्क के भीतर सब शक्ति केन्द्र और मेरुदण्ड मध्यस्थित सब मर्म स्थान एक नाड़ी के आश्रय में अवस्थान करते हैं। यही नाड़ी ही शक्ति नाड़ी है। इसको हमलोग ब्रह्म नाड़ी का भी नाम दिया है। मस्तिष्क केन्द्र परिचय चित्र १० चिह्नित और ८ चिह्नित नाड़ी ही शक्ति या ब्रह्म नाड़ी है। संध्योपासना के क्रम धारा में ब्रह्माणी, वैष्णवी, रुद्राणी के बात तुमलोगों को कहा गया है। ऐसे तीन सन्ध्या के उपासना के बाद मध्य रात्रि में हमलोग तूर्या (तूरीया) संध्या की उपासना करते हैं। इस प्रकार के उपासना क्रम भेद करने के बाद शिव स्तर की भेद होने के बाद तूर्या शक्ति ही मिलता है। दोनों का लक्ष्य एक ही है। तब भी एक प्राकृतिक नियम को या समय प्रकृति को भित्ति करके उपासना होता है। और दूसरा मनोविकास क्रम को अबलम्बन करके शक्ति स्तर में प्रतिष्ठित होने का साधना है। ब्रह्माणी और सूर्य, वैष्णवी और विष्णु, रुद्राणी और शिव स्तर करीब-करीब एक ही प्रकार के तत्व हैं। उसमें जो कुछ थोड़ी बहुत भेद है उसके विषय में समझाने से

विषय कुछ जटिल हो जायेगा। तब भी इस विषय में संक्षेप रूप में कह सकते हैं कि हम जबतक जीवात्म बोध में वद्ध रहते हैं तब तक शक्ति या ब्रह्म तत्व ठीक-ठीक समझ नहीं सकते हैं। शिव स्तर साधना के रास्ते में शिव स्तर भेद होने के बाद हमलोगों का जीवात्मबोध शेष हो जाता है। उसी समय हमलोग ब्रह्माणी, वैष्णवी, रुद्राणी प्रभृति ज्ञान का अनुभव करने में समर्थ होते हैं। जीवात्म बोध जबतक गणेश, सूर्य, विष्णु स्तर में सीमावद्ध रहता है तब-तक ब्रह्माणी, वैष्णवी, रुद्राणी शक्ति को ठीक-ठीक समझा नहीं जा सकता। ब्रह्माणी, वैष्णवी, और रुद्राणी शक्ति की आभास मात्र सूर्य, विष्णु और शिव स्तर में विद्यमान है। विस्तारित क्रम विकाश (सप्तम अध्याय में) देखो।

गणेश = विवेक, त्याग और संयम के समष्टि।

शिव = मन की शान्ति तपस्या और विषय निवृत्ति।

गणेश और शिव ज्ञान सिद्ध होने के विकास में तूरीया स्तर में प्रतिष्ठा लाभ करता है। हमारे मनोविकास के क्रम ही पंच देवता या पाँच सगुण ब्रह्म हैं। और विश्व प्रकृति के नियमों को यदि हम भाग करें तो ब्रह्माणी, वैष्णवी, रुद्राणी और तूर्या होता है। हमारे जीवत्व के सीमा अतिक्रम करने के बाद हमलोग शिवत्व को प्राप्त करते हैं। और शक्तितत्व या ब्रह्म तत्व को समझने के लिए शक्ति को अर्जन करते हैं।

शिक्षक और विद्यार्थीगण हिन्दूधर्म के भीतर उच्च दार्शनिकता और विज्ञान सम्पद को देख न डरो। हिन्दू धर्म तो सस्ते में चलाने के लायक विश्वासवाद का धर्म नहीं है। धीरज करके इसकी आलोचना करते रहो। क्रमशः सभी सहज हो जायेगा।

सगुण ब्रह्म स्तर के सभी अनुभूति ही व्यापक है। एक ही समय इतनी सब अनुभूतियाँ व्यापक किस ढंग से हो सकती हैं? उसके विषय में एक दृष्टान्त रक्खा जाता है। मान लो एक टंकी जल है। उसमें लाल रंग मिला दो उसमें कुछ नमक मिला दो उसमें कुछ चीनी घोल दो अब टंकी के जल को खुब हिलाकर मिला लो। अब टंकी की ओर देखो एक महाशय बोले कि टंकी में जल व्यापक रूप में विद्यमान दुसरे महाशय बोले टंकी के जल में लाल रंग व्याप्त है। किसी ने थोड़ा जलपान करके कहा नमक इसमें व्यापक रूप में है। चौथे ने कहा कि इसमें चीनी ही व्याप्त है। अब तुमलोग देख रहे हो कि सब का कहना ठीक और सत्य है। अब तुम यदि प्रत्येक जल कण को विश्लेषण करो तो देख पाओगे कि कणों के भीतर ऐसे कुछ जगह हैं जिसमें लाल रंग नमक और चीनी कणों का संस्थान लेकर स्थित है। ऐसे ही सगुण ब्रह्म की अनुभूतियाँ पहले पहले साधकों के भीतर व्यापक रूप मालूम होता है। किन्तु कुछ दिन विश्लेषण करने से देख पाओगे कि अनुभूतियों में काफी खाली स्थान है। जिसमें अलग-अलग स्तर की अनुभूतियों के तत्व विद्यमान हैं। क्रमशः ये सब स्पष्ट होंगे और उन्नत स्तर की अनुभूति आने का

पथ स्पष्ट होते रहेंगे। निर्गुण ब्रह्म स्तर के अनुभूति में जगह नहीं रहता वह ठोस रूप में व्यापक है।

मूर्ति विज्ञान

नारायण शिला व शिव मूर्ति – हमारे धर्म में शालिग्राम नारायण और शिव मूर्ति नामक दो विचित्र मूर्ति हैं। यह दो मूर्तियाँ क्या हैं? इस विषय में लोगों की धारणा स्पष्ट कर देनी चाहिए, क्योंकि मूर्ति के विषय में विगत दो हजार वर्षों से अनेक मिथ्या प्रचार हो रहा है। बाइबिल व कुरान मूर्ति के विषय मिथ्या प्रचार कर रहा है। हमारे देश में पूजारीवादी ब्राह्मण लोग मूर्ति के विषय में उच्च धर्म तत्व को गोपन रखने के लिए पुराण आदि शास्त्रों में अनेक मिथ्या प्रचार किया है। हमारे देश में शिव मूर्ति सबसे श्रेष्ठ व वैज्ञानिक मूर्ति है। इस मूर्ति के साथ योग-विद्या के विशेष सम्बन्ध रहने के कारण और योग विद्या को अब्राहमणों के निकट गोपनीय रखने के लिए पूजारीवादी ब्राह्मण लोग शिव पूजा के सम्बन्ध में अनेक अनेक मिथ्या बात पुराण में लिखे हैं। इसके फलस्वरूप समाज के भीतर एक ऐसी अवस्था आ गयी है कि ब्राह्मण के लड़के भी असली शिव तत्व को भूल गये।

विशेष दृष्टि से यदि तुम शालिग्राम शिला को देखोगे तो देख पाओगे कि उसमें एक छिद्र है। उस छिद्र के मध्य में ऊपर और नीचे में दो सुन्दर छत्राकार चक्र बिराजमान हैं। उन दो चक्रों के केन्द्र स्थल में एक विन्दु में दोनों चक्र आकर मिले हैं। यदि तुमलोग ब्रह्म ज्ञान के क्षेत्र में अग्रसर होते हो तो विष्णु ग्रन्थि के भेदन के समय वैसे ही दो चक्र का मिलन विन्दु के आकार के अनुसार एक अनुभूति लाभ होगी। इस अनुभूति में यह स्पष्ट समझा जायेगा कि साधक का आत्म-सत्त्वा एक विन्दु में केन्द्रित हो गया। उस विन्दु के उपर और नीचे में गलित सोने जैसे रंग वाला दो आकाश आकर उस विन्दु में मिलित हुए हैं। और साधक का आत्म-सत्त्वा को जैसे वे छत्राकार आकार दोनों और दबाकर रक्खे हैं। जब इस तरह की अनुभूति होती रहती है उस समय और किसी भी तरह की बात मन में नहीं रहेगी। यह एक स्तर की समाधि की अनुभूति है। हमलोग गम्भीर निद्रा के समय ऐसे ही विष्णु स्तर के सुख में डूबे रहते हैं। निद्रा को हमलोग तामस समाधि कह सकते हैं। खैर नारायण शिला में इस प्रकार के समाधि का रहस्य रहने के कारण महात्मा लोग नारायण शालिग्राम केन्द्र करके पूजा का विधान प्रचलित किया है।

नारायण शिला, शिव लिंग, गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव और शक्ति मूर्ति सभी ब्रह्म तत्व के समझाने के लिए विभिन्न स्तर का अनुभूति है। इन सब यन्त्र मूर्ति में किसी

भी देवता का पूजा चल सकता है। पूजा विधान आजकल एक श्रेणी मनुष्यों के वंशगत व्यवसाय में परिणत हो गया। जिस कारण पूजा तत्व दिन प्रति दिन समाज से दूर चला जा रहा है।

इधर में भाववादी महात्मा लोग पूजा के अनुष्ठानिक अंश को त्याग करके मूर्ति के सजाने के अनुष्ठान को ही पूजा समझते हैं। तुमलोग जान लो कि पूजा विधान और अनुष्ठान बहुत ही सुन्दर व उत्साहप्रद योग अनुष्ठान है। इस उपासना काण्ड को किसी पूजारी के हाथ में समर्पण करना यह सिर्फ सजाकरके दर्शकों का मनोरंजन करने के अनुष्ठान को हमलोग उच्च प्रथा नहीं मानते क्योंकि इससे आनन्दप्रद योग अनुष्ठान से अपने को वंचित करना होता है। संध्यानुष्ठान जैसे साधकों के लिए अवश्य कर्तव्य अनुष्ठान है नैमित्तिक उपासना भी अपने के लिए लाभदायक अनुष्ठान जानना चाहिए। कर्म काण्ड में अर्थात् दशविध संस्कार के विषयों में पुरोहितों को नियुक्ति करना चल सकता है। किन्तु उपासना काण्ड में पुरोहित का नियोग आत्म प्रवंचना मात्र है। बंग देश में विद्यार्थी लोग आनन्द के साथ सरस्वती पूजा का अनुष्ठान करते हैं। हमलोग कहेंगे छात्रों को चाहिए कि अपनेलोग सरस्वती पूजा का अनुष्ठान करके लाभ उठावें। पूजक, तन्त्र धारक, सदस्य, निरीक्षक प्रभृति के समष्टि में एक पूजक सभा अपने में निर्वाचित कर लेना चाहिए और वही लोग के निर्देश में सब विद्यार्थी शामिल होकर पूजा का अनुष्ठान करे तो ठीक है। ऐसे हो तो पुरोहितों का व्यवसायदारी पूजा अनुष्ठान न होकर विद्यार्थियों के लिए धर्मानुष्ठान प्रतिष्ठित होते रहेंगे। बहुत सुन्दर रूप में और वैज्ञानिक रीति में पूजा के अनुष्ठान हो सके इसके लिए हमलोग अपने मत में दुर्गा पूजा, काली पूजा, लक्ष्मी पूजा, सरस्वती पूजा, और शिव पूजा आदि का व्यवस्था किया है। हमारे यहाँ सभी पूजा समवेत रूप में होता है। इस विषय में हमलोग पूजा विधि पुस्तक प्रकाशन करने के लिए सोच रहे हैं।

नारायण शिला विष्णु स्तर की अनुभूति रहस्य की एक मूर्ति है। इस बात को हम पहले कह चुके हैं। समाज प्रेम ही विष्णु है। नारायण शिला में समाज प्रेम का आदर्श विद्यमान है। शिला के मध्यस्थित वही आत्म विन्दु ही समाज नेता है। उस आत्म विन्दु अवस्थित ऊपरस्थित चक्र ही योगी और ज्ञानियों के समष्टि हैं। और निम्नस्थित चक्र ही सर्व साधारण के समाज समष्टि है, अर्थात् यदि तुम समाज का सुधार करना चाहते हो तो तुम अपने के लिए उच्च स्तर के ज्ञान प्राप्त करो और योगी, त्यागी, और महात्मा लोगों की ज्ञान शक्ति को आकर्षण करो और सर्वसाधारण को सम्बद्ध रखने के लिए समाज मध्यस्थित कर्मियों को ओर जनता को आकर्षण कर एकत्रित करो समाज सेवा के लिए यही सर्व श्रेष्ठ आदर्श है। तुमलोग रामायण और महाभारत का पाठ करने से देख पाओगे कि राजा गण ऐसे ही ऋषियों कि उपदेश को ग्रहण कर रहे हैं और सर्वसाधारण

की रक्षा इस नीति में कर रहे हैं। जिस स्थान में देखा जाता है कि राजा या नेता ज्ञान, युक्तिवादिता और न्याय परायणता को उपेक्षा करते हुए अपने तानाशाही शासन चला रहे हैं और अपने को अधिक दाम्भिक मानकर उत्पीड़न को आयुध कर रहे हैं तो उनका पतन अवश्य ही होने का पथ हो रहा है। युक्ति वादिता का अवमानना नेता और राजा कि लिए दुर्बलता और दाम्भिकता के लक्षण हैं। यह समाज जीवन के लिए विपत्ति सूचक और राजा या नेता के लिए पतन दायक हैं। हिन्दुओं के संसारिक और सामाजिक जीवन के समस्त प्रकार का अनुष्ठान ही नारायण पूजा की व्यवस्था में शामिल है। जिस कारण समाज-जीवन का सर्वश्रेष्ठ आदर्श नारायण मूर्ति में विद्यमान है। पूजारी लोग नारायण शिला को अनेक स्थान में दूसरे को छूने नहीं देते हैं। हम समझते हैं नारायण शिला के भीतर जो समाजपालन का रहस्य है उसको सब कोई जाने तो समाज के लिए कल्याण दायक होगा।

अब हम लोग शिव मूर्ति के सम्बन्ध में कहेंगे, शिवमूर्ति तीन-चार प्रकार के मिलते हैं। मस्तिष्क स्थित दो वृहद-मस्तिष्क, दो छोटी मस्तिष्क एक शिव पिण्ड द्वारा संयुक्त है। यही शिव पिण्ड असल शिवमूर्ति है। दो वृहद मस्तिष्क और दो छोटे मस्तिष्क मिलकर पिनेट (आर्घा) है। शिव मूर्ति में एक सर्प भी है। तुम लोगों को क्रमशः सब रहस्यों को बताया जायेगा।

आजकल शरीर तत्व के विषयों में बहुत कुछ शिक्षा-विभाग में पढ़ाये जाते हैं। उसमें वृहद मस्तिष्क, छोटे मस्तिष्क और सुषुम्ना शीर्षक (मेडूला अवलंगटा) संयोग करने वाले शिवपिण्ड के विषय में बहुत कुछ पढ़ाया जाता है। शास्त्र में मेरुदण्ड मध्यस्थित मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धाख्य नामक पाँच चक्र स्थान है। मस्तिष्क के भीतर दो मर्म स्थान है। एक का नाम आज्ञा चक्र और दूसरे का नाम है सहस्रार चक्र। इसके विषय में विस्तृत आलोचना क्रम विकाश के अष्टम अध्याय में देखो।

हमारे पूर्व युग में महात्मा लोग इन सब तत्वों को जानते थे। इन सब मर्म स्थानों के प्रत्येक शाखा में कैसा मनोविज्ञान है। उसके सम्बन्ध तन्त्र शास्त्र में विस्तारित आलोचना पाया जाता है। कुछ पंडितों का कहना है कि शिव व्यवच्छेद द्वारा इन सब केन्द्रों में षट् चक्र जैसा चित्र ढूँढ़ने से नहीं मिलता है। उन लोगों के लिए हम इतना ही कह सकते हैं कि षट् चक्र आदि स्थान का चित्र आदि साधकों के साधन के लिए कल्पित किया गया है। पर उसके हर एक केन्द्र में अनेक सूक्ष्म सूक्ष्म नाड़ियाँ आकर मिली हैं इन सब नाड़ियों को समझने के लिए षट् चक्र चित्र का ध्यान एक प्रकार का उपाय मात्र है। वास्तव में यह सब नाड़ियों के ही मर्मस्थान हैं। इसके विषय में हमने क्रम विकास के चतुर्थ खण्ड में विस्तृत आलोचना किया है। मानो अनाहत केन्द्र में द्वादश शाखा वाले मर्म निश्चय ही मिलेंगे, किन्तु उसका रंग उसका चेहरा अनाहत चक्र के ध्यान के

अनुकूल नहीं हो सकता: प्रत्येक मनुष्यों को जानना चाहिए कि ध्यान करने को नीति के साथ मनस्तत्व का ही सम्बन्ध रहता है। उसमें मन को एकाग्र और समाहित करने का विज्ञान भी जड़ित है। अतः मर्म केन्द्रों के ध्यान विज्ञान और वास्तव स्थित में जो भेद मालूम होता है वे ठीक भेद नहीं हैं। शिव योग विद्या के देवता हैं। इसमें तुम लोग जानते हो कि मस्तिष्क से आरम्भ करके मेरु दण्ड के निम्न प्रान्त तक अर्थात् मूलाधार चक्र तक यह जो आत्म जगत है वही शिव है। मन्दिर में जो शिवमूर्ति पाते हो वह आत्म जगत का ही मूर्ति है। हम अपने शक्तिवाद मठ में इस आत्म मूर्ति की विशेषता दिखाकर के कई एक मूर्ति बनाये हैं। और उसकी प्रतिष्ठा भी मन्दिर में किए हैं।

मस्तिष्क के ऊपरी भाग में वृहद मस्तिष्क दो भाग में स्थित है। यह दोनों भाग एक मर्म द्वारा संयुक्त है। यह संयोगकारी मर्म स्थान ही शिवपिण्ड है। यह शिवपिण्ड के हिस्से में क्षुद्र मस्तिष्क के दो केन्द्र विद्यमान हैं। यह दो क्षुद्र मस्तिष्क केन्द्र और सुषुम्ना के शीर्ष स्थान प्रायः एक ही स्थान में आकर मिला है। मस्तिष्क मध्यस्थित शिवपिण्ड के सामने में बुद्धि केन्द्र को ही भूमध्य स्थान कहते हैं। इस शिवपिण्ड के निचले हिस्से में मन केन्द्र और उसके नीचे प्राण केन्द्र विद्यमान है। मस्तिष्क केन्द्र चित्र में १ = मन, ९ = प्राण, ७ = बुद्धि। शिवपिण्ड के ऊपरी भाग को योगशास्त्र निर्दिष्ट गुरुपादुका कहते हैं। दो क्षुद्र मस्तिष्क को तुमलोग प्राण मस्तिष्क जानो। ये दोनों प्राण केन्द्र को शक्ति दान करते हैं। प्राण केन्द्र ही सुषुम्ना शीर्ष (मेडुला अवलंगाटा) और मस्तिष्क को परिचालना करते हैं।

शास्त्र निर्दिष्ट द्विदल (आज्ञाचक्र) ही वृहद मस्तिष्क के निम्न भाग है। और शिवपिण्ड ही द्विदल की कर्णिका या मध्यस्थल है। इस वृहद मस्तिष्क का ऊपरी हिस्सा ही सहस्रार है। अनेक अनभिज्ञ मनुष्य दो छोटे मस्तिष्क को द्विदल चक्र या आज्ञाचक्र या और दो वृहद मस्तिष्क के सहस्रार कहते हैं। ऐसा कहना गलत है। शिवपिण्ड को केन्द्र करके सब प्रकार योग विद्या की साधना प्रतिष्ठित है। इसमें भूल नहीं करना चाहिये। क्योंकि उससे उपासना में गलती आ जायगी। चित्र द्वारा इन सब बातों को और भी स्पष्ट किया जायगा, क्योंकि हिन्दू धर्म में मस्तिष्क ही शिवमूर्ति है, और यह केन्द्र ही मूल्यवान साधना अंश है। शिवपिण्ड में हमारे शरीर के समस्त अंग-प्रत्यंग के यंत्र परिचालक केन्द्र विद्यमान है। इसी कारण शिवपिण्ड को ध्यान करने से समस्त शरीर स्थित अंग-प्रत्यंग और श्वास यन्त्र निरोग रहता है।

वृहद मस्तिष्क के निम्नभागी आज्ञा चक्र और वृहद मस्तिष्क के संगम स्थल ही शिवपिण्ड है। इस शिवपिण्ड से मस्तिष्क का एक शाखा मेरुदण्ड के मध्य होकर मूलाधार पर्यन्त विस्तृत है। ब्रह्म नाड़ी के उर्ध्व भाग और सहस्रार शिव मूर्ति के सर्प का फणा

भाग और सर्प का पुच्छ भाग ही ब्रह्मनाड़ी के निम्न भाग और मेरुदण्ड स्थित पाँच मर्म केन्द्रों जानो। चित्र को देख करके तुमलोग इसका साधारण धारणा पा सकोगे।

शिव मूर्ति, आज्ञा चक्र और सहस्रार और मस्तिष्क वास्तव में एक ही वस्तु है। शिव मूर्ति के पिण्ड स्थान = आज्ञाचक्र के मध्य स्थान = दो वृहद मस्तिष्क के संयोग स्थान।

शिव मूर्ति के पिनेट = आर्घा = आज्ञा चक्र का द्विदल = वृहद मस्तिष्क के निम्न भाग।

शिव मूर्ति की सर्प फना = सहस्रार = वृहद मस्तिष्क का ऊपरी भाग। इस ऊपरी भाग में ही ब्रह्म नाड़ी का ऊपरी भाग स्थित है।

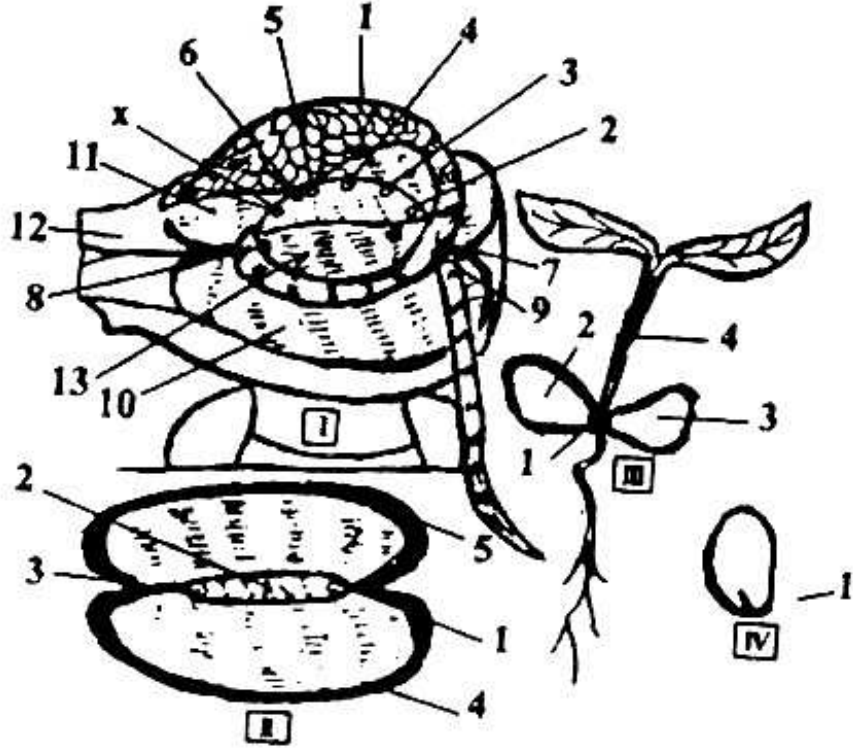
शिव मूर्ति का सर्प पुच्छ = सुषुम्ना शीर्ष और मेरुदण्ड स्थित ब्रह्म नाड़ी और समस्त मेरु मज्जा अंश एक ही है।

इसके पहले तुमलोगों को ब्रह्म नाड़ी को ध्यान करते हुए उपासना करने के लिए कहा गया था, तुमलोग यदि शिव पिण्ड के साथ ब्रह्म नाड़ी का ध्यान करते हुए उपासना करो तो वह तुम्हारे लिए अधिक फलदायक होगा। इसके द्वारा शान्ति, ज्ञान, और तेजस्विता की प्राप्ति सहज होगा। किन्तु यदि तुमलोग सिर्फ ब्रह्म नाड़ी का ध्यान करते हुए उपासना करो तो उससे तेजस्विता की वृद्धि होगी।

शिव पिनेट सब समय कुतुबनुमा के तरह उत्तर की ओर रहता है। शिव पूजन भी उत्तराभिमुख होकर करना पड़ता है। पृथ्वी के उत्तर दिशा में ध्रुव नक्षत्र है। यह ध्रुव ही सत्य स्थान या ध्रुव स्थान है। मस्तिष्क स्थित बुद्धि स्थान (भ्रूमध्य स्थान) को पृथ्वी स्थित चुम्बक क्रिया के साथ सदा ही एक बनाकर रखता है इस क्रिया के साथ हमारे मन और बुद्धि केन्द्र संयुक्त हो जाय या एकरूपता हो जाय तो हमारे ज्ञान सृष्टि रहस्य को जानने के लिए अधिक शक्तिशाली होते हैं। पृथ्वी और ध्रुव संयोगकारी चुम्बक क्रिया और हमारे मन और बुद्धि संयुक्त शक्ति क्रिया को एक रेखा में लाने के लिए हमारे योगी लोग उत्तर मुँह हो करके पूजा करने को कहे हैं। शिवमूर्ति के सम्बन्ध में मूर्ख लोग अनेक मिथ्या कथा का प्रचार किया है। अब तो तुम लोग शिवमूर्ति के सम्बन्ध में असल बातों को जान लिया। यह शिवमूर्ति ही हम लोगों का आत्म मूर्ति है। वृक्ष, कृमि, चिड़िया, पशु और मानव में यह शिवमूर्ति ही आत्म मूर्ति रूप में प्रतिष्ठित है। सब प्रकार के आत्म उपासना के लक्ष्य यह शिवमूर्ति ही है। तुम लोग “हरे कृष्ण हरे कृष्ण” इत्यादि मन्त्र का नाम सुने हो। इस मन्त्र का लक्ष्य भी यह शिवमूर्ति ही है। विस्तारित राधा तन्त्र में देखो। पूजारीवादी और भाववादी महात्मा लोग हमारे ज्ञान और शक्ति मूलक उपासना को विकृत कर प्रचार द्वारा समाज का मेरु दण्ड को तोड़ रहे हैं। शिवमूर्ति का ध्यान बहुत ही सहज और सुन्दर है। इसी कारण योगाभ्यास में या साधना में शिवमूर्ति को शिवपिण्ड में या

किसी चक्र में मन को एकाग्र करने के लिए ध्यान विधान में विधि रखे हैं। तुम लोग शिव पूजन करके देखो तो देख पाओगे कि मन शान्ति से भरपूर हो रहा है। शिव मूर्ति, आज्ञा, बीज और अंकुर चित्र को देखो।

अब शिव मूर्ति को चित्र द्वारा समझाया जा रहा है। चित्र परिचय देखो।



शिव मूर्ति, आज्ञा, बीज और अंकुर चित्र

चित्र परिचय।

I चित्र। यह है शिव पिण्ड चित्र।

१ - सर्प फना में सहस्रार केन्द्र।

२-३-४-५-६ और x यह सब केन्द्र शिवपिण्ड स्थान में ६ गुरु पादुका केन्द्र है। इस पुस्तक में इन सभी केन्द्रों के विषय में आलोचना नहीं कर सकता। शिवपिण्ड का उर्ध्व अंश ही गुरु पादुका है।

७ - मन का केन्द्र,

८ - बुद्धि केन्द्र,

९ - प्राण केन्द्र,

१० - आज्ञा चक्र का वामदिक के पत्र। यह है पिनेट का पश्चिमार्द्ध,

११ - पिनेट का पूर्वार्द्ध, यह आज्ञा चक्र का दक्षिणार्द्ध,

१२ - पिनेट के उत्तरदिक स्थित पुच्छ अंश,
१३ - शिवपिण्ड का निम्नांश या आज्ञा अंश यही है। आज्ञा चक्र की कर्णिका। शिव
पिण्ड का उर्ध्वअंश ही गुरु पादुका है।

II चित्र। यह है आज्ञा चक्र चित्र।

१ - मन का केन्द्र,

२ - आज्ञा चक्र का कर्णिका। यह है शिव पिण्ड में आज्ञा अंश,

३ - बुद्धि केन्द्र,

४ - आज्ञा चक्र का वामचक्र,

५ - आज्ञा चक्र का दक्षिण पत्र।

III चित्र। यह है अंकुर चित्र। बीज को मिट्टी में गाड़ देने से ऐसे ही पौधा पहले
निकलता है।

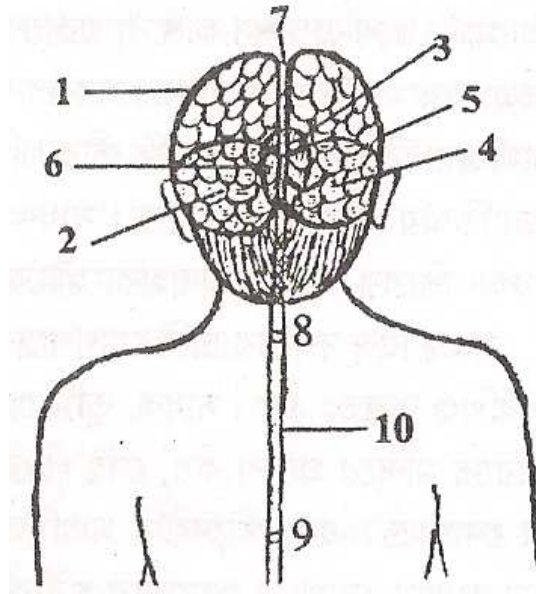
१ पौधे का मूल भाग, उर्ध्वभाग और बीज का द्विदल संयोग स्थल, इस चित्र के
साथ शिवमूर्ति की तुलना करो उससे समझ सकोगे शिव मूर्ति केवल हमारी ही आत्म
मूर्ति नहीं है। यह है वृक्षादि का भी प्राण केन्द्र। हमारी प्राण ही । नम्बर चित्र में ९ नम्बर
स्थान हैं।

२, ३ पौधे का इस अंश के साथ आज्ञा चक्र का चार (४) पाँच (५) अंश को और
शिवमूर्ति के १०, ११ अंश को मिलाओ।

IV चित्र। यह एक बीज चित्र है। यह बीज मिट्टी और जलका आश्रय पा जाय तो
तीन (III) नम्बर चित्र के माफिक पौधे निकलते हैं।

बीज में यही अंकुर हैं। अंकुर ही ओंकार है। ओंकार = ब्रह्मनाड़ी = व्याहृति =
शिवमूर्ति का सर्प = आत्मा।

यहाँ पर और एक चित्र द्वारा मस्तिष्क के भीतर सहस्रार आज्ञा और शिवपिण्ड
को समझाया जाता है।



मस्तिष्क में आज्ञा, सहस्रार और शिव पिण्ड चित्र

चित्र परिचय।

१ - वाम मस्तिष्क में सहस्रार

५ - दक्षिण मस्तिष्क में सहस्रार. मस्तिष्क के उपरी भाग ही सहस्रार है। पगड़ी के आकार में सहस्रार को दिखाया गया है।

२ - वाम मस्तिष्क में आज्ञा का वाम पत्र। वृहद मस्तिष्क में निम्न भाग ही आज्ञा चक्र है। आड़ी-आड़ी अंकित रेखा द्वारा सहस्रार के निम्न अंश को दिखाया गया है।

४ - दक्षिण मस्तिष्क के भीतर आज्ञा चक्रका दक्षिण पत्र।

६-३ - उभय मस्तिष्क के मध्यस्थित सहस्रार के गर्भ स्थित और आज्ञा मध्यस्थित शिव पिण्ड। ३ - शिव पिण्ड में गुरु पादुका, ६ - चक्र में ॐ, शिव पिण्ड में आज्ञा का अंश। छोटे-छोटे खड़े रेखा से सहस्रार के गर्भ स्थल में इस शिव पिण्ड अंश को दिखाया गया।

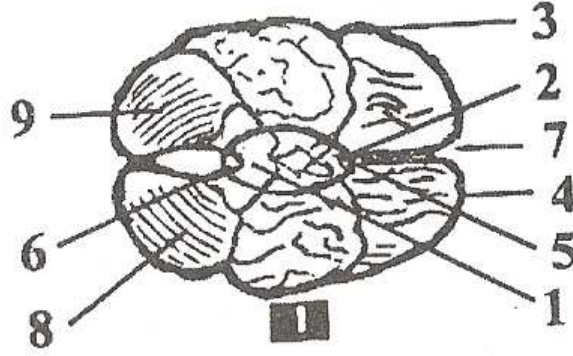
७ - दो वृहद मस्तिष्क के मध्य स्थित खाली स्थान, यह खाली स्थान शिव पिण्ड तक विस्तृत है। तुम लोग अखरोट देखे हो। उसको देखने से मस्तिष्क का छीक नमुना समझ सकोगे।

८ - मेरू दण्ड मध्यस्थित विशुद्धाख्य केन्द्र।

९ - मेरूदण्ड मध्यस्थित अनाहत केन्द्र।

१० - मस्तिष्क से आरम्भ होकर मूलाधार पर्यन्त विस्तृत सुषुम्ना मार्ग। इस मार्ग में ही ब्रह्मनाडी अवस्थित है।

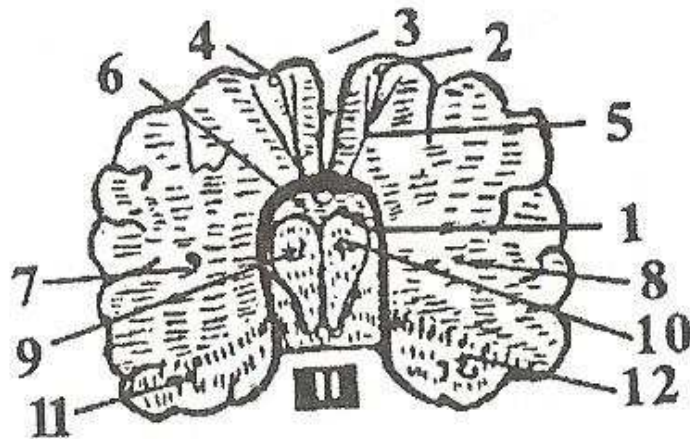
अब तुम लोगों को मस्तिष्क के वैज्ञानिक चित्र के सहायता से आज्ञा, शिव पिण्ड और सहस्रार को समझाया जाता है।



मस्तिष्क के वैज्ञानिक चित्र (I)

I चित्र। हमारे मस्तिष्क को यदि उलट के रक्खा जाये तो यही चित्र बनता है।

- १ - शिव पिण्ड का समसूत्र स्थान।
- ५ - बुद्धिस्थान का समसूत्र स्थान।
- ६ - प्राण केन्द्र का समसूत्रस्थान।
- ४ - वाम मस्तिष्क।
- ३ - दक्षिण मस्तिष्क।
- ७ - दक्षिण मस्तिष्क का कपाल के दिक।
- ८ - छोटा मस्तिष्क।
- ९ - छोटा मस्तिष्क।



मस्तिष्क के वैज्ञानिक चित्र (II)

II चित्र हमारे मस्तिष्क के उभय कर्ण के समसूत्र में काटा जाय तो इस आकार का चित्र बनता है।

१ - शिव पिण्ड।

३ - उभय मस्तिष्क मध्यवर्ती खाली स्थान। इस खाली स्थान के भीतर ११, १२ अंश और शिव पिण्ड को मिलाकर आज्ञा चक्र, आज्ञा चक्र अंश को खड़ी रेखा द्वारा सीमाबद्ध किया गया है। खड़ी रेखा भिन्न समस्त आड़ी रेखा चिह्नित अंश को सहस्रार के गर्भ स्थान जानो।

६ - यही गुरु पादुका अंश है। इसी को सहस्रार का गर्भ स्थान कहा जाता है।

III चित्र - इस चित्र में मस्तिष्क के भीतर भ्रूमध्य स्थान और शिखा के समसूत्र में काटकर विभक्त किया गया है। यह है उसी का चित्र।

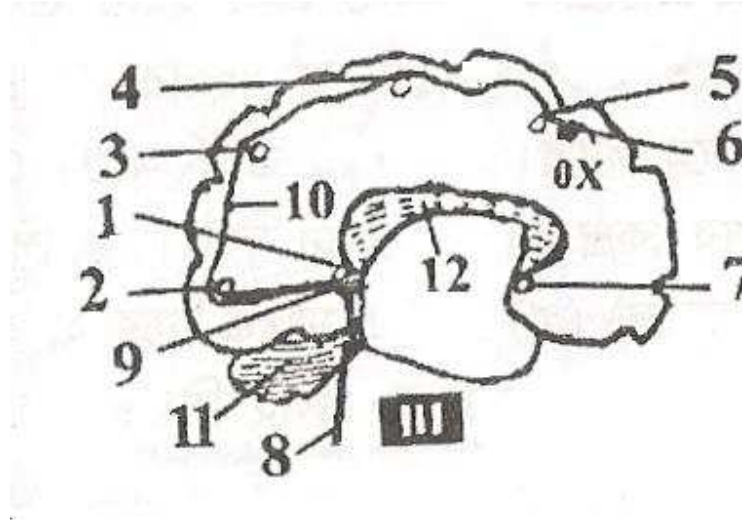
१ - मन का केन्द्र।

२ - सूर्य केन्द्र।

३ - विष्णु केन्द्र।

४ - शिव केन्द्र।

५ - उन्नतशिव केन्द्र।



मस्तिष्क के वैज्ञानिक चित्र (III)

७ - बुद्धिकेन्द्र या गणेश केन्द्र।

८ - मेरुदण्ड मध्य स्थित ब्रहमनाडी व सुषुम्ना।

१० - मस्तिष्क स्थित ब्रहमनाडी।

११ - छोटा मस्तिष्क, आज्ञा चक्र का अंश यह है प्राण मस्तिष्क।

१२ - मस्तिष्क स्थित शिव पिण्ड।

लिंग मूर्ति और शास्त्र का प्रमाण

शिव मूर्ति के सम्बन्ध में तुम लोग एकदम संदेहहीन हो जाओ। उसके लिए शास्त्रों का प्रमाण दिया जाता है। पूजारी वादी व मूर्ति को खण्डन करने वाले सम्प्रदाय मिथ्या प्रचार द्वारा अनेक साधकों को विभ्रान्त कर रहे हैं।

१. लिंगानानां च क्रमं वक्षे यथा वच्छृणुतः द्विजाः।
तदेव लिंगं प्रथमं प्रणव सर्वकालिकम्॥
सूक्ष्म-प्रणव रूपोही सकल तत् पंचाक्षर मुच्यते।
तयो पूजा तपः प्रोक्तं साक्षात् मोक्षप्रद उभे॥
पुरुष प्रकृति भूतानि लिंगानि सुबहुनि च।
तानि विस्तरशो वक्तं शिव वेत्ति न चापरः॥

शिव पुराणम्

अर्थ – हे द्विजगण (दीक्षित गण) हम लिंगो के क्रम कह रहे हैं तुम लोग श्रवण करो। इन लिंगो में ओंकार ही प्रथम लिंग है, ॐ में ही भूत, भविष्यत, और वर्तमान विराजमान है। प्रणवमय लिंग का फिर सूक्ष्म रूप भी है। वही सूक्ष्म रूप ही निष्कल ब्रह्म है। 'सकल' अर्थात् समष्टि विश्व को आप लोग स्थूल लिंग जानो। यह शिव ही पंचाक्षर मन्त्र की समष्टि है। ऐसे उभय प्रकार के लिंग का पूजा ही तपस्या नाम से प्रसिद्ध है। ऐसे लिंग पूजा साक्षात् मोक्ष को प्रदानकारी होते हैं। पुरुष तत्व, प्रकृतितत्व, और अनेक प्रकार के भूततत्व (सांख्यदर्शन देखो) का लिंग के विभिन्न रूप हैं। इन सब के विषय में विस्तृत कहा गया है। जीवन मुक्त महापुरुष छोड़ अन्य पुरुष इनको नहीं जान सकते।

२. साजानाम्बुज वद्विमलकर सदृशं धाम प्रकाशं।
हक्षभ्यां केवलाभ्यां परिलसित वपुर्नेत्र पत्र सुशुभं॥
तन्मये हाकिनी सा शशिसम धवला बक्त्रषटकं दधानां।
विद्यामुद्रां कपालं डमरुजपम् बटीः बिभ्रती शुद्धचिन्ता॥
एतद् पदमान्तराले निवसति च मनः सूक्ष्म रूपं प्रसिद्धं।
योनौ तत् कर्निकाया मितर शिवपदं लिंग चिहण प्रकाशं॥

षट् चक्र निरूपणम्॥ ३४-३५॥

अर्थ – भू युगल के मध्यस्थल में आज्ञा नामक एक द्विदल चक्र हैं। वह चन्द्र समान शुभ्र वर्ण है। योगियों के ध्यान-स्थान स्वरूप है। यह अतीव शुभ्र है। इसके दल द्वय में ह क्ष दो वर्ण शोभा पा रहे हैं। आज्ञा चक्र के मध्य में विद्या मुद्रा, कपाल, जप माला धारिणी चतुर्भुजा विमल चित्ता षडानना हाकिनी नामक शक्ति अधिष्ठिता है। इस

पद्म के अन्तर स्थित कर्णिका भाग में सूक्ष्मरूपी मन प्रसिद्ध है। (मस्तिष्क परिचय केन्द्र में १ नम्बर केन्द्र को देखो।) और योनि के आकार विशिष्ट दो दल के मध्यस्थित कर्णिका मध्ये इतर नामक शिवलिंग प्रकाश मान है। (देखो मस्तिष्क में आज्ञा, सहस्रार और शिव पिण्ड निर्देशक चित्र नः ७ स्थान। आज्ञा सहस्रार और शिव पिण्ड एवं सम्बन्ध मस्तिष्क के वैज्ञानिक चित्र का (II) ३ चिह्नित स्थान देखो।)

३. आराधयामि मणि सन्निभ मात्मलिंगं
मायापुरी हृदय पंकज सन्निविष्टं।
श्रद्धानदी विमल चित्त जलाबगाहं
नित्य समाधि कुसुमैर पुनर्भवाय॥

हंस ध्यान॥

अर्थ – मैं मणि के सदृश ज्योति विशिष्ट आत्मरूप लिंग को आराधना करता हूँ आप मायापुरी रूप सहस्रार कमल के भीतर में सम्पूर्ण रूप में निविष्ट हैं। श्रद्धारूपा नदी और ज्ञान रूप जल में स्नान करता हूँ। समाधिरूप पुष्प द्वारावह आत्मरूपी लिंग की पूजा करता हूँ। श्रद्धा, ज्ञान आदि नाड़ी शिव पिण्ड में अवस्थित है। (क्रम विकास अष्टम अध्याय को देखो) उसमें हमारा और पुनर्जन्म न होगा अर्थात् हम शेष समाधि को प्राप्त करने के लिए योगानुष्ठान कर रहे हैं।

४. आकाशं लिंगमित्याहुः पृथिवीतस्य पीठका।
आलयसर्वदेवानां लयानाल्लिंगमुच्यते॥

लिंग पुराण॥

अर्थ – आकाश (आ = व्याप्त। काश = ज्योति। अर्थात् आत्मा व्यापक और आत्मा ही ज्ञानमय लिंग है।) ही लिंग। पृथ्वी (अर्थात् मूलाधार चक्र) उसका पीठस्वरूप है, इसमें समस्त देवता अवस्थान करते हैं, और समस्त देवता इसमें लय प्राप्त होते हैं। जिस कारण आत्मा का नाम लिंग है।

५. आलय, लिंगमित्याहुर्न लिंगम् लिंगमुच्यते।
यस्मिन् सर्वानि भूतानि लीयन्ते वुद्वुदाइव॥

लिंग पुराणम्॥

अर्थ – आत्मा सर्वभूत का आश्रय है। इसीलिए उसका नाम है लिंग। लिंग मूर्ति को लिंग मत समझो क्योंकि आत्मा ही लिंग है। इस लिंग में जल के बुलबुले की तरह समस्त विश्वविलीन प्राप्त होता है।

६. आकाशस्तल्लिंगात्॥

वेदान्त सूत्रम्॥

अर्थ – आकाश ही ब्रह्म का लिंग है।

७. लिंगाच्च॥

वेदान्त सूत्रम्॥

अर्थ – विलीन हो जाने का जो अभ्यास है। अर्थात् समाधि ही लिंग है।

८. स्थित्वा स्थाने सरोजे प्रणवमय कुण्डले सूक्ष्ममार्गे।

शान्ते स्वान्त प्रलीने प्रकटित विभवे ज्योति रूपे पराख्ये॥

लिंगं तद् ब्रह्मवाच्यं सकल तनुगतं शंकरं न स्मरामि।

क्षन्तव्यं मे अपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शम्भो॥

शंकराचार्य कृत शिवस्तोत्रम्॥

अर्थ – जो लिंग प्रणवमय है और जो कि वायुमय अर्थात् जीवनी शक्तिमय है। जो कि सुषुम्ना नामक सूक्ष्ममार्ग में कुण्डलिनी रूप में अवस्थित रहता है। जो कि मन को शान्त करके अहंरूप आत्मभाव को प्रविलीन करने में समर्थ है। जो कि अनन्त ऐश्वर्य के आश्रय रूप में है। जो कि ज्योति स्वरूप है। जो कि परमब्रह्म नाम से विख्यात है। जो कि समस्त जीवों के भीतर ब्रह्मनाड़ीरूप में अवस्थित है जो कि सदा मंगलमय है। जो कि ब्रह्म नाम से प्रसिद्ध। मैं उस लिंग को स्मरण करता हूँ। हे अनन्त मंगलमय शिव। हे समता के स्वरूप, आप मुझे क्षमा करो।

९. ॐ ऋतं सत्यं परम् ब्रह्म पुरुषं कृष्ण पिंगलम्।

उर्द्धलिंगं विरूपाक्षं विश्वरूप नमो नमः॥

सामवेद सन्ध्या॥

अर्थ – आप परब्रह्म (आप अविनाशी) हैं। आप सत्य के स्वरूप हैं। आप कृष्णपिंगल पुरुष है (आप अग्नि स्वरूप हैं)। अर्थात् आप मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक व्याप्त हैं। आप अरूप हैं, आप विश्वरूप है। आपको बार बार प्रणाम।

शिवलिंग के सम्बन्ध में मूर्तियों के निन्दाकारी क्रीस्तान और मुसलमानों का नाम अधिक प्रसिद्ध है। किन्तु तुमलोग जान रखो कि प्राचीन क्रिस्तानों के मन्दिर में शिवलिंग पूजित होता था। मैदम वलवौस्की लिखित इसिस आनभेइल नामक पुस्तक में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है। मूर्ख क्रिस्तान लोग परवर्तीकाल में उस लिंग को न समझकर तोड़कर फेंक दिये थे। दो पत्थर में वह लिंग मूर्ति गठित होता था और एक का नाम था स्त्रीपत्थर या 'अ' और दूसरे का नाम था पुंपत्थर या 'उम्' पत्थर। अब तुमलोग देख रहे हो कि अ + उम = ओम् हुआ। यह ओम् ही शब्द ब्रह्म है। बाइबिल¹ में इस शब्द ब्रह्म को लक्ष्य करके एक वाणी है। In the beginning there was word, and that word was God. कुरान पढ़ने से मालूम होता है कि मक्का में ३६० मूर्ति था उन सबको तोड़कर के एक

¹ King James Version में John 1:1 : "In the beginning was the Word, and the Word was with God, and the Word was God."

रखा गया है। हिन्दूशास्त्रमें मक्का मन्दिर का उल्लेख है। मुहम्मद इस प्राचीन हिन्दूतीर्थ मन्दिर में मुसलमान छोड़कर (लिंगकाटा मनुष्य छोड़कर) दूसरे का प्रवेश बन्द कर दिया (सुरा वरायत आयात १७)।

क्रिस्तान और मुसलमान लोग इस समय उस प्रणवलिङ्ग या शब्द ब्रह्म से बहुत दूर चले गये, आज मुसलमान लोग यदि शब्द ब्रह्म को मानते हैं तो कुरान का दार्शनिकता को ये लोग विश्वास नहीं कर सकते हैं, और ये काफिर ही कहे जायेंगे।

आकाश के किसी स्थान में गाड या अल्ला अवस्थान करते हैं, पचास हजार वर्ष के बाद एक विचार का दिन आयेगा उस दिन सब मुसलमान और क्रिस्तान धार्मिकों का विचार होगा और उसके फलस्वरूप किसी को अनन्त स्वर्ग मिलेगा और किसी को अनन्त दोख मिलेगा। कुरान में मूर्ति पूजा समर्थन नहीं है। तब भी मुसलमान कावा की ओर मुंह करके नमाज पड़ते हैं। देखो सुरा २ आयात १४४। हमलोग निर्गुण ब्रह्म का उपासना करते हैं, और उस तत्व से जो मनुष्य दूर में हैं वे लोगों के लिए प्रेत-लोक में व्यवस्थात है, किसी को स्वर्ग, नरक, या प्रेत स्थान में भेजना या न भेजने का कोई सम्बन्ध ही ईश्वर से नहीं है। मनुष्य अपने कर्म के अनुसार सुखस्थान या दुखस्थान को प्राप्त करते हैं। हिन्दुओं के लिये असल ज्ञान मूलक ग्रन्थ उपनिषद् है। गीता में उसका संक्षेप उल्लेख है।

सर्व कर्माणि मनसा संन्यस्यान्ते सुखं वशी।

नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वत्र कारयन्॥ ५-१३॥ गीता॥

अर्थ – वशी (आत्मा) इस नवद्वाररूप शरीर में मनद्वारा समस्त कर्म से निवृत्त होकर सुख में अवस्थान करता है। (मन योग द्वारा जब वृत्तिहीन हो जाते हैं तो किसी प्रकार के कर्म में ही मन की लिप्तता नहीं रहता है।) न तो आत्मा करते न कराते हैं।

न कर्तृत्व न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।

न कर्मफल संयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते॥ ५-१४॥ गीता॥

अर्थ – प्रभु यानि ईश्वर या ब्रह्म किसी के लिए कर्तृत्व और कर्म फल को सृजन नहीं करते हैं। स्वभाविक नियम में कर्म प्रवर्तित हुआ करता है।

न दत्ते कस्यचित् पापं न चैत सुकृतं विभुः।

अज्ञानेना वृतं ज्ञानं तेन मुद्गयन्ति जन्तवः॥ ५-१५॥ गीता॥

अर्थ – विभु (व्यापक आत्मा) किसी का पाप नहीं ग्रहण करते हैं पुण्य भी ग्रहण नहीं करते। मनुष्य का मन अज्ञान द्वारा आवृत रहने के कारण मनुष्य मोहित रहता है (मूर्खता और बर्बरता को करते हैं)।

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।

तेषां आदित्य वद् ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्॥ ५-१६॥ गीता॥

अर्थ – जिसके अज्ञान आत्मज्ञान द्वारा विनष्ट हो जाता है उसका ज्ञान सूर्य के सदृश प्रकाशित हो जाते हैं। (अब तुमलोग देख रहे हो) ईश्वर को आकाश में कल्पना करना या मृत व्यक्ति के विचारक कल्पना करना माने हिन्दुओं के शास्त्र मत में अज्ञानता मात्र है।

कर्म धर्म, उपासना धर्म और ज्ञान धर्म तीनों धर्म से क्रिस्तान और मुसलमान लोग अपने वैदिक धर्म से छिन्न हो गये हैं। तुमलोग वेद प्रतिपादित कर्म, उपासना और ज्ञान धर्म का अनुशीलन करते हुए जीवन को अत्यन्त पवित्र बनाओ और प्रतिवेशी मुसलमान और क्रिस्तान धर्म का भी तत्व को और उनके स्वभाव को जानते हुए अपने को सावधान रखो। सर्व धर्म वादियों के मिथ्या वाद में विभ्रान्त नहीं होना चाहिए। पवित्र धर्म और आसुरिकता एक नहीं है।

एक धर्म में क्रमविकास वाद, जन्मान्तर वाद और अन्य में अनन्त स्वर्ग या अनन्त नरक वाद, एक धर्म में व्यापक ईश्वरत्व अन्य धर्म में आकाश के कोण में रहकर विचार करने का ईश्वरत्व कैसे एक हो सकता है? अगर इसका एक सत्य है तो दूसरा जरूर ही मिथ्या हो जायेगा।

क्रिस्तान पादरियों को अत्यन्त अन्याय रूप में हिन्दू धर्म पर आक्रमण करते हुए प्रचार करते देखा जाता है। उसके विषय में भी तुमलोग सावधान रहना। यथा –

पादरी – हम यदि तुम्हारे शिव ठाकुर को एक लाठी द्वारा मारे तो वह हमारा क्या कर सकता है?

उत्तर – यदि हम तुम्हारे गाड को हरामजादा कहें, या गाली दे तो वह हमारा क्या कर सकता है?

पादरी – गाड तुमको दोजख में फेकेगा।

उत्तर – शिव तुमको दूसरे जन्म में अपने त्रिशूल से खोंचा मारेंगे और तुमको एक कुष्ठ रोगी बनाकर हमारे सामने घुमाते रहेंगे।

तुमलोग मुखों की बातों में आत्म विश्वास से न हठ जाओ। मूर्ति योगविद्या और आत्मज्ञान की शिक्षा के लिए अत्यन्त प्रयोजनीय अवलम्बन है। जैसे कि बिना मानचित्र के भूगोल शिक्षा देना कठिन होता है, उसी तरह मूर्ति के अवलम्बन द्वारा ज्ञान और दार्शनिकता को समझाने में सुविधा होता है। तुमलोग पत्रिका में कार्टून देखे हो, छवि द्वारा सम्बाद प्रचार बहुत ही सहज होता है।

तुमलोग ब्रह्म स्तोत्रम् और गायत्री मन्त्र द्वारा निर्गुण ब्रह्म की उपासना और सगुण ब्रह्म उपासना, अवतार उपासना, देवता उपासना, पितृ उपासना, महापुरुष उपासना और अधिक क्या कहें प्रेत उपासना भी कर सकोगे। ज्ञान का अनेक स्तर है। और धीरे-धीरे सब अतिक्रम करना पड़ता है। सगुण ब्रह्म उपासना के लिए कुछ उपासना के मन्त्र

या स्तुति नीचे में दिये जा रहे हैं। वे सब मन्त्रों के द्वारा किसी प्रकार उपासना भी हो सकता है।

१. ॐ शान्ताकारं भुजंग शयनं पद्मनाभं सुरेशं।
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभागम्॥
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं।
वन्दे विषअणुं भव भय हरणं सर्व लोकैक नाथं॥

जो कि शान्त के आकार विशिष्ट हैं (अन्तः करण शान्त होने से जो सत्य उदभाषित होता है वही तत्व शान्ताकार तत्व है), सर्प (ब्रह्म नाड़ी) जिसका विछौना अर्थात् ब्रह्म नाड़ी में जो व्याप्त रूप में रहता है जिसके नाभी में पद्म है (योग के क्रिया विशेष द्वारा मन को नाभि स्थान में रक्खा जाय तो विष्णु स्तर की अनुभूति मिलता है), जो कि मेघवर्ण रूप है (मन स्थिर होने से मन नीलाकाश के तरह हो जाता है), मंगल ही जिसके अंग व प्रत्यंग है (जितने प्रकार के मंगल पूर्ण घटनायें हमारे सामने आती हैं सभी ईश्वर के अंग प्रत्यंग है। जो कि ऐश्वर्य के ईश्वर हैं, विष्णु स्तर में पूर्व-पूर्व जन्म का कर्मफल संचित रहता है। ईश्वर ध्यान के फलस्वरूप वे सब शुभ कर्म फल फलोन्मुख होता है।) जिन्होंने स्नेहमय दृष्टि में विश्व को देखते हैं। योगी जन ध्यान द्वारा जिसको लाभ कर सकते हैं। जो कि व्यापक ईश्वर है। जो कि जगत के भव-भय नाश करते हैं और समस्त जगत का जो एक मात्र ईश्वर है। हम उन्हीं को प्रणाम करते हैं।

२. ॐ वन्दे देवम् उमापतिम् सुरगुरुं वन्दे जगत् कारणं।
वन्दे पन्नग भूषणम् मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम्॥
वन्दे सूर्य शशांक वह्नि नयनं वन्दे मुकुन्द प्रियं।
वन्दे भक्त जनाश्रयञ्च वरदं वन्दे शिव शंकरम्॥

जो कि ॐकार रूपी स्वामी या ईश्वर है (उमा = उ + म + अ + अ = ओम्) उनको प्रणाम, जो कि विश्व जगत का बीज स्वरूप है और वीर लोगों के गुरुदेव है उनको प्रणाम, जो कि मृग को (काम वेग को) धारण करके अवस्थित है (अर्थात् पूर्ण ब्रह्मचारी) और जो कि सम्यक रूपी है अर्थात् पूर्णत्व प्राप्त किये हैं ऐसे जो ईश्वर (गुरु) है उनको प्रणाम (पाणिनी द्रष्टव्य, पशु = सम्यक)। सूर्य चन्द्र अग्नि जिसके नेत्र स्वरूप है जो कि ज्ञान दाता और जानियों के प्रिय हैं उनको प्रणाम। जो कि भक्तजनों के आश्रय हैं और स्नेहशील (गुरु) हैं उनको प्रणाम। जो मंगलमय और मंगल को देने वाले हैं, उनको प्रणाम।

३. स्थित्वा स्थाने सरोजे प्रणवमय मरुत् कुण्डले सूक्ष्ममार्गं।
शान्ते स्वान्त प्रलीने प्रकटित विभवे ज्योतिरूपे पराख्ये॥

लिंगं तद् ब्रह्मवाच्यं सकल तनुगतं शंकरम् न स्मरामि।
क्षन्तव्यं मे अपराधः शिव शिव शिव भोः श्रीमहादेव शम्भो॥

इसका अर्थ मूर्ति विज्ञान में देखो।

४. शुक्लाम् ब्रह्म-विचारसार-परमा माद्यां जगद्व्यापिनीम्।
वीणा पुस्तक धारिणीम् भयदां जादयान्धकारापहाम्।
हस्ते स्फटिक मालिकां विदधति पद्मासने संस्थिताम्।
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां सारदां॥

अर्थ - जो कि शुभ रूपा है जो कि ब्रह्म ज्ञान का श्रेष्ठ विग्रह है। जो कि सबसे श्रेष्ठ है जो कि आद्याशक्ति के रूपिणी हैं, जो कि विश्व व्यापिनी है जो कि वीणा और पुस्तक को धारण किये हुए हैं जो कि अभयदान करने वाली हैं (अर्थात् ज्ञानी को भय नहीं रहता), जड़ता (मूर्खता) रूप अन्धकार को जिन्होंने नाश करते हैं। जिसके हस्त में स्फटिक माला है (अर्थात् जिन्होंने अपने कर्म शक्ति द्वारा ज्ञान ही को प्रतिष्ठित करते हैं) जो पद्मासने में संस्थित है (अर्थात् जो ब्रह्म नाड़ी मध्यस्थित मस्तिष्क के मर्म स्थान में अवस्थान करते हैं) वही ज्ञानरूपा ज्ञानदायिनी भगवती और श्रेष्ठ ईश्वर को प्रणाम।

५. या कुन्देन्दु तुषार हार धवला या शुभ्र वस्त्रावृता।
या वीणा-वर-दण्ड मण्डितकरा या श्वेत पद्मासना॥
या ब्रह्माच्युत शंकरः प्रभृतिभिः देवैः सदा वन्दिता।
सा मांपातु भगवती सरस्वती निःशेष जाड्यापहा॥

अर्थ - जिन्होंने कुन्द पुष्प चन्द्रमा और बर्फ पर्वत माला सदृश धवला है जो कि शुभ्र वस्त्र द्वारा आवृत है (अर्थात् शान्ति का आवरण भेद होने के बाद ज्ञान लाभ होता है) जो कि श्वेत वीणा वरदण्ड हस्त में धारण किये हुए हैं जो कि श्वेत पद्म में अवस्थित है (मस्तिष्क के मर्म स्थल को श्वेत पद्म कहते हैं), जो कि ब्रह्मा, विष्णु, शंकर प्रभृति देवगण द्वारा सदा पूजनीय है। जो कि निःशेष रूप में अज्ञानता को नाश करने वाली है वे भगवती सरस्वती हमें पवित्र करे।

अवतार उपासना

ब्रह्म से आरम्भ होकर कीटादि पर्यन्त एवं साधारण मनुष्य से आरम्भ होकर उच्च स्तर के महापुरुष पर्यन्त समस्त जीव में एक ही आत्मा विद्यमान है। किन्तु सबका ज्ञान बराबर नहीं है। कोई कम ज्ञानी एवं कोई अधिक ज्ञानी है। ज्ञान के इस भाग को हिन्दू शास्त्र में कला कहा जाता है। तुम लोग सुने होगे कि श्री कृष्ण १६ कलाओं के महात्मा थे। इस कला को पूर्ण कला कहा जाता है। किस जीव में किस प्रकार का कला

विद्यमान है इस सम्बन्ध में तुम लोगों को जानना जरूरी है। जीवों का ज्ञान जब अष्टम कला को अतिक्रम करके नवम् कला में पहुँच जाता है या नवम् कला से उर्ध्व कला में विकसित होता है तब उसको अवतार कला कहा जाता है। प्रत्येक जीवों के कर्म में चरित्र में एवं ज्ञान में अपने-अपने विकास अनुरूप चरित्र प्रतिफलित होता है। यह सब चरित्र विश्लेषण करने की शिक्षा प्राप्त करने पर तुम लोग किसी भी मनुष्य को पहचानने में सफल होंगे एवं अपना चरित्र सुन्दर एवं कर्ममय कर सकोगे।

बहुतों को यह धारणा है कि ईश्वर का कहीं घर दुआर है। वहाँ से वे अवतार या महापुरुष भेजते हैं। यह धारणा भ्रान्तिमूलक है। तुम लोग जान लो कि ईश्वर तत्व व्यापक है। उनके सम्बन्ध में हमलोग जितना उच्च स्तर का ज्ञान एवं कर्मशक्ति लाभ करते हैं, हम उतना ही उच्च स्तर का महापुरुष होते हैं। उच्च स्तर का ज्ञान एवं कर्म शक्ति ही मनुष्य को महापुरुष या अवतार में परिणत करता है। अवतार चरित्र का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि वे किसी न किसी प्रकार के आसुरिकता का उच्छेद करके जाते हैं। वर्तमान काल में हमारे देश के लोगों को अवतार के सम्बन्ध में धारणा ही नष्ट हो चुकी है। वे लोग षष्ठ कला के महापुरुषों को भी अवतार मानते हैं। इस प्रकार के भ्रान्त धारणा हमारे समाज में होने के कारण हमारा समाज वर्तमान में अत्यन्त दुर्बल हो गया है। तुम लोग अवतार कला के सम्बन्ध में भ्रान्त धारणा अवश्य ही त्याग करोगे।

१ कला में उद्भिद सृष्टि। २ स्वेदज, ३ अण्डज, ४ जरायुज। चारों से सामान्य अधिक होने पर ही मनुष्य रूप में जन्म होता है। इस सम्बन्ध में 'क्रम विकास' 'शक्तिवाद' 'शक्तिशाली समाज' पुस्तक व ग्रन्थ में बिस्तारित रूप से आलोचना किया गया है। यहाँ पर संक्षेप में कहा जा रहा है।

४ कला का साधारण मनुष्य होता है। ये लोग सरल धर्म में विश्वासी, प्रेत उपासक, थोड़ा भी बुद्धिमान नहीं हैं। मजुर, दफ्तरी, चपरासी, पुजारी, रसोइयाँ, चायवाला, साधारण होटलवाला, जमादार, प्रेसकम्पोजिटर प्रभृति में इस कला के विकाश हैं। इन लोगों को निम्न स्तर के शिव विकाश जानोगे।

५ वे कला के विकाश में गणेश लक्षणयुक्त मनुष्य होते हैं। विशेष लक्षण है "कठोर प्रकृति"। अन्याय विरोधी, त्यागी प्रकृति, युद्धप्रिय, उदारमनोवृत्ति सम्पन्न, और थोड़ा जीदी, चरित्रवान, स्वदेशप्रेमी, कठोर सहिष्णु, न्यायनिष्ठ, दृढ़भाषी, साहसी, जड़विज्ञान में निष्ठा सम्पन्न, और अन्ध विश्वास विरोधी होते हैं। उन्नत चरित्र आयत्त करने में ५वे कला का लक्षण बहुत सहायक होता है। विचारक, औभारसियार, इंजिनियर, वैज्ञानिक, युवकनेता प्रभृति क्षेत्र में इस स्तर के मनुष्य अधिक पाये जाते हैं।

६ कला के विकास में सूर्य लक्षण युक्त मनुष्य होते हैं। विशेष लक्षण कोमल प्रकृति के हैं। स्त्री प्रकृति, कृपण, स्वभाव हिसावी, मेधावी, यशस्वी, विश्वासवादी,

भाबप्रवण होते हैं। दो विरुद्ध मतवाद के बीच में पड़ने पर समाज का सर्वनाश करके भी ये दोनों के प्रिय होने की चेष्टा करते हैं। आदर्शवादी। लड़कियों में इस कला का विकाश होने पर वे दानशिला होती है। इसके जगत गुरु कला भी कहते हैं। शिक्षक, धर्म प्रचारक, कवि, भावुक, भाववादी, सर्वधर्म समन्वयवादी, सेवाश्रमी, अहिंसावादी, क्लर्क एवं ज्योतिषीगणों में इस स्तर के मनुष्य पाये जाते हैं। इस स्तर के भली प्रकार विकसितगण ही जगतगुरु का स्थान प्राप्त करते हैं।

७ वे कला से आसुरिक विकास होता है। दैव विकास सम्पन्न सातवाँ कला एवं आसुरिक विकास सम्पन्न सातवाँ कला में चरित्रगत भेद है। आसुरिकगण निष्ठूर हृदय, उत्पीड़क, शोषक एवं सुविधावादी होते हैं। दैविक सातकला कोमल हृदय, समाज हितैषी, वीर, दाता, उदार चरित्र के होते हैं। राजा, जमिदार, व्यवसायी, शासनकर्ता, राजप्रतिनिधि, पुलिस कर्मचारी प्रभृति में इस कला के चरित्र पाये जाते हैं।

७ वाँ कला के विकास में आंशिक मानसिक लक्षण किन्तु ४¼ [चार और एक चौथाई] या ६ वाँ कला के तरह स्वभाव वाले एक स्तर का मनुष्य पाया जाता है। इन लोगों को तुमलोग अपुष्ट कला या कुविष्णु विकास जानोगे। ये लोग अत्यन्त नीच प्रकृति के मनुष्य होते हैं। ये समाज का अत्यन्त क्षति करते हैं। निर्लज्ज, झूठे, चाटुकार, अत्यन्त स्वार्थी, चोर गुण्डा होते हैं। ये लोग इतने निर्लज्ज होते हैं कि एक-एक घण्टे में नये-नये झुठ बोलते हैं। वर्तमान युग में राजनीतिक क्षेत्र में, अदार्शनिक विश्वासवादी धर्म के आड़ में एवं निम्नतम पुलिस में इस स्तर के मनुष्य बहुत देखने को मिलते हैं।

८ वाँ कला के विकास को उन्नत शिवस्तर का विकाश कहते हैं। यह ऋषि कला है। त्यागी, योगी, साधक, तपस्वीगणों के बीच में इस स्तर के लोग पाये जाते हैं। इस स्तर का विकास आजकल बहुत कम होता है। ये लोग ७ वे कला से भी बुद्धिमान हैं। किन्तु सब प्रकार के बुद्धि होने पर भी ये इसका प्रयोग नहीं करते हैं। सरल, उदार, त्यागी एवं प्राकृतिक जीवन प्रिय होते हैं।

९ वां कला के अवतार कला और ४¼, ५, ६, ७ कर्मी कला एवं ८ को ज्ञान कला जानो। इस ज्ञान-कला को अतिक्रम करने पर जीवत्व का मोह, सम्प्रदाय का मोह टूट जाता है। एवं समाज प्रेम के स्वाभाविक कर्तव्य में उदबुद्ध होकर आसुरिकता एवं बर्बरता को तोड़ने का कर्म करते हैं। ज्ञान कला का स्वाभाविक लक्षण योग, ध्यान, तपस्या, त्याग प्रधान जीवन एवं सीधा कर्म क्षेत्र में उतर कर कर्म करना नहीं चाहते हैं बल्कि कर्मियों को परामर्श देते हैं। किन्तु अवतार कला प्रत्यक्ष कर्म करते हैं एवं आसुरिकगणों को नाश करते हैं। ५×२ = १०। ६×२ = १२। ७×२ = १४। अर्थात् गणेश कला का चरित्र होने पर ९ वें एवं १० वें कला के अवतार होते हैं। सूर्यकला का अवतार ११ एवं १२ कला का अवतार। विष्णु कला का अवतार = १३ एवं १४ कला का अवतार। यह ही ठीक ठीक

अवतार लक्षण हैं। प्रत्येक अवतार कला में ५, ६, ७ कला का लक्षण यथेष्ट रहता है। लेकिन अधिक प्रधानता की भित्ति पर कम या बेशी मान्य है। श्रीरामचन्द्र में ६ एवं ७ वाँ कला का वैशिष्ट्य देखा जाता है। श्रीबुद्ध में ७ एवं ८ वाँ कला का विशेषता पाया जाता है। श्रीकृष्ण का चरित्र और भी उन्नत है। लेनिन में ५ कला का वैशिष्ट्य प्रधान। लेकिन उनके कर्मविज्ञान बहुत कम कला का होने के कारण वह एक आसुरिकता को तोड़कर और एक की स्थापना करवाए हैं। श्रीराम में ६ कला की दुर्बलता होने के कारण उनके द्वारा पौरोहित्यवाद को प्रश्रय मिला है। श्रीबुद्ध पौरोहित्यवाद को तोड़ दिए थे, किन्तु वेद को पकड़ने में असमर्थ हुए। फलस्वरूप एक शक्तिशाली ज्ञान का भण्डार पूजारियों के हाथ में रह गया। ८ वाँ कला शान्ति प्रधान कला। ७ वाँ से ८ वाँ कला श्रेष्ठ है। इसलिए बौद्धवादी लोग शान्ति में झुक गये थे एवं दुर्बल भी हो गये थे। श्रीराम में ६ कला का प्रभाव होने के कारण इनमें डेमोक्रेसी अधिक थी।

आजकल हमारे समाज में भाववादी महात्मागणों को अवतार कहने का रिवाज देखा जाता है। इस प्रकार के मनुष्य को अवतार मानना हमारे जातीय जीवन के अधःपतन का लक्षण है। लेकिन यह सत्य है कि अनेक महात्मा हैं जो जगतगुरु कला के महात्मा (षष्ठ कला) हैं।

श्री कृष्ण - श्री कृष्ण १६ कला के महा पुरुष थे। ये अवतार कला अतिक्रम किये थे। भागवत में श्रीकृष्ण का बाल्य लीला का अनेक कथा भक्तिवाद और भक्ति साधना के सुविधा के लिये सजाया गया है। उनमें से अनेक बातों का कोई वास्तविक भित्ति नहीं है। कृष्ण को तुमलोग महाभारत में खोजो। वे कुरुक्षेत्र में अपने जीवन का श्रेष्ठ प्रतिभा का प्रकाश किये थे। इस प्रकार के श्रेष्ठ पुरुष पृथ्वी पर और जन्म नहीं लिये हैं। गीता इसी महापुरुष की वाणी है। ये भाद्र कृष्णाष्टमी में जन्म ग्रहण किये थे। समस्त भारत कि हिन्दू मात्र ही जन्माष्टमी उत्सव को अत्यन्त श्रद्धा के सहित अनुष्ठान किया करते हैं। कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र में ये अपने प्रिय शिष्य अर्जुन के निकट विश्वरूप धारण किये थे। ये वेद प्रतिपाद्य कर्म अर्थात् आसुरिकता का उच्छेद, शक्ति उपासना या ब्रह्मोपासना एवं ज्ञान के विभिन्न स्तर के दार्शनिकता का समस्त रहस्य गीता में उद्घाटित किये हैं। तुमलोग श्रीकृष्ण के पार्थसारथी के रूप को ही चिन्ता करो। आज गीता पृथ्वी का सर्वश्रेष्ठ धर्मग्रन्थ है। श्रीकृष्ण हमारे सर्वश्रेष्ठ गुरु हैं। गीता को श्रेष्ठ ग्रन्थ मानने पर समस्त अहिन्दू धर्म मिथ्या एवं काल्पनिक धर्म में परिणत हो जाता है। मुखों की मुखता एवं बर्बरों की बर्बरता आज भी धर्म के नाम पर चलता है एवं गीता की तरह ग्रन्थ एवं श्री कृष्ण के तरह गुरु होने पर भी हमलोग पराधीन हैं। इस पृथ्वी में यह एक विस्मयकर घटना है। असल में पौरोहित्यवादी एवं भाववादी टीकाकारगण हमारे जातीय जीवन का मेरुदण्ड को तोड़ दिए हैं। तुमलोग शक्तिवाद भाष्य गीता की आलोचना करोगे। भागवत

में कृष्ण का कल्पित जीवनी है। महाभारत में उनका असली जीवनी है। महाभारत हमारे जातीय जीवन का श्रेष्ठ ग्रन्थ है।

श्री राम – ये १३ से १४ कला के विकशित थे। मूल रामायण में इस महापुरुष का जीवन चरित्र पाठ करना कर्तव्य है। श्री कृष्ण की तुलना में इस महापुरुष के जीवन में अनेक दुर्बलता थी। ये हमारे समाज जीवन के अतीव प्रिय एवं पूजनीय महात्मा हैं। चैत राम नवमी में इस महापुरुष का जन्म उत्सव हुआ करता है। ये रावणवध करके नारी निर्यातन एवं राक्षस वाद (शोषण वाद) का ध्वंस किये थे। सत्य युग के इन्द्रादि नेताओं की तरह ये भी आश्विन महीने में महाशक्ति की उपासना करके राक्षस वाद को नाश करने का शक्ति अर्जन किये थे।

तुमलोग भी आसुरिकता, बर्बरता, नारी निर्यातन एवं शोषण वाद को ध्वंस करने के लिए महाशक्ति के उपासना में संघबद्ध होंगे। गायत्री उपासना महाशक्ति ही का नित्य कर्तव्य उपासना है।

श्री बुद्ध – ये १४ से १५ कला में विकशित थे। १५ वाँ कला में विकशित विकास होने के कारण बौद्ध धर्म थोड़ा शान्ति प्रधान धर्म की ओर झुकने की चेष्टा करता था।

मनुष्य के चरित्र बल को भित्ति करके समाज से बर्बरता और गुण्डाबाजी का वहिष्कार के आदर्श स्थापना में ये सफल हुए थे। ये हमारे समाज में सबसे निकटतम अवतार है। २५०० वर्ष पूर्व इस महात्मा का जन्म हुआ था। इनके जन्म के पश्चात् हमारे देश में और अवतार कला का के महापुरुष का जन्म नहीं हुआ है। यदि तुम कभी प्रयाग या काशीतीर्थ में जाओगे तो देखोगे कि पूजारी संकल्प मन्त्र में कह रहे हैं कि – “विष्णु रों तत्सत् अद्य वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंश श्री बुद्धावतारे...इत्यादि”। अर्थात् इसके द्वारा तुम देखते हो कि बौद्धावतार का युग चल रहा है। श्री कल्की के पूर्व पर्यन्त समस्त युग ही बुद्ध अवतार का युग है। ये पौरोहित्य वाद एवं अछूत वाद को तोड़कर एक सुन्दर साम्य समाज का भित्ति दान कर गये हैं। ये उपनिषद का ज्ञान एवं आदर्शमय जीवन को अति सहज पन्था में समाज के सामने उपस्थित कर गये हैं। वह अब “पंचशील” एवं “दशशील” के अनुशीलन के नाम से परिचित है। परवर्ती काल में आचार्य शंकर द्वारा प्रवर्तित ब्राह्मण्य वाद की आड़ में पौरोहित्य वाद पुनः उदित हुआ था किन्तु आज भी पौरोहित्य वाद और अछूतवाद को तोड़ने के अनुकूल में जनमत का अभाव नहीं है। तुम लोग बौद्ध हिन्दूओं की भाँति वेद को भित्ति न करने की भूल मत करना। वेद ही हमारे समाज जीवन का प्रधान भित्ति है। तुमलोग वैदिक कृष्टि का यथेष्ट चर्चा वृद्धि करोगे। वैशाख महीने के पूर्णिमा में बुद्धदेव जन्म ग्रहण किये थे। उस दिन समस्त भारत एवं पृथ्वी में धर्म पूर्णिमा प्रतिपालित हुआ करता है।

तुमलोग आनन्द के सहित बुद्ध उत्सव सम्पन्न करोगे। कारण ये ही युग के अवतार हैं। हमारे देश के असहयोग आन्दोलन के समय एक आश्चर्य भ्रान्ति जातीय नेताओं के कार्य में प्रकाश होने लगा। नेतागण उस समय गया के बुद्ध मन्दिर को बौद्ध हिन्दुओं के हाथ में देने का आन्दोलन करने लगे। इस घटना से हिन्दुओं को विशेष आघात पहुँचाने में नेतालोग थोड़ा भी नहीं हिचकते थे। नेताओं का जीवन एवं शिक्षा-दीक्षा पाश्चात्य आदर्श में गठित होने के कारण वे लोग हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में यथेष्ट अज्ञता दिखलाये हैं। इन लोगों के अनेक कार्यों में हिन्दू धर्म एवं न्यायधर्म के विपरीत आचरण प्रस्फुटित होने लगा। गया के बुद्ध मन्दिर विदेशी बौद्धों के हाथ में सौंपने का आन्दोलन उनमें अन्यतम है। नेताजी सुभाष प्रवर्तित आजाद हिन्द वाहिनी के कार्य कलाप वृद्धि होने पर दुर्बलनेताओं की चिन्तावृत्ति सामयिक शोधित हुआ। यह हमारे जातीय जीवन का शुभ लक्षण है। तुमलोग जानोगे कि श्री बुद्ध हमारे १० अवतारों में अन्यतम हैं। वे श्री राम एवं श्री कृष्ण से थोड़ा भी कम पूज्य या कम प्रिय नहीं हैं। राम का धर्म जिस प्रकार हिन्दू धर्म है उसी प्रकार बुद्ध का धर्म भी हिन्दुओं का धर्म है। प्रधान अवतारों के विषय में कहना समाप्त हुआ। तुमलोग ब्रह्म स्तोत्र में एवं गायत्री मन्त्र में अवतार उपासना का उपसंहार करना। कारण ब्रह्मज्ञानियों के बीचमें यह सब अवतार कला के महात्मागण एक ही प्रकार के कर्मों एवं ज्ञान के आदर्श विग्रह हैं। ये लोग ब्रह्मकर्मों एवं ब्रह्मज्ञानी हैं। इन लोगों के चरित्र आलोचना भी ब्रह्मज्ञान एवं ब्रह्मकर्म के सहायक हैं। ब्रह्मज्ञान का कथा शास्त्र मात्र में ही है किन्तु ब्रह्मज्ञानियों का स्वभाव हम अवतार चरित्र में प्रत्यक्ष करते हैं। राम के चरित्र में सात कला का दैवीभाव अधिक था। बुद्ध के चरित्र में आठ कला का ऋषिज्ञान एवं योगीज्ञान अत्यन्त आश्चर्य रूप में प्रस्फुटित हुआ था। श्री कृष्ण के चरित्र में शक्तिस्तर के १६ कला कर्म प्रतिभा स्थान पाया था। राम राजाधीश, बुद्ध योगीश्वर, कृष्ण पुरुषोत्तम या ईश्वर तुल्य प्रतिभा सम्पन्न हैं। राम हिन्दुओं के समाज जीवन का हृदय केन्द्र, बुद्ध हिन्दुओं के समाज जीवन का शिवपिण्ड और कृष्ण हमारे समाज जीवन का ब्रह्मनाडी स्वरूप हैं। इस पृथ्वी पर यह तीन चरित्र आश्चर्य सृष्टि।

राम, बुद्ध और कृष्ण को केन्द्र करके इस पृथ्वी पर जितने लोग धर्मानुष्ठान करते हैं उन लोगों की संख्या इस पृथ्वी पर जितने मनुष्य हैं उन लोगों के आधा से भी अधिक है। शीघ्र ही पृथ्वी पर ऐसा दिन आयगा जब बौद्धवाद और गीता का धर्म समस्त मनुष्य के चिन्ता का विषय होगा और समस्त अहिन्दू धर्म का दार्शनिकता 'मिथ्या' कहकर तिरस्कृत होगा। अहिन्दू लोग अपने धर्म के दार्शनिकता को प्रकाश करने में लज्जा बोध करेंगे एवं हिन्दू दार्शनिकता का नकल करके झुठा आदमी या काफेर होने में लज्जाबोध नहीं करेंगे।

श्री कृष्ण श्री राम एवं श्री बुद्ध हमारे देश में सच्चिदानन्द विग्रह के रूप में पूजित हुआ करता हैं। सत् चित् एवं आनन्द (अद्वैत ब्रह्म ही आनन्द है)। सब ही ब्रह्मस्तोत्र में विद्यमान है। इसलिए अवतार उपासना तुमलोग ब्रह्मस्तोत्र में ही करोगे।

तुमलोग श्री कृष्ण, श्री राम, श्री बुद्ध को ब्रह्मनाड़ी के रूप में ही जानोगे। समस्त भक्तिशास्त्र में इनलोगों को सच्चिदानन्द विग्रह कहा गया है। अर्थात् ब्रह्मस्तोत्र ही का ब्रह्मरूप कहा गया है। श्री कृष्ण गीता में भी कहे हैं कि वे समस्त जीवों के हृदयस्थित आत्मा या ब्रह्मनाड़ी में अवस्थित ब्रह्म हैं।

यथा - अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।

अहमादिश्च मध्यञ्च भूतानामन्त एव च॥

हे अर्जुन, हम समस्त जीवों के आदि मध्य अन्त में अवस्थित 'आत्मा' हैं। हम समस्त भूतों का आदि, मध्य और अन्त स्वरूप हैं।

अब तुमलोगों के निकट महापुरुषों के उपासना के विषय में कहा जा रहा है।

महापुरुष उपासना

हमारा समाज अत्यन्त प्राचीन हैं। इसी कारण हमारे देश में जो महापुरुष हो गये हैं उनकी संख्या अत्यन्त अधिक हैं। उनकी संख्या इतनी अधिक है कि केवल नाम लेने से ही इस पुस्तक के बराबर एक छोटी सी पुस्तक बन जायेगी। हम यँहा कुछ महापुरुषों का नाम कहेंगे। इनलोगों में कोई ज्ञानशक्ति प्रधान थे एवं कोई-कोई कर्मशक्ति प्रधान थे। हमारे देश के मध्ययुग में अनेक भाववादी महात्मा भी हो गये थे।

स्वयंभूव मनु, सप्तऋषि (यथा कास्यप, अत्रि, गौतम, भरद्वाज, जमदग्नि, विश्वामित्र, वशिष्ट), ४ कौमार्य व्रतधारी ऋषि (सनक, सनन्दन, सनातन एवं सनत कुमार), व्यास, जौमिनी, गौतम, पाणिनी, पतंजली, कपिल, महाराज हरिश्चन्द्र, भरत, लक्ष्मण, महावीर हनुमान, महाराज शिवी, ययाति, भीष्म, कर्ण, अर्जुन, गुरु गोविन्द, प्रतापसिंह, शिवाजी, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द प्रभृति। इनलोगों के प्रत्येक के जीवन से हम अति सामान्य कथन या बात में वृहत-वृहत रत्न संग्रह करेंगे। हमारे देश में दुर्बल स्तर का चिन्तन एवं कर्म में विश्वासी अनेक महात्मा हो गये हैं। हमें उनलोगों के जीवन की आलोचना करने की जरूरत नहीं समझते। लेकिन हम उन महात्माओं के अश्रद्धा भी नहीं करते हैं।

स्वयम्भूव मनु – ये हमारे हिन्दू समाज के प्रथम प्रवर्तक थे। ये इस समाज को एक शक्तिशाली दृढ़ भित्ति में स्थापना किये थे। इस समाज के ऊपर से विभिन्न युग में विभिन्न प्रकार का उत्थान-पतन हुआ है इसमें कोई सन्देह नहीं है, किन्तु सौ विप्लवों में

से गुजर कर भी यह समाज आज भी जिन्दा है। अनुपयुक्त निर्देशकों के अदूरदर्शिता, पूजारियों के स्वार्थपरता एवं दुर्बलस्तर के नेता एवं साधुओं का भावधर्म के प्राबल्य के कारण आज भी हमें अनेक दुर्दशा सहन करना पड़ता है। शीघ्र ही एक दिन ऐसा आनेवाला है जिस दिन इस समाज का एख शक्तिशाली संस्कार होगा। कारण स्वयम्भूव मनु का शक्तिशाली चिन्तन अभी तक लुप्त नहीं हुआ है। स्वयंभूव १४ मनुओं में प्रथम मनु है। १४ मनुओं का मन्वन्तर होने के बाद एक महाप्रलय होगा। अभी सावर्णि मनु का मन्वन्तर चल रहा है। तुम पुराण में यह सब जान सकोगे।

हमारे देश के समाज संस्कारकों की चिन्ताधारा एवं पश्चिमी चिन्ताधारा एवं कर्म धारा सम्पूर्ण रूप में भिन्न है। पश्चिमी डेमोक्रेसी, सोसियालिजम (कमिउनिजम) एवं फैसिजम् का नाम तुम लोग सुने होगे। ये सब शासन व्यवस्था स्वार्थपरता एवं विद्वेष वाद प्रधान होने जा रहा है।

१०० वर्ष के अन्दर ही डेमोक्रेसी का यौवन काल समाप्त हो गया है। इसके बाद सोसियालिजम् का जन्म हुआ। इस सोसियालिजम् को भी शीघ्र ही वृद्धावस्था को ग्रहण करना पड़ेगा। फैसिजम् इन दोनों से थोड़ा यथार्थ वादी होते हुए भी यह आसुरिक विधान पर आधारित है। यह सब आसुरिक विधान होने के कारण प्रत्येक की आयु बहुत कम है। कोई भी समाज एवं संगठन अगर बर्बरता विद्वेष एवं अत्याचार को केन्द्र करेगा तो उसका फल अच्छा नहीं होता है। कभी भी आसुरिक समाज व्यवस्था अधिक दिन तक स्थायी नहीं होता। स्वयंभूव प्रवर्तित हिन्दू समाज का इतना दीर्घकाल स्थायी होने का यही कारण है कि इसका जड़ शक्तिशाली युक्तिवाद पर प्रतिष्ठित है।

आज जो यह दुर्दशाग्रस्त है इसका कारण इसमें पौरोहित्य वाद एवं भाववाद की आवर्जना जम गई है। इसका संस्कार होने से यह एक अप्रतिद्वन्द्वी शक्तिशाली समाज के रूप में परिणत होगा। तुमलोग इसके आवश्यक संस्कार में सहयोगी होना।

सप्त ऋषि – तुमलोग गीता पाठ करने से देखोगे कि –

महर्षयः सप्तपूर्वे चत्वारो मनव स्तथा।

मद्भावामानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः॥ १०-६॥

अर्थात् सात ऋषि और चार मनु ये लोग आत्मा के मानस सृष्टि एवं सभी प्रजा इन ऋषि एवं मनुओं का सन्तान है। तुम लोग पितृ पक्ष में गंगा अथवा जलाशय के किनारे में पितृ पुरुषों के उद्देश्य में तर्पण करते हुए देखे होगे। महालया के पूर्ववर्ती एक पक्ष काल को पितृपक्ष कहा जाता है। इस पक्ष के ९ वीं को मातृ नवमी कहा जाता है। यह मातृ पूजा का दिन है। पूर्व पुरुषों को स्मरण करने के लिये पितृपक्ष का त्यौहार मनाया जाता है। तुमलोग याद रखोगे कि हमारा समाज जीवन अमर है। हमलोगों की आत्मा एवं अध्यात्म जीवन भी अमर है। हमारा शरीर अधिक दिन तक नहीं रहता। ये

साधारणत १०० वर्ष के अन्दर नष्ट हो जाता है एवं अनुपरमाणु में मिल जाता है। हम यदि इस सामान्य दिन के जीवन के सम्बन्ध में अधिक सोचे और समाज जीवन को ग्राह्य न करे तो ज्ञानीजन हमें मूर्खों एवं स्वार्थी कहकर तिरस्कार करेंगे। समाज किस विज्ञान से सृष्ट हुआ है एवं किस प्रकार का सुन्दर एवं सदा सत्य विज्ञान पर आज भी खड़ा हुआ है यह समझने के लिए सब बातें तर्पण में हैं। एक दार्शनिक ज्ञानी अनेक गवेषणा एवं विद्याचर्चा द्वारा जो ज्ञान को प्राप्त करते हैं सभी बातें तर्पण में पाया जाता है।

ब्रह्म से यह विश्व संसार एवं तुम हम सभी उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्मा से सीधा कोई सृष्टि नहीं होता। सृष्टि होने का कुछ नियम है। इसके लिए ब्रह्मस्तर (शक्तिस्तर), इसके बाद रुद्रस्तर (शिवस्तर), इसके बाद विष्णुस्तर (या हिरण्य गर्भ), इसके बाद प्रजापति (व्यापक मन), इसके बाद मानसपुत्र सप्तऋषि, मनुगण एवं उनलोगों से हमारे पूर्व पुरुषगण सृष्ट होने के बाद हमलोग सृष्ट हुए हैं। हमलोगों का समाज मक्कावाद, साम्राज्यवाद एवं कम्युनिष्ट वालों की तरह झगड़ा करने या बर्बरता करने का समाज नहीं है। हमारा समाज एकदल सज्जन मनुष्य को काफेर या विधर्मी कल्पना करके उनलोगों के ऊपर अत्याचार करने का भी समाज नहीं है। हमारा समाज ब्रह्मस्तर से आरम्भ होकर इस स्थूल विश्व में जितने भी जीव हैं सभी के समष्टि एवं इस समष्टि विश्वब्रह्माण्ड के सबके ऊपर जो कर्तव्य एवं समाजबोधक नियम वही हमारा समाज है। समाज गठन के लिए ऐसा महान विज्ञान एवं महान आदर्श और कुछ नहीं हो सकता। पूजारीवाद एवं भाववाद देखकर विचलित मत होना। भुलभ्रांति सब मनुष्य से ही हो सकता है एवं मनुष्य ही फिरसे उसका संशोधन करता है। ऐसा अमर एवं सदासत्य समाज में जन्म लेकर हम धन्य हैं। इस सदासत्य समाज को उपेक्षा करने के लिए जो भ्रांत एवं परिकल्पित समाज में जन्म ग्रहण किया है उनलोगों की भ्रांति एक दिन नष्ट हो जायगी। २००० वर्ष पूर्व के पूर्व जिस समाज का अस्तित्व नहीं था, १४०० वर्ष पूर्व जिस समाज का अस्तित्व नहीं था वह समाज सौ वर्ष के अन्दर विलुप्त नहीं होगा ऐसा कौन जोर देकर कह सकता? जानोगे कि जिसका आरम्भ है उसका अन्त भी है। परन्तु जिसका आरम्भ अनन्त ब्रह्म से है उसका अन्त अनन्त ब्रह्म में होगा। अर्थात् वह समाज ब्रह्म की तरह ही अनादि एवं अनन्त हैं। जो भी हो ब्रह्म, रुद्र, विष्णु, प्रजापति (ब्रह्मा), सप्तऋषि, पितृपुरुष, मातृपुरुष, वान्धव, अवान्धव, महापुरुष. गन्धर्व, वनस्पति एवं विश्वजगत् के सबके उपर हमारा कर्तव्य एवं एक समाजबोध को जाग्रत करने के लिए तर्पण (तृप्ति विधान) यज्ञ अनुष्ठित होता है।

सोच के देखो कि हमारा जीवन केवल मनुष्य समाज को लेकर ही नहीं, ऐसा व्यापक बोधक समाज इस पृथ्वी में और कहीं नहीं हुआ और होगा भी नहीं। ऐसा व्यापक

समाज बोधक समाजविज्ञान गठित होने पर भी तुमलोग आश्चर्य हो जाओगे कि हिन्दू समाज के कोई भी महात्मा आसुरिक नीति में निर्देशित समाज को सहन करने का निर्देश नहीं दिया है। कारण वे ही समाज जीवन का शत्रु हैं। वे कल्पित धर्म, काल्पतिक समाज, काल्पनिक राष्ट्र का गठन करके समाज जीवन के सुख को नष्ट करते हैं।

वृत्ति एवं कर्म व्यवस्था में वर्णभेद होने पर भी हमारे समाज में पितृपक्ष में सब एकत्रित होकर पितृ तर्पण या पितृ उपासना करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जानते हैं कि उनका गोत्र क्या है। एवं देखा जाता है कि कोई न कोई ऋषि से उनके वंश का उद्भव हुआ है। वे केवल हमारे पिता ही नहीं बल्कि वे हमारे गुरु, शिक्षक एवं हमारे समाज व धर्म के प्रवर्तक भी हैं। वे सभी तपस्वी, ज्ञानी, त्यागी एवं योगी थे। वे हमारे देश के अनुपरमाणु को पवित्र करके देश को अत्यन्त प्रिय एवं पूज्य कर दिये हैं। वे धर्म को, समाज को, देश को कितना प्यार करते थे एवं उनका धर्म किस प्रकार का न्यायपरायणता पर प्रतिष्ठित था यह हम शास्त्र का पाठ करने से जान सकते हैं। वेद ऋषियों का तपस्या लब्ध ज्ञान एवं अनुभूतियों का संग्रह ग्रन्थ है। आत्मा ही जीवमात्र का अमर सत्ता है, यह भी ऋषियों ने अनुभव किया था। ऋषि, वेद एवं आत्मा को उपलक्ष करके ही हमारा समाज अनन्तकाल से खड़ा है एवं अनन्तकाल तक उच्च शिखर में खड़ा रहेगा।

बहुत लोग, समाज के प्रत्येक शाखा में अन्नचलन के प्रचलित न होने को समाज जीवन का विशेष आवर्जना समझते हैं। तुमलोग यह सब लेकर कभी हल्ला मत करो। उच्च वैज्ञानिक वैदिक आचार धर्म सब शाखा में विकसित कराना पड़ेगा। बहुत दिनों से वंशगत से आचारधर्म का अनुशीलन के कारण, समाज के प्रत्येक शाखा में एक ही आचार एवं नियम प्रवर्तित नहीं हुआ है। इसलिए अन्नचलन एवं विवाह नियम को किसी भी प्रकार से व्यापक करना सम्भव नहीं है। किसी के भी विचार योग्य धर्मसंस्कार के विरुद्ध किसी भी नियम को तोड़ना या अन्न ग्रहण में वाध्य करना 'बर्बरता' ही है। धर्मस्थान एवं मन्दिर में छूआछूत मार्ग को कानून बनाकर बन्द कर देना चाहिये। लाख-लाख वर्ष के अनुष्ठित समाजधर्म के उच्च वैशिष्ट्य को हम किसी भी प्रकार से अश्रद्धा नहीं कर सकते, बल्कि हम उन्हें श्रद्धा ही करेंगे। हम जानते हैं कि सृष्टि के क्रम में ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु, प्रजापति विद्यमान है। बाद में सप्तऋषि एवं चार मनु को केन्द्र करके मानव का सृष्टि हुआ है। बर्बर होकर समाज तोड़ना अथवा समाज गठन करना हम समर्थन नहीं करते।

सृष्टि के इस नियम के सम्बन्ध में पौरोहित्यवादियों ने भ्रान्त निर्देश दिये हैं।

ॐ ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्वाहु राजन्यःकृतः।

उरूतदस्य यद्वैश्यः पदत्यां ॐ शूद्रोऽजायत॥

यजुर्वेद॥ पुरुषसूक्तम्॥

अर्थात् ब्राह्मण (ब्रह्मज्ञानी) उनके मुख स्वरूप, क्षत्रिय (योद्धा व शासक) उनके वाहुस्वरूप, वैश्य (व्यापारी, पशुपालक व कृषकगण) उनके जंघा स्वरूप, शूद्र (मजदूर श्रेणी) उनके पद से सृष्टि हुआ है।

भ्रान्त व्याख्या करने वालों का कथन है – हाँ यह सत्य है कि एक ही परमात्मा से सब श्रेणी के मानव की सृष्टि हुई है। परन्तु सब एक ही अंग से उत्पन्न नहीं हुए हैं। इसलिए सब एक ही ऋषि के वंशधर नहीं हैं।

हम उनलोगों को वेद पाठ करने के लिए अनुरोध करते हैं। हम कह सकते हैं कि – उनके मुँह, हाथ, पैर कहकर कोई अंग प्रत्यंग नहीं है। वे व्यापक है। समाज जीवन के विभिन्न कर्म विभाग को एक ही महापुरुष के चार प्रकार के नियम समझाने के भिन्न मन्त्र का कदर्थ करना अन्याय है। प्रमाण यथा –

ॐ विश्वतश्चक्षुरत विश्वतोमुखो विश्वतोवाहुरुत विश्वतस्पात्।

सं वाहुभ्यांधमति संपत्रे द्यावा भूमिं जनयन्देव एकः॥

यजुः अः १७। मं १९॥

“आप ही एकमात्र परमात्मा, आप विश्वतश्चक्षु, विश्वतोमुख, विश्वतोवाहु, विश्वतोपाद अर्थात् आपका चक्षु, मुख, वाहु, पैर सब ही व्यापक है। आप अपने व्यापक वाहु द्वारा उड़नशील परमाणु द्वारा दैवलोक एवं पृथ्वी को उत्पन्न किये हैं।”

उनका मुख, वाहु यदि भिन्न भिन्न अंग होता, तो ब्राह्मणों के चेहरे में नारायण शिला की भाँति एक मात्र मुँह ही का छिद्र रहता, एवं दूसरा अंग नहीं रहता और क्षत्रिय का चेहरा केवल वेड़ी की तरह होता। वैश्य लोगों का चेहरा एक सरौता की तरह होता। शूद्र लोग एक सांडसी की तरह होता। ठीक-ठीक मनुष्य का आकार कोई नहीं पाता।

आप के पाणिपाद (अंग प्रत्यंग) कुछ प्राकृतिक नियम मात्र हैं। परमाणु कणायें किस रूप से इस वायु मंडल में व्याप्त हैं उसका आभास तुम गृह में सूर्य किरण प्रवेश के स्थान पर देख सकोगे। तुम देखोगे कि परमाणु कणायें स्वाधीनता से इधर-उधर घुम रही हैं। यही कणायें प्राकृतिक नियम से एकत्रित होकर यह पृथ्वी एवं ग्रह नक्षत्र प्रस्तुत होता है। इस सम्बन्ध में विस्तारित आलोचना तुम वैशेषिक दर्शन में देख सकोगे।

वेद का कदर्थ करके कोई लाभ नहीं है। कारण कदर्थ का सामंजस्य करना कोई सम्भव नहीं है। ब्राह्मण क्षत्रियादि कर्म नियम के चार प्रकार के भेद हैं। यह नीति पृथ्वी के सब देश के समाज में वर्तमान है।

गीता में भी ब्रह्मलक्षण वर्णना अंश में ठीक यही बात कही गई है।

यथा – सर्वतःपाणि पादन्तत् सर्वतोअक्षिशिरो मुखं।

सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥ गीता १३-१४॥

आप ही ब्रह्मतत्त्व है आप व्यापक पाणि, व्यापक पद, व्यापक शिर, अक्षि एवं व्यापक मुख स्वरूप हैं। आप का श्रुति भी व्यापक है। आप सबको घेर कर अवस्थित है।

अर्थात् ब्रह्म तत्त्व व्यापक, इसमें विभिन्न प्रकार के नियम भी व्यापक रूप में विद्यमान है। वे सब नियम ही पाणिपाद स्वरूप हैं।

तर्पण विधान में ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु, प्रजापति एवं सप्त ऋषि, विभिन्न श्रेणी के लिए या विभिन्न वर्ण के लिए या भिन्न-भिन्न रूप या व्यक्ति नहीं है।

सृष्टि के मूल में एक ही ब्रह्मतत्त्व या सप्तऋषि होने पर भी हमारे वंशपरम्परा के आचार धर्म में यथेष्ट भेद विद्यमान है। यह हम अस्वीकार नहीं कर सकते। अंग्रेज, जर्मन लोग एक थाली में खाते हैं एवं विवाह आदि भी करते हैं। फिर भी झगड़े का अन्त नहीं है। किन्तु हमारे देश में एक थाली में न खाने पर भी उच्चवर्ण एवं अनुन्नत वर्ण में कभी झगड़ा-विवाद नहीं हुआ है।

इधर अंग्रेज राजत्व के इतिहास प्रवर्तको ने हमारे देश के इतिहास को विकृत करके लिखे हैं। उन लोगों का यह मत है कि आर्य लोग मध्य एशिया से इस देश में आकर यहाँ के आदिम अधिवासीयों को अछूत करके रखें हैं। हम लोग यह स्वीकार नहीं करते। हम यह जानते हैं कि सप्त ऋषि से ही मनुष्य मात्र का जन्म हुआ है। यह सप्त ऋषि किसी सुप्राचीन युग में हमारे देश में ही जन्म लिये थे। हमारे देश में भिन्न भिन्न आकार का मस्तिष्क का कंकाल विशिष्ट मनुष्य देखने में पाया जाता है। ये सब एक-एक ऋषिओं के वंशधर हैं। पंजाबी, बंगाली, कोच, द्राविडों के मस्तिष्क के कंकाल का आकार इसलिए भिन्न है। क्योंकि वे विभिन्न ऋषियों के सन्तान हैं। ऋषि सन्तानगण यहाँ से धीरे-धीरे सम्पूर्ण पृथ्वी पर फैल गये। तुम यदि थोड़ा अन्तर दृष्टि से विचार करोगे तो देख पाओगे कि यहाँ से मानव सभ्यता का मूल धारा धीरे-धीरे सम्पूर्ण पृथ्वी पर फैल गया है। भारतवर्ष को केन्द्र करके एवं पूर्व पश्चिम उन्नर-दक्षिण सब देश के लोगों को देखोगे तो देख पावोगे कि सब इसी देश के एक प्रान्त के लोगों के वंशधरगण देश-देशान्तर में फैले हुए हैं। और खूब प्राचीन सभ्यता की आलोचना करने से भी देखोगे कि यहाँ से ही सब सभ्यता धीरे-धीरे चारों ओर व्याप्त हुआ है। हम लोगों से जितना ही दूर जाओगे सभ्यता उतना ही क्षीण होता जायेगा।

तुम लोग पूछ सकते हो कि यह सब अनुन्नत लोग कौन हैं? तो इसका उत्तर है कि कर्मानुसार में वर्ण-भेद होता है। बाद में वंश परम्परा से वर्ण भेद हद तक प्रतिष्ठा लाभ कर गया, बाद के युग में सवर्ण विवाह श्रेष्ठ विवाह एवं असवर्ण विवाह उससे निकृष्ट विवाह माना जाने लगा एवं विलोम विवाह निकृष्ट विवाह कह के निर्दिष्ट किया गया। हीन वर्ण के सन्तानगण से विवाह करे तो उसे निकृष्ट विवाह कहा जाता था। इस

प्रकार के विवाह के बाद जो सन्तान उत्पन्न होता था उसको अनुन्नत माना जाता था। इस सम्बन्ध में शास्त्र वाक्य उद्धृत किया जा सकता है।

जिस समय वर्ण धर्म प्रवर्तित हुआ था उस समय महाराज स्वयंभूव मनु का राजत्व काल था। उस समय उनके राज्य सीमा में अनेक छोटे-छोटे शासक गण भी थे। वे वर्ण धर्म नहीं मानते थे इसीलिए उनके राज्य के मध्य में वर्ण धर्म प्रवर्तित नहीं होता था। बाद के युग में यह सब समाज अंश को भी अनुन्नत वर्ण में गिना जाता था। एक ऐसा समय आयेगा जब एक भीषण आन्दोलन आकर हमारे शिक्षा के मध्य स्थित मिथ्या और कल्पित इतिहास में संशोधन हो जायगा।

व्यासदेव – आषाढ़ महीने के पूर्णिमा को व्यास पूर्णिमा कहते हैं। सन्यासी एवं परिव्राजकगण भ्रमण के अन्त करके एक स्थान (गुरु के निकट) अवस्थान करके शास्त्र आलोचना और साधना किया करते थे। इस पूर्णिमा में हिन्दू धर्म के समस्त शाखा के आचार्यगण (बौद्ध, जैन, वैष्णव, व्याकरण और न्याय इत्यादि) के पूजा व उत्सव हुआ करता है। हम वर्तमान में जो सब प्रधान-प्रधान हिन्दू धर्म शास्त्र देख पाते या देखने में आता है उसका एक वृहत अंश व्यास द्वारा संकलित है। ये ही वेद के मन्त्रों को संग्रह करके उन सबको ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद इन चार भागों में विभक्त किया है। इन वेदों का पठन-पाठन भलिभांति हो सके इसलिए उन्होंने इसे और भी शाखा में विभक्त किया है। विभिन्न आचार्यों व गुरुलोगों में उनके पाठ की व्यावस्था भी किये थे। तुमने वेदान्त सूत्र का नाम सुना है। ये वेदान्त सूत्र व्यास द्वारा लिखित ग्रन्थ है। आचार्य शंकर ने इस वेदान्त सूत्र के अद्वैतवाद की व्याख्या किया है।

जैमिनी – ये कर्म मीमांसा दर्शन को रचना किये हैं। वैदिक यज्ञादि कर्मकाण्ड किस रूप से सम्पन्न होगा इस सम्बन्ध में यह दर्शन शास्त्र रचित है। वेद के जानभाग (उपनिषद) का सूत्र कारक महर्षि व्यास हैं। उसीका नाम 'वेदान्त दर्शन' है। वेद के कर्मकाण्ड का विधान महर्षि जैमिनी ने प्रवर्तन किया है। बहुतां की यह धारणा है कि यह दर्शनशास्त्र ही हमारे देश के पौरोहित्य वाद के प्रवर्तन का हेतु है। बुद्धदेव इस यज्ञभाग को अहिंसा के नाम से भलिभांति उच्छेद कर दिये थे। उसी कारण पौरोहित्यवादी गण बौद्धगणों को नास्तिकवादी कहकर बदनाम किया करते थे। बंगदेश में तुफान के समय जैमिनी का नाम उच्चारण करते सुना जाता है। यज्ञद्वारा दैव जगत तृप्त होता है। तुफान या वज्रपात को दैव दुर्विपाक कहा जाता है। जैमिनी यज्ञ विधान के प्रवर्तक है।

महर्षि गौतम – ये न्याय दर्शन के रचयिता हैं। यह बहुत ही सुन्दर दर्शन हैं। इसका दूसरा नाम तर्कशास्त्र भी है। काशी एवं नवद्वीप में न्याय की विशेष चर्चा हुआ करता है।

महर्षि कणाद – ये वैशेषिक दर्शन के रचयिता हैं इसको परमाणु वाद भी कहा जाता है। पाश्चात्य दार्शनिकगण अभी जितना दर्शन शास्त्र लिखे हैं वे सब दर्शनशास्त्र वैशेषिक भित्ति पर लिखित हैं।

महर्षि कपिल – ये बंगदेश के सागर संगम में अवस्थान करते थे। अभी भी पौषसंक्रान्ति के दिन इस महामुनि के आश्रम देखने के लिए प्रकाण्ड भीड़ होती है। सांख्यदर्शन के ये वक्ता हैं। इनको आदिजानी भी कहा जाता है। समस्त हिन्दूदर्शन की कुंजी सांख्यदर्शन है। महाराज सगर के सन्तानगण अत्यन्त आसुरिक होकर जब अनेक कुकार्य करने लगे तब महर्षि ने उनके शाप देकर ध्वंस कर दिये थे। ये तन्त्र शास्त्र के विख्यात प्रवर्तक हैं।

महर्षि पातञ्जली – योग दर्शन के लेखक हैं। ये मनोविज्ञान एवं योगविज्ञान के सर्वश्रेष्ठ दर्शन हैं। इस दर्शन में कहीं भी त्रुटि नहीं है। इसका पाठ करने से तुम समझोगे कि हिन्दूधर्म एक वैज्ञानिक धर्म है।

महर्षि पाणिनी - ये पाणिनी व्याकरण के रचयिता हैं। यह भी एक दार्शनिक ग्रन्थ है। यह संस्कृत भाषा का व्याकरण है। हमारे देश के सब प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक व्याकरण पाणिनी के भित्ति पर लिखा गया है।

महर्षि याज्ञवल्क्य - तुम जब वेद के संहिता, ब्राह्मण या उपनिषद भाग पाठ करोगे तो देखोगे कि कृष्ण एवं शुक्ल नामक दो प्रकार का यजुर्वेद नाम आया है। याज्ञवल्क्य यजुर्वेद शाखा के आचार्य थे। ये व्यासदेव के शिष्य थे। ये अत्यन्त कठोर तपस्वी महात्मा थे। किसी कारणवशतः ये व्यास के निकट अन्य गुरुभाइयों को हीनवीर्य (निस्तेज) कहकर पुकारा। इससे व्यासदेव रुष्ट हो गये। तब इन्हें वेद त्यागने का आदेश हुआ। वह त्यागने के बाद ये बहुत म्रियमान हो गये। वेदही जीवन उन्हें बहुत ही तुच्छ जीवन लगने लगा। तब वे तपस्या द्वारा वेद आविष्कार करने के लिये प्रवृत्त हुए और इसमें सफल भी हुए। ये जो त्याग किये थे उसका नाम कृष्ण यजुर्वेद है और जो वे अपनी प्रतिभा व तपस्या द्वारा आयत्त किये थे उस विराट् ग्रन्थ का नाम शुक्ल यजुर्वेद है। महातपस्वी महर्षि को याद करने से हमारा मस्तक अपने आप श्रद्धा से नत हो जाता है। इनका जीवन हमें अच्छी तरह शिक्षा देता है कि – ब्रह्मचर्य, तपस्या, एकनिष्ठा, अध्यवसाय और उन्नत लक्ष्य रहने से मनुष्य कोई भी ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

सिद्धनागार्जुन – ये अतीव शक्तिशाली एक तान्त्रिक बौद्ध थे। इनके द्वारा प्रवर्तित रसायन शास्त्र एवं दर्शन शास्त्र हैं।

महाराजा हरिश्चन्द्र – तुमलोग काशी में हरिश्चन्द्र घाट देख सकोगे। महाराजा इस घाट पर कृतदास होकर मृतों का शुल्क ग्रहण करते थे। महर्षि विश्वामित्र को ये अपना सम्पूर्ण राजत्व दान कर दिये थे। सब दान देने के कारण इनके पास दक्षिणा देने का भी

अर्थ नहीं था। तब ये डोम का कृतदास बनकर दक्षिणा संग्रह किये थे। इस घटना के पश्चात् उनकी रानी शैव्या ब्राह्मण के घर में दासी वृत्ति ग्रहण की थी।

उनलोगों का एक मात्र सन्तान रोहिताश्व ब्राह्मण के घर में पुष्प संग्रह करता था। एक दिन रोहिताश्व पुष्प चयन करते समय सर्पाघात से मर गया। अर्थ हीना और असहाया शैव्या मृत बालक को लेकर सत्कार करने के लिए अन्धकार रात में अकेली इस घाट पर आई और शुल्क का अर्थ छोड़ देने के लिए डोम वेशधारी अपने स्वामी के पास अनुनय-विनय करने लगी। इस घटना से उस ब्राह्मण का नीच मनोविज्ञान और हीन छवि का प्रकाश पाया जो धैर्य एवं सहिष्णुता, त्याग, विनय का भाव शैव्या में देखा गया है उसका विषय रामायण में देख कर आश्चर्य हो जाओगे। इस घटना की तरह हजारों घटना हमारे समाज में घटती आ रही हैं। तुमलोग उस ब्राह्मण की मनोवृत्ति का हर समय त्याग करते रहोगे।

इस मर्मस्पर्शी घटना के पश्चात् हरिश्चन्द्र, शैव्या और रोहिताश्व का जीवन की परीक्षा समाप्त हो गई। महर्षि विश्वामित्र ने बालक का जीवन दान करके उनका राज्य भी वापस दे दिये।

विक्रमपुर (ढाका) रामपाल के निकट में तालाब की तरह एक स्थान है (सुखवासपुर के निकट) वहाँ बारह महीना जलज घास द्वारा इस प्रकार आच्छादित रहता है कि मनुष्य और पशु के ऊपर से गुजरने पर भी दाम (जलज घास) गिरता नहीं है। किन्तु माघी पूर्णिमा के दिन उस तालाब का जल साफ एवं निर्मल हो जाता है। किंवदन्ती यह है कि महाराज हरिश्चन्द्र इस स्थान पर आकर माघी पूर्णिमा के दिन एक यज्ञ किये थे। यह तालाब उनका यज्ञकुण्ड था। प्रति वर्ष कलियुग के उत्पत्ति के दिन यह तालाब धार्मिक राजा का निर्मल स्नेह से प्रजापालन का स्मृति याद दिलाता है। उस निर्मल एवं पवित्र दृश्य के याद करो और हरिश्चन्द्र घाट के उस पवित्र घटना को भी स्मरण करो। काशी के ऊपर औरङ्गजेब की कुकीर्ति और विश्वनाथ के मन्दिर की दुर्दशा भी बर्बरता का स्मृति एवं धर्म प्रताप का स्मृति दोनों एक साथ जब तुम्हारे मन में आयेगा तब तुम यह निश्चिन्त रूप से जानोगे कि एक महान जाति के महान आदर्श के गोद में जन्म लेकर हम धन्य हैं।

काशी विश्वनाथ हमारे द्वादश ज्योतिर्लिंग का श्रेष्ठ पीठ है, यहाँ सत्ययुग में एक व्याध शिव पूजन किये थे। उस समय पूरा वारानसी एक जंगल था। आजकल सब हिन्दू शिवरात्रि में शिव पूजा करते हैं। उसका प्रथम पूजक एक व्याध है। शिव पूजन के पुण्य फल से व्याध मुक्त हो गया था।

और उसीके स्मरण में अभी तक हिन्दू लोग शिवरात्रि व्रत करते हैं। भारत में स्वराज्य होने के बाद पंडित जवाहरलाल इस मन्दिर में मिलिटरी का पहरा बैठा दिए कि

हिन्दू लोग इसमें प्रवेश न कर पायें। अभी तक हिन्दू लोग उस मन्दिर के नन्दी की पूजा करते हैं किन्तु मन्दिर में प्रवेश नहीं कर सकते हैं। हिन्दू लोगों के ऐसा पतन और दुर्बलता को देखकर बहुत ही कष्ट होता है। तुम लोग जान लो कि एक दिन इसका प्रतिकार हो ही जायेगा।

महावीर हनुमान – रामायण में इस महावीर के बारे में जान सकोगे। अनेक मन्दिरों में हनुमानकी मूर्ति देखने में मिलती है। कौमार्यव्रत के ये मूर्तिमान देवता हैं। नारीके ऊपर इस वीर पुरुष की असीम श्रद्धा थी।

मूर्ति में देखोगे कि इसके एक हाथ में गदा एवं दूसरे हाथ में पहाड़ खण्ड है। इस रूप में वे नारी के मर्यादा नष्टकारी रावण के प्रति धावमान हैं। ब्रह्मचर्य जीवन या शिक्षा जीवन का भी एक बड़ा आदर्श यह है कि व्यायाम द्वारा शरीर को दृढ़ करना पड़ेगा। नारीमात्र को मातृ के समान श्रद्धा करना पड़ेगा एवं नारी की मर्यादा नष्टकारी को कठोर दण्ड देना होगा। हमारे देश में अभी कुछ ऐसे नेता हैं जो उच्छृंखलता को समर्थन करने में लज्जाबोध नहीं करते। तुम हमेशा याद रखोगे कि स्वाधीनता का अर्थ उच्छृंखलता नहीं है।

बहुत लोग हनुमान का समुद्र पार की घटना को कल्पित मानते हैं परन्तु यह कोई कल्पित घटना नहीं है। एक सत्य घटना कहा जा रहा है – काशी में वरुणा नदी के किनारे प्रतिवर्ष एक रामलीला हुआ करता है। वहाँ पर भरत मिलन के दिन राम, लक्ष्मण, सीता एवं हनुमान वेशधारियों को जन साधारण की ओर से माला एवं पुष्पादि से पूजा करते हुए देख कर उपस्थित एक अंग्रेज सबडीभिसनल अफसर विस्मित हो गये। वे वहाँ पर शान्ति रक्षार्थ का दायित्व लेकर खड़े थे। वे अपने निकटस्थित एक परिचित स्थानीय व्यक्ति से इस विषय में आलोचना कर रहे थे। इस घटना के प्रसंग में अंग्रेज अफसर बोले कि हनुमान का लम्फ देकर समुद्र पार की घटना को किसी भी प्रकार से विश्वास नहीं किया जा सकता। इस प्रकार मनुष्य को राम, लक्ष्मण, सीता एवं हनुमान सजाकर पूजा करना भी ठीक नहीं है। तब उस व्यक्ति ने कहा कि हमारे यहाँ लोग विश्वास करते हैं कि राम, लक्ष्मण, सीता एवं हनुमान की आत्मा यह सब कल्पित व्यक्तियों में प्रविष्ट होता है। अंग्रेज अफसर बोले कि – यदि मैं देखूँ कि यह हनुमान (वेशधारी) लम्फ देकर यह वरुणा नदी पार कर उस पार में गया तो मैं मानूँगा कि सच मैं हनुमान लाँफ कर समुद्र पार कर गये थे और इस व्यक्ति में हनुमान प्रविष्ट हुए हैं। वेशधारी हनुमान सब बातें सुन रहा था। वह चिल्ला उठा “महाराजा रामचन्द्र की जय” एवं जनता भी उसका प्रतिध्वनि करने लगी। इसके साथ ही हनुमान (वेश धारी) लाँफ कर वरुणा के उस पार में पहुँच कर एक पेड़ पर जाकर बैठ गया। जनता भीषण जयध्वनि करने लगी। हनुमान (वेशधारी) उस वृक्ष पर ही देहत्याग कर दिया। अभी भी वहाँ पर उस महावीर की समाधि

हैं। काशी में बड़ा गणेश (महल्ला) नामक स्थान पर एक मन्दिर में अभी भी उस हनुमान का वेश भूषा रक्षित है। यह प्राय ८०-८२ वर्ष पूर्व की घटना है। ब्रह्मचर्य, योग साधना, त्याग, भक्ति एवं आसुरिक नाश का आदर्श ग्रहण कर किस रूप में महान एवं शक्तिशाली बन जा सकता है इसका उदाहरण हमें हनुमान के चरित्र में मिल सकता है। इस प्रकार के कर्मी एवं महात्मा पृथ्वी पर २/१ जन ही जन्म लेते हैं।

महाराजा शिवि – उशीनर नन्दर शिवि एक दिन सभा में बैठे हुए थे। इतने में एक डरा हुआ कबूतर उनकी गोद में आकर बैठा। कुछ देर में एख बाज भी आ गया। बाज कहने लगा कि यह कबूतर मेरा विधिदत्त आहार है। इसे छोड़ दीजिए, राजा ने कहा कि यह मेरा आश्रित है, तुम दूसरा कुछ आहार करो। बाज ने कहा कि यह मेरा प्राकृतिक खाद्य है। इसमें आप किसी तरह से वाधा डाल नहीं सकते। तब राजा ने दूसरा कुछ आहार ग्रहण करने के लिए प्रार्थना करने लगे। बाज ने कबूतर के वजन के बराबर राजा को मांस देने के लिए प्रार्थना किया, इससे मन्त्रीगण क्रुद्ध होकर उसको मारने कि लिए तैयार हुए। राजा ने कहा कि – “आप लोग रुकिए। तुच्छ-से तुच्छ घटना भी राजा के कर्तव्य के लिए उपेक्षा योग्य नहीं है। राजा यदि तुच्छ घटना पर अविचार करे तो प्रजाओं का नैतिक पतन अवश्य ही होगा।”

राजा ने तराजू लाने के लिए कहा, तराजू लाने पर उन्होंने एक ओर कबूतर को रखा और दूसरी ओर अपने शरीर से मांस खण्ड काट कर रखा। किन्तु देखा गया वह मांस खण्ड कबूतर के बराबर नहीं है। इधर प्रजा एवं मन्त्रिमण्डली में हाहाकार होने लगा। राजा ने कई बार मांस काटा फिर भी कबूतर के बराबर नहीं हुआ। बाद में राजा खूद तराजू पर बैठ गए। ठीक उसी समय बाज एवं कबूतर अग्नि एवं इन्द्र का रूप धारण करके राजा के सुविचार की प्रशंसा करने लगे। इस घटना के पश्चात् राजा पुत्र के हाथ में राज्य सौंप कर वानप्रस्थ अवलम्बन किया। इस घटना के साथ तुम १९३५ सः में “भारत शासन कानून” की तुलना कर सकते हो। इसी राजा उस विधान द्वारा हिन्दुओं के ऊपर नाना प्रकार का अविचार करने एवं मुसलमानों एवं ईसाइयों को रिश्वत देकर शासन विधान स्थापित किये। शासन विधान में मुसलमानों में से एक वृहत् अंश रिश्वत लेकर नैतिक पतन को वरण किये। फलस्वरूप देश के सर्वत्र हिन्दुओं के ऊपर अराजकता होने लगी। शासन यन्त्र के चारों ओर रिश्वत का राजत्व चलने लगा। महाराज शिवि का कहना, “राजा के अविचार से ही प्रजा के नैतिक पतन का कारण है” सत्य प्रमाणित हुआ। मुसलमान शासक निजाम के शासन काल में भी इसी प्रकार का कुत्सित अविचार हिन्दुओं के ऊपर हुआ था। इन घटनाओं से तुम समझोगे कि सुविचार की भित्ति हमारे जाति के संस्कार में अन्यान्य धर्मावलम्बीओं की तुलना में किस रूप उच्च आदर्श पर

प्रतिष्ठित है। तुम कभी अविचार को सुविचार कहकर स्वीकार मत करो। जो राजा एवं नेता अविचार के पक्षपाती हैं वे लोग इस पृथ्वी पर पशु के तुल्य हैं।

महाराज शिवि की घटना तुम कल्पित मत समझो। इस प्रकार की घटना क्यों घटती है एवं किस रूप से घटती है वह तुम्हें प्रेत उपासना एंश में स्पष्ट होगा।

महाराज ययाति – ये जरा ग्रस्त होकर देखे कि उनका विषय भोग का अभिलाष अभी तृप्त नहीं हुआ। इससे ये बहुत ही म्रियमान हो गए। परन्तु बाद में उन्हें ज्ञात हुआ कि यदि कोई युवक उनका बुड़ापा ग्रहण करके अपना युवकत्व उन्हें दान करेगा तो वे दीर्घ दिन तक यौवन लाभ कर सकेंगे। उनका कनिष्ठ पुत्र इस प्रस्ताव पर राजी हो गये। ययाति अपना यौवन लौट पाया। परन्तु अनेक वर्ष तक वे विषय भोग करने के बाद भी उन्हें ज्ञान हुआ कि उनकी भोग पिपासा एक जैसा ही है। इससे राजा विषय भोग का सब विज्ञान ही समझ लिए एवं पुत्र को यौवन लौटा कर बुड़ापा को वरण किये। महाराज ययाति बहुत ही ज्ञानी पुरुष थे। वेद के अनेक मन्त्रों के ये ऋषि हैं। वे भोग के सब सुविधा रहते हुए भी भोग की अतृप्ति के स्वतःसिद्ध नियम जानकर उसे त्याग दिये थे। तुम भी संसार जीवन के इस महान सत्य को अनुभव करके सावधान होकर जीवन को धर्मानुशीलन द्वारा ज्ञानमय एवं शान्तिमय करोगे।

भीष्म – पितामह भीष्म को तुम सभी जानते होगे। ये बाल ब्रह्मचारी, त्यागी, सत्यनिष्ठ, वीर एवं दृढ़ प्रतिज्ञ पुरुष थे। इच्छामृत्यु इस महावीर के आयत्व में था। ये शरशैल्या में तीन महीने तक अवस्थान करके उत्तरायण संक्रान्ति में देह त्याग किये। रक्त माँस के शरीर में यह वीरत्व स्मरणीय विषय है। ये वुड़ापे में भी पूर्ण कर्मक्षम थे।

महावीर कर्ण – सूत-पुत्र के नाम से ये अख्यायित थे। इस पर भी ये समाज की प्रतिष्ठा, धर्म, शौर्य, त्याग एवं दान में उस युग में श्रेष्ठ स्थान अधिकार किये थे। आजकाल देखा जाता है कि बहुत लोग अपने को हीन प्रतिष्ठ समझकर ईसाइ एवं मुसलमान धर्म ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन इससे उनकी प्रतिष्ठा में कोई उन्नति नहीं होती। उनका समाज भी उन्नत नहीं होता। हमेशा वे अपने को और भी हीन प्रतिष्ठ समझते हैं। समाज जीवन के संघर्ष को यदि ये लोग काम में ला सके तो कोई भी पतित समाज को अति उच्च प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित कर सकता है। हम प्रत्येक को अनुन्नत भाव प्रवणता को त्याग करने एवं पौरोहित्यवाद को अतिक्रम करके अपने समाज को शक्तिशाली समाज में परिणत करने एवं मुसलमान, ईसाइयों को उस शक्तिशाली समाज में खींच लेने के लिए कहते हैं। इसके द्वारा हिन्दू समाज में जो मृत्युलक्षण देखा गया वह दूर हो जायेगा। इससे तुमलोग भी समाज में विशेष सम्मानयोग्य स्थान प्राप्त कर सकोगे। क्या तुम अन्य के निकट उच्च प्रतिष्ठा चाहते हो? जो शक्तिशाली है, उसे प्रतिष्ठा जरूर मिलेगा। तुमलोग ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के संस्कार को और कार्य ग्रहण

करो। तुम्हे कौन रोकनेवाला है? तुमलोग तो हिन्दू समाज के एक प्रकाण्ड शाखा हो। तुम भी त्याग, तपस्या, योग, निष्काम कर्म एवं दान द्वारा अपने अंश को महिमामय करो। ये सब उच्च आदर्श त्याग करके अनेक लोगों को छल का आश्रय लेते हुए देखा जाता है। उच्च वर्ण का पदवी ग्रहण करके उच्च वर्ण के बीच मिलकर उनलोगों से छलना कर के विवाह बन्धन में आबद्ध होना समर्थनीय नहीं है।

याद रखो कि छलना कभी भी समाज को उन्नत बनाने में सहायक नहीं होता। एक ही पदवी ब्राह्मण, क्षत्रिय प्रभृति श्रेणी में युग-युगान्तर से विद्यमान हैं किन्तु कहीं भी छल का आश्रय नहीं लिया जाता है। ज्ञान के लिये लोग बहुत समय आत्मगोपन किये हैं परन्तु सामाजिक विषय में छल कभी भी समर्थनीय नहीं है बल्कि दंडनीय है।

महावीर कर्ण आत्मपरिचय छिपाकर महर्षि परशुराम का शिष्यत्व ग्रहण कर अस्त्र विद्या ग्रहण किये थे। एक दिन महर्षि कर्ण के जाँघ पर शिर रख कर सोये हुए थे। इतने में एक गोबरा (कीड़ा) जमीन पर छेद करते करते कर्ण के जाँघ में भी छेद कर दिया। गुरु की निद्रा में विघ्न होगा सोचकर वह अपने जगह से नहीं हिले। रक्तधारा महर्षि को स्पर्श करने से उनकी नींद टूट गई। महर्षि जाग कर यह दृश्य देखकर समझ गये कि इस प्रकार का वीरत्व ब्राह्मण सन्तान में सम्भव नहीं है। महर्षि ने उन्हें शाप दिया कि “मृत्यु काल में तुम्हारा रथ का पहिया मिट्टी में ध्वस जायेगा” ऐसा ही हुआ था। गुरुसेवा में इस प्रकार की निष्ठा एवं सहिष्णुता के आदर्श को सोचो। शक्तिवादी गुरु एवं शक्तिवादी शिष्य मिलने से जो सम्भव है उसके द्वारा मनुष्य के समाजजीवन, राष्ट्रजीवन, धर्मजीवन एवं व्यक्तिजीवन में नूतन शक्ति संचार होता है। कर्ण के जीवन के हर एक अंश में अपूर्व वीरत्व, त्याग, शौर्य एवं सहिष्णुता का निदर्शन है।

अर्जुन – अर्जुन का वीरत्व, त्याग, बुद्धिमत्ता एवं रणकौशल सम्पूर्ण महाभारत का रत्न है। महाभारत का युद्ध एक भयावह युद्ध हुआ था। इस युद्ध में विभिन्न प्रकार का दैवी अस्त्र प्रयोग में लाया गया था। अर्जुन के निकट “पाशुपत्” प्रभृति भीषण-भीषण शक्तिशाली अस्त्र थे। उन अस्त्रों में इतना बल था कि अर्जुन केवल एक ही अस्त्र से युद्ध में विजयी हो सकते थे। लेकिन अर्जुन उसका प्रयोग नहीं किये थे। “पाशुपत्” अस्त्र को शिव का अस्त्र कहा जाता है। शिव पारद धातु के देवता हैं। ऐसा लगता है पारद निहित शक्ति कणाओं से यह अस्त्र निर्मित था। विगत महायुद्ध में अमेरिका ने जापान के उपर ‘एटम बम’ फेंक कर बर्बरता का चरम निदर्शन दिखा कर जापान को आत्म समर्पण करने के लिए बाध्य किया था। इस घटना से तुम समझ सकते हो कि इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य की बर्बरता की मनोवृत्ति किस स्तर तक गिर गयी है। ये लोग आज भी बर्बरता की गम्भीरता को समझने में असमर्थ हैं। इसलिए हमलोगों के तरह महान जाति

का उत्थान व शक्तिलाभ पृथ्वी के मनुष्यत्व के रक्षार्थ आवश्यक हो गया है। शक्ति का अर्जन करोगे लेकिन बर्बरता से उनका प्रयोग नहीं करोगे। अर्जुन हमें यही शिक्षा दिये हैं।

गुरु गोविन्द – ये भाववादी शिख (शिष्य) सम्प्रदाय को एक शक्तिवादी सम्प्रदाय में परिणत किये थे। मुसलमान शासकगण की बर्बरता एवं अत्याचार इस महापुरुष के मन को चंचल कर दिया था। ये शिख सम्प्रदाय को एक शक्तिशाली योद्धा सम्प्रदाय में परिणत कर दिये हैं। आजकल पृथ्वी पर ये लोग ही सर्वश्रेष्ठ योद्धा हैं। इस महापुरुष के दो पुत्र थे। औरंगजेब ने इन दोनों को जीवित अवस्था में ही दीवार के साथ गाड़ कर मार डाला और बर्बरता का चरम निदर्शन दिखाया। परन्तु इस बर्बरता को देखकर कोई शिष्य थोड़ा सा भी नहीं डरा। अनुन्नत हिन्दूओं! अगर इस वीर के निकट दीक्षा ग्रहण करोगे तो तुमलोग भी एक शक्तिशाली सम्प्रदाय में परिणत हो सकोगे।

गुरुगोविन्द का जन्म उत्सव कार्तिक पूर्णिमा को अनुष्ठित होता है। शिखों में अपने हिन्दू धर्म के ऊपर असीम श्रद्धा है। वर्ण हिन्दू लोग इन लोगों का जलस्पर्श नहीं करते हैं। लेकिन ये लोग इससे थोड़ा भी क्षुब्ध नहीं हैं। आत्मविश्वास और शक्ति जिन लोगों में रहता है वे मनुष्यत्व का उपादान विशिष्ट मनुष्य होते हैं। पशुतुल्य गुरु होने से समाज भी पशुतुल्य होता है और नपुंसक गुरु समाज को नपुंसक करते हैं।

प्रताप सिंह – ये महान पुरुष इस पृथ्वी पर स्वाधीनता के सर्वश्रेष्ठ आदर्श उपस्थित किये हैं। ये किस प्रकार भीषण आत्मत्याग, सहिष्णुता और कठोरता का द्वारा स्वाधीनता की रक्षा किए थे ये तुम “राजस्थान” के इतिहास से जान सकोगे।

शिवाजी – ये “रामदास स्वामी” नामक एक तपस्वी के शिष्य थे। उनकी अनुप्रेरणा से यह वीर पुरुष महाराष्ट्र में एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना किये थे। औरंगजेब की बर्बरता का युग तोड़ने वालों में एक ओर में शिख सम्प्रदाय और दूसरी ओर में महाराष्ट्रीय वीरों का आत्मत्याग है। इस महान जीवन के चरित्र द्वारा हम यह शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं कि एकत्र होकर प्रयत्न करने से बर्बरता का युग तोड़ना कठिन नहीं है। बर्बरता की भित्ति से सभ्यता की भित्ति अनेक शक्तिशाली है।

स्वामी दयानन्द – ये आर्य समाज की प्रतिष्ठा कर सनातन हिन्दू धर्म को हमारे सामने में स्थापित कर गये हैं। ये हमारे देश में पौरोहित्यवाद तोड़क आधुनिक महात्माओं में अन्यतम हैं। ये केवल वेद को भित्ति कर एक सुन्दर धर्म की स्थापना किये हैं। इससे वेद का ज्ञान भंडार पौरोहित्यवादियों के हाथ से निकल गया।

व्यास लिखित वेदान्त दर्शन जिस प्रकार वेद के ज्ञान का एक सुनिर्दिष्ट मीमांसा ग्रन्थ है उसी प्रकार दयानन्दजी भी वेद के कर्मकांड का एक सुनिर्दिष्ट मीमांसा दिखलाए हैं। व्यास के मतानुसार आकाश, प्राण, ईश, हंस, लिंग, ब्रह्म प्रभृति शब्द एक ही ब्रह्मवाचक हैं। स्वामी दयानन्दजी भी उसी प्रकार रुद्र, शक्ति, गणेश, सूर्य, विष्णु, अग्नि,

वायु, इन्द्र, वरुण, विश्वदेव प्रत्येक देवता वाचक शब्द सब एक ही ईश्वर वाचक या ब्रह्मवाचक शब्द मानते हैं। ये अपने पांडित्य द्वारा इसका प्रमाण भी कर दिये हैं। तुम जब वेद का पाठ करोगे तब देखोगे कि वेद के बहुत से मन्त्र स्वामीजी के मत का समर्थन करते हैं।

प्रमाण यथा –

सर्वे वेदा यत् पदमामनन्ति,
तपाँसि सर्वानि च यत् वदन्ति।। इत्यादि।

इस महापुरुष के प्रभाव से वैदिक चिन्ता जगत में एक युगान्तर आया है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। उनकी मूर्ति खण्डन मत से हम सहमत नहीं हैं। हम ज्ञान के विभिन्न स्तर को समझाने के लिए मूर्तियों की प्रयोजन स्वीकार करते हैं। इसके स्थापना द्वारा धर्म ज्ञान एवं शक्ति प्रतिष्ठा में सहायता मिलती है।

स्वामी दयानन्द केवल आर्यशास्त्र में ही पण्डित नहीं थे वे कुरान एवं बाइबेल के ऊपर भी अपना अभ्रान्त युक्ति दिखलाये हैं। तुम्हे उनका पाठ करने से समझ में आयेगा कि आरब्ब्य दार्शनिकता एवं यहूदि दार्शनिकता हमारे वैदिक दार्शनिकता एवं युक्तिवाद की तुलना में कितना निम्न स्तर का है।

स्वामी विवेकानन्द – ये हमारे निकट एवं पृथ्वी के निकट अत्यन्त परिचित महात्मा हैं। इनकी तेजस्विता, युक्तिवाद, त्याग एवं स्वदेश प्रेम तुमलोग आयत्न करने का प्रयत्न करोगे। ये चिकागों धर्मसभा में अपने अकाट्य युक्ति से प्रमाण कर दिये थे कि हिन्दूधर्म ही एकमात्र 'मानव' धर्म है। ये पश्चिम देश में हमारे हिन्दू ज्ञानवाद का प्रचार एवं हमारे देश में पश्चिमी कर्मवाद के प्रचार के पक्षपाती थे। फलतः वह यही किये भी थे। उनका अभ्रान्त भविष्यत् वाणी “यदि पश्चिम हिन्दू धर्म, ज्ञान एवं दार्शनिकता को ग्रहण न करे तो उनका ध्वंस अनिवार्य है” अक्षर-अक्षर में फल गया है। वे हमारे देश में पश्चिमी कर्मवाद की प्रतिष्ठा में बहुत ही पक्षपाती थे। लेकिन हम उनके इस विषय में सहमत नहीं हैं। भ्रान्त दार्शनिक भित्ति में भ्रान्त कर्मवाद अभ्रान्त दार्शनिकता के क्षेत्र में भारत का कोई कल्याण नहीं कर सकता। हम अपने कर्मवाद को नये ढंग से संस्कार कर लेने के पक्षपाती हैं। वे 'रामकृष्ण' को अवतार बनाने की चेष्टा करने के फलस्वरूप राजा राममोहन प्रवर्तित सर्व धर्मसमन्वयवाद हमारे देश में फैल गया। फलस्वरूप हमारे बीच ईस्लाम एवं ईसाई धर्म के सम्बन्ध में धारणा प्रतिष्ठा लाभ करने में बाधा पाया एवं समाज जीवन में हम नाना प्रकार से विपदग्रस्त हो गये। इसके भिन्न भी अशिक्षित हिन्दुओं के बीच ईसाइयों को बिना बाधा से धर्म प्रचार का पथ मिल गया। अशिक्षितगण ईसाई धर्म ग्रहण करने पर भी उनके द्वारा प्रवर्तित मिशनवादिगण आज तक उसका कोई प्रतिकार नहीं किए हैं। हिन्दू लोग अहिन्दुओं के द्वारा बर्बरता द्वारा निर्यातित होने

पर उसका कोई प्रतिकार व प्रतिशोध में भी मिशनवादियों का मदद नहीं मिला। कुछ सिद्धान्तों में एक मत न होने पर भी वे हमारे पूज्य महापुरुष हैं।

सती – इस बार हम नारी महात्मागणों के विषय में आलोचना करेंगे। हमारे देश में वैदिक युग से लेकर आज तक अनेक नारी महात्मायें हुई हैं। इनकी संख्या पुरुषों के तरह ही असंख्य है। वेद के अनेक सुन्दर-सुन्दर मन्त्रों का ऋषि नारी है। हम पहले सती के विषय में आलोचना करेंगे।

सती का दूसरा नाम 'उमा' है। सती महाराज दक्ष की कन्या थी। शिव के साथ इनका विवाह हुआ। दक्ष एक यज्ञ का अनुष्ठान किए। उस यज्ञ में उन्होंने शिव एवं उमा को निमन्त्रित नहीं किए। लेकिन उमा इससे विरत नहीं हुई। वे पितृ गृह में जाने के लिए प्रस्तुत हुई एवं शिव से अनुमति माँगी। उमा बचपन से ही थोड़ी जिद्दी प्रकृति की लड़की थी। पति के आदेश को प्राप्त करने के लिए सती ने काली, तारा आदि दस महाविद्या के रूप धारण कर लिए थे। तुमलोग इस घटना को केवल लीला मत समझो। एक युग में सच ही हमारे देश में इस प्रकार के स्वभाव सम्पन्न मनुष्य हुए थे। उनका चरित्र इतना सुन्दर एवं महान था कि हम उन्हें प्यार करते करते देवता एवं ईश्वर के रूप में परिणत कर दिए हैं। कृष्ण, राम, बुद्ध को हम इतना प्यार करते हैं कि सोच ही नहीं सकते कि ये देवता नहीं हैं। एक युग में ये लोग हमारे देश के राजा एवं नेता थे, परवर्ती युग में वे देवता का स्थान ग्रहण कर लिए।

उमा थोड़ा जिद्दी होने के नाते यदि कोई बात अपने मनमें ठान लेती तो किसी में इतना शक्ति नहीं था कि उसे निरस्त्र कर सके। उसने पिता के अनिच्छा से स्वयम्बर सभा में शिव को अपने पति के रूप में वरण किया। उमा कभी भोग विलास में मग्न नहीं थी। पर्वत, वन, जंगल में तपस्या एवं साधना करना ही उनका एक मात्र काम्य था। इसलिए वे शिव को बाल्यकाल से ही पति के रूप में वरण कर चुकी थी। शिव को पति मानने के लिए वह अपने पिता के पास अप्रिय हो गई। यहाँ पर भी वह सोच ली कि पिता के पास जाने के लिए निमन्त्रण का प्रयोजन नहीं है। असल में वह पिता, माता, भाई, बहन, दास, दासियों को देखने के लिए तड़प उठी। इसलिए वह जाने के लिए तैयार हो गई। वह समझी नहीं कि इस अवस्था में जाना अन्याय है। सती का जिद है कि वह जाएगी एवं शिव से आदेश भी लेगी।

उमा कठोर तपस्विनी थी। वह अपने तपःशक्ति का प्रयोग करके शिव को आदेश देने के लिए बाध्य की। शिव समझ गए कि उमा अनादि महाशक्ति है। उमा दसमहाविद्या का रूप धारण कर अपनी असीम तपःशक्ति प्रकट की। जीव मात्र ही अनादि महाशक्ति या परमब्रह्म है, यह ज्ञान के अन्त में जाना जाता है। उमा तपस्या एवं साधना के बल से उस शक्ति में प्रतिष्ठा लाभ की थी। कोई भी नर-नारी ज्ञान के

इस सर्वोच्च स्तर में प्रतिष्ठा लाभ कर सकता है। शिव समझे कि उमा कोई साधारण नारी नहीं है इसलिए वे जाने का अनुमति दे दिए।

उमा के यज्ञ मण्डप के निकटस्थ होते ही महाराज दक्ष उनका तिरस्कार करने लगे और शिव की निन्दा करने लगे। पति उन्हें इतना प्रिय था कि वह भर्त्सना उनके निकट असह्य हो गया, वह वहीं पर देह त्याग कर दी।

एक शक्तिवादी ब्रह्मविदुषी नारी का चरित्र किस प्रकार का हो सकता है यह उमा के चरित्र से जान सकते हैं। वे ज्ञानी एवं महाशक्तिशालिनी होते हुए भी ठीक साधारण कन्या ही की तरह पिता के घर जाने के लिए जिद की। एक ओर अलौकिक शक्ति एवं अलौकिक ज्ञान होने पर भी अन्य ओर साधारण जीव की भाँति मन की गति। यह हम सब बड़े बड़े महापुरुष और ब्रह्म विदुषियों के चरित्र में देख सकते हैं। असीम रूप में अपने को जानने के बाद भी जीवत्व के सब माधुर्य को जो अपने चरित्र में अकृत्रिम भाव से ग्रहण कर लिए हैं उन्हें मनुष्य ईश्वर या देवता के रूप में अपने मन में स्थान दिया है। सती के चरित्र की तरह सुन्दर चरित्र हिन्दू जीवन का सर्वश्रेष्ठ वैशिष्ट्य है।

सती के देहत्याग की दुर्घटना चारों ओर फैल गयी। सती उमा के साथी नन्दी ने यह खबर शिव को भी दे दी। शिव दलबल लेकर यज्ञ की ओर चले। दक्षयज्ञ भंग हो गया। शिव उमा का मृत देह अपने कंधे पर ले लिए। दक्ष उस समय इस देश का सम्राट था। इसलिए देश के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक यह घटना बहुत ही आलोड़न सृष्टि कर दी। शिव उमा को स्कंध पर धारण कर देश-विदेश घूमने लगे। फलस्वरूप आन्दोलन और भी तीव्र हुआ। तब देवताओं ने इसके प्रतिकार के लिए उपाय स्थिर किये। विष्णु शिव के पीछे-पीछे रहकर अपने चक्र द्वारा छोटे-छोटे टुकड़े में उमा के मृतदेह को शिव के अलक्ष्य में खण्ड-खण्ड करने लगे। जिस जिस स्थान पर उमा का देह खण्ड पतित हुआ था वह सब स्थान आज तीर्थ भूमि में परिणत हो गया है। तुम लोग ५१ पीठ स्थान के बारे में सुने होंगे। यह ५१ पीठ स्थान केवल भारत में ही अवस्थित नहीं है बल्कि भारत के बाहर भी अवस्थित है। इन सब पीठस्थान में उमा का देह खण्ड पतित हुआ था।

जो सती प्रथा को असभ्य मानते हैं वह लोग काम लिप्सा को ही समझते हैं, किन्तु प्रेम, प्यार, तपस्या, साधना, ब्रह्मज्ञान एवं शक्ति लाभ विज्ञान के बारे में अन्ध हैं। आज भी हमारे देश में बहुत सी नारी पति के साथ-साथ देहत्याग कर दी हैं, सुना जाता है।

हम उमा को कितना प्यार करते हैं, उनके जीवन एवं आदर्श को कितना उन्नत करके रखे हैं वह तुम तीर्थों को देखने से समझ जाओगे। तुम दुर्गा पूजा के मन्त्र में देखोगे कि –

ॐ दक्षयज्ञ विनाशिन्यै महाघोरायै योगिनी कोटि परिवृतायै भद्रकाल्यै ॐ ह्रीं दुर्गायै नमः॥

अर्थात् जो दक्षयज्ञ विनाश का कारण, जो कोटि योगिनी परिवृता (अर्थात् जिसको केन्द्र करके कोटि कोटि शक्तिकणा क्रियाशील हैं) जो भद्रकाली स्वरूपा है (कालचक्र जब आसुरिक प्रभाव मुक्त होकर हमारे अनुकूल होता है वह काल या समय ही भद्र काल या मंगलमय काल है, इस रूप के काल को ही भद्रकाली कहते हैं।) जो ॐ स्वरूपा (ब्रह्मस्वरूपा) एवं ह्रीं (महाशक्ति) स्वरूपा हैं उनको प्रणाम करते हैं।

जो ब्रह्मज्ञान एवं ब्रह्मशक्ति का प्रभाव अपने जीवन में दिखलाये है उनलोगों को हम ब्रह्म या ब्रह्मशक्ति रूप में श्रद्धा करते हैं। इस रूप महान पुरुष व नारी का स्मरण एवं ब्रह्मस्मरण एक ही वस्तु है। पूजा मन्त्र में यह दक्षयज्ञ विनाशिन्यै अंश में जो श्रद्धा, जो उच्च धारणा उमा के ऊपर अर्पित हुआ वह थोड़ा भी अन्याय नहीं है।

उमा का तपः शक्ति, त्याग, साधना, पतिप्रेम, पितृप्रेम सब मिला कर उमा को साक्षात् ईश्वर या ब्रह्म के रूप में प्रतिष्ठित किया है। कृष्ण, राम, बुद्ध प्रभृति महात्मा भी इस प्रकार से अपने कर्मशक्ति एवं ज्ञान शक्ति द्वारा आज ईश्वर के रूप में पूजनीय हुए हैं, लेकिन उमा के स्थान पर कोई पहुँच नहीं पाया। उमा हमारे जातीय जीवन में प्रत्येक नर-नारी के लिए आदर्श मूर्ति है। तुमलोग द्रौपदी एवं राजस्थान की महिलाओं के जीवन चरित्र में यह महान आदर्श देख सकोगे।

यदि तुम हरिद्वार के आगे त्रियुगी नारायण में जाओगे तो उमा के विवाह के कुशण्डिका का अग्नि आज भी देख सकोगे।

यह अग्नि अब “त्रियुगी नारायण” कहकर विख्यात है। सत्य, त्रेता, द्वापर तीनों युग में यह विद्यमान होने के कारण ये त्रियुगी नारायण है। तुम इन सब घटना को कल्पित मत समझो।

एक युग के शक्तिशाली नरनारीगण को ही परवर्ती युग में देवता और ईश्वर के प्रतीक रूप में श्रद्धा करते आये हैं। हम उनलोगों के चरित्र के साथ हमारे शरीरस्थित ब्रह्मनाड़ी उनके शाखा-प्रशाखा और मर्मकेन्द्र प्रभृति के साथ एकरूपता करके हमारे जीवन को महान कर लिए हैं। यह अन्याय नहीं है। कारण वीरत्व, शान्ति, त्याग, ज्ञान-विज्ञान प्रभृति उन्नत चरित्र का उपादान हमारे शरीर और मन में विद्यमान है। विचार करने से देखा जायेगा कि जो त्याग और वीरत्व से महान हुए हैं वही उनके शरीरस्थित वह सब मर्मांश ही उन्हें महान करने में सहायक हुआ है।

महाशक्ति या ब्रह्म के लीलारूप ही यह जगत् है। इस जगत में जिस स्थान पर ब्रह्मज्ञानी एवं ब्रह्म-विदुषीगणों का शक्ति माधुर्य हुआ है उन सब स्थानों का महत्व थोड़ा ज्यादा ही है। हम महामाया के लीला के बारे में एक सुन्दर कहानी सुना रहे हैं –

हरिद्वार में गंगा के किनारे एक सन्यासी रहते थे। वे सर्वदा ही 'माया' देखने के लिए परमात्मा के निकट प्रार्थना करते थे। इस विशिष्ट ब्रह्माण्ड की सब घटना ही एक सिद्ध ज्ञानी के निकट माया विशेष है, वे यह समझने की चेष्टा न करके "माया" देखने के लिए प्रार्थना करने लगे।

एक दिन सन्यासी गंगा के किनारे में कपड़ा एवं कमण्डूल रखकर गंगा स्नान कर रहे थे। इतने में एक मगर उन्हें ग्रास कर लिया। कुछ समय बाद वह देखे कि उनकी आत्मा एक वेदिनी के गर्भ में प्रवेश किया कुछ समय पश्चात उनका जन्म हुआ। वह लड़की होकर जन्म लिये। कन्या की उमर हो गई एवं विवाह हुआ। गंगा के किनारे ही एक वेदिया के साथ उनका विवाह हुआ। एक-एक करके चार सन्तान हुईं। सन्यासी की आत्मा इन सब काण्ड में मत्त होकर भी सब समझ रहे थे। एक दिन वेदिनी (सन्यासी) को स्नान करते समय मगर फिर उन्हें ग्रास कर लिया। मगर उन्हें गंगा के दूसरे किनारे जाकर छोड़ दिया। सन्यासी देखा कि वह अब वेदिनी नहीं है। अब सन्यासी ही है। उनका वस्त्र एवं कमण्डूल भी पड़ा ही हुआ था। वे सोचने लगे कि यह कैसी घटना है कि इतने दिनों के बाद भी वह कपड़ा एवं कमण्डूल एवं वेदिनी जन्म के बारे में सोचने लगे। ठीक उसी समय वहाँ वेदिया आकर कहा "महाराज कहिए कि हमारी वेदिनी कहाँ है?" सन्यासी जितना इस बात की उपेक्षा करने लगे वेदिया उतना ही व्याग्रता से पुछने लगा। अन्त में सन्यासी ने कहा कि वेदिनी के विषय में हम और क्या कहेंगे, हम ही तुम्हारी वेदिनी हैं, लेकिन हमारा जन्म खत्म हो गया है। तुम अब हमें पा नहीं सकते। वेदिया बोले – हम आपको पाना नहीं चाहते, लेकिन बच्चे बहुत ही छोटे हैं, आप उन्हें जाकर देखिये। थोड़ा बड़ा होने पर आप चले आइयेगा। छोटे-छोटे बच्चा उन्हें अगर देखा न जाये तो बचाना मुश्किल है। सन्यासी की सब युक्ति वेदिया काटने लगा। अन्त में उपाय न देखकर सन्यासी रोने लगा।

वेदिया फिर भी उसे नहीं छोड़ा। तब रोते-रोते सन्यासी जमीन पर गिर गया। रोते-रोते कहने लगा "हे परमात्मा! यही क्या तुम्हारी माया है?" एवं रोते-रोते सो गये। जागकर देखे कि वेदिया एवं वेदिया का डेरा कहीं भी कुछ नहीं है। वे समझे कि यही माया है। तुम भी अगर ब्रह्मज्ञान का लाभ करोगे तो समझ जाओगे कि यह जीव जगत् रूप में महाशक्ति या ब्रह्म किस प्रकार का अस्तित्वहीन एक लीला जोड़े हुए हैं।

गार्गी – ब्रह्मविदुषी गार्गी का नाम तुमलोग जानते होंगे। ये महामुनि गर्ग का कन्या थी। इनके लीखित ऋग्वेद का भाष्य अभी भी विद्यमान है। महाराज जनक की सभा में ये ही महर्षि याज्ञवल्क्य के साथ ब्रह्मज्ञान विषयक तत्वालोचना कर ख्याति लाभ किये थे। चण्डी पाठ के समय जो देवीसूक्त पाठ हुआ करता है (ऋग्वेद॥ १० वाँ मण्डल॥ सूक्त १२५) उस सूक्त के ऋषि भी एक कन्या थी। ये शक्तिस्तर के

अनुभूतिज्ञापक मन्त्र हैं। हमारे देश के कन्यागण उच्च विद्यार्जन में आत्मनियोग किये हैं। यह सोचने पर मन आनन्दित हो उठता है। हम उन्हें सती गार्गी का स्मरण करने के लिए कहते हैं एवं अपने कृष्टि में श्रद्धा रखने के लिए कहते हैं।

राधिका – हमारे वर्तमान समाज जीवन में इस महिला का बहुत ही सम्मान किया जाता है। भागवत में भी इस महिला का वर्णन पाया जाता है। ये बाल्यकाल से ही कृष्ण के प्रेम में मग्न थी। पति को सती स्त्री जितना आत्मदान करके प्यार करती है, उनका प्रेम उतना ही गम्भीर था। किन्तु आश्चर्य राधिका का प्रेम कभी काम एवं सृष्टि की ओर नहीं गया। यह प्रेम केवल प्रेम ही था एवं यह प्रेम राधिका को ब्रह्मचारिणी एवं ब्रह्मविदुषी महिला में परिणत कर दिया था। प्रत्येक बालिका में ८ वर्ष में ही प्रेम का अंकुर जन्म लेता है। यह अंकुर १६ वर्ष तक परिणत प्रेम में परिपूर्ण होता है। बाद में वह वहिर्मुखी होता है एवं सृष्टि की ओर धावित होता है। मेरुदण्ड मध्यस्थित ब्रह्मनाडी के बीच सत्य, प्रेम, सुख, शान्ति, ज्ञान, सौन्दर्य यह सब केन्द्र विद्यमान रहतै है। स्वाभाविक नियम से प्रेम वहिर्मुखी होने पर ही यौवन के लक्षण दिखाई देता है। इस यौवन को संयत करके ब्रह्मनाडी में मन को एकाग्र करने से मानव जीवन का श्रेष्ठ लक्ष्य सिद्ध होता है। राधिका के जीवन में हम जो देखते हैं वह हम यह शिक्षा देती है कि प्रेम ही संयम एवं प्रेम ही ब्रह्मचर्य एवं प्रेम ही एक आश्चर्य तपस्या है। प्रेम यदि ईश्वर में एवं ईश्वरतुल्य महापुरुष को अर्पित हो तो वह प्रेम ब्रह्मचर्य, ज्ञान एवं संयम ही के फल दान करता है। राधिका के जीवन में हम संयम, ब्रह्मचर्य एवं ब्रह्मज्ञान यथेष्ट रूप में देख सकते हैं किन्तु उमा की तरह तेजस्विता एवं शक्तिमत्ता नहीं पाते।

शवरी – इस तपस्विनी ब्रह्मविदुषी की कथा रामायण में है। इसका स्नेहमय प्रेम इनको ऋषित्व में प्रतिष्ठा करने में सहायक हुआ था। ये त्रिकालदर्शी थी। ये भीलकन्या (अछूत) थी। बाल्यकाल में श्रीराम के विषय में सुनकर राम के ऊपर इनका आकर्षण हुआ। यौवन में पिता विवाह देने की चेष्टा करने पर ये सहमत नहीं हुई। ये नित्य फल, मूल एवं पुष्प चयन करके राम की अपेक्षा करती थी। इन्हें अत्यन्त वृद्धावस्था में राम का दर्शन मिला। राम को गोद में लेकर शवरी आदर की थी। राम एवं शवरी मिलन अत्यन्त स्मरणीय घटना है। इस घटना के पश्चात् यह अपना प्राण त्याग कर दी थी। प्रेम आजकल हमारे समाज में काम के रोग के स्वरूप में प्रवेश करके समाज का क्षति कर रहा है। प्रकृत प्रेम ईश्वर में ही सम्भव है एवं वही ब्रह्मचर्य है। इससे ही तेज, वीरत्व और कर्मशक्ति को प्राप्त करके जीवन महान होता है।

देवता उपासना

देवता किसे कहते हैं इसे तुम लोगों को जानना चाहिए। हमारे मन में अनेक प्रकार की दैव वृत्तियों का उदय होता है। यह सब दैववृत्ति ही देवता हैं। जैसे दान करने की प्रवृत्ति एक दैव वृत्ति है। किसी को उपकार करने की इच्छा, त्याग करने की इच्छा यह सब दैव वृत्ति है। दुष्ट लोग चोर गुण्डा इत्यादि के विरुद्ध या उनके दमन के वृत्ति को भी दैव वृत्ति कहेंगे। हमारे मन में जब चोर, चालबाजी, मिथ्या, छलना, गुण्डापन, बर्बरता और दूसरे का नुकसान करने की इच्छा जाग्रत होती है तो उसका नाम ही असुर वृत्ति है। गीता पढ़ने से इस विषय में और भी ज्ञान स्पष्ट रूप से जायेगा। गीता में २६ प्रकार के दैववृत्ति और पाँच प्रकार के आसुरिक वृत्ति के उल्लेख पाये जाते हैं। एक मनुष्य जब दैवी भाव का अवलम्बन करता है तो वही देवता है और असुर भाव का अवलम्बन करे तो वही असुर हैं।

अभय, चित्तशुद्धि, योग, ज्ञाननिष्ठा, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, सरलता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, शान्ति, अपैशुन (चुगली न करना), दया, निर्लोभ, धीरता, लज्जा, अचंचलता, तेज, क्षमा, ईर्ष्याहीनता, निरभिमानिता, अवैरिता, समता, तुष्टि, दक्षता, उपरोक्त वृत्ति गीता के अनुसार दैवी सम्पदाये हैं। इसमें से पाँच प्रधान हैं – अभय, तेज, सत्य, प्रेम (अहिंसा), शान्ति। इस पाँच दैवीवृत्ति को ठीक से समझने से तुम्हारा जीवन सभी दिशा में ठीक से परिचालित होगा।

आसुरिक सम्पद – दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, निष्ठुरता। दैवी भाव सत्य, त्याग और युक्तिवाद मूलक होता है और आसुरिक भाव अहंकार, स्वार्थ, युक्तिहीनता और अज्ञानता मूलक होता है।

अभय और सत्य इस प्रकार की शक्तिशाली चीज है कि उसे यदि तुमलोग कुछ दिन अभ्यास करोगे तो मालूम हो जायेगा कि उससे तुम दिन दिन शक्तिमान बन रहे हो। याद रखना कि धर्म एक अनुष्ठान का विषय है एव बार निर्भीक हो जाओ तो देख पाओगे दूबारा भी निर्भीक होने की इच्छा हो रही है। वेद से अभय के सम्बन्ध में सुन्दर मन्त्र उद्धृत करते हैं –

१. यथा: द्यौश्च पृथिवी च न विभीतो न रिष्यतः

एवा मे प्राण मा विभेः॥ अथर्व वेद काण्ड २॥ सूक्त १५॥ मन्त्र १॥

अर्थ – जैसे पृथ्वी और अन्तरीक्ष निर्भीक और कक्षच्युत नहीं होते वैसे ही मेरे प्राण तुम निर्भीक हो जाओ।

२. यथा: हश्च रात्रीच न विभीतो न रिष्यतः

एवा मे प्राण मा विभेः॥ अथर्व वेद काण्ड २॥ सूक्त १५॥ मन्त्र २॥

अर्थ – जैसे दिन और रात्रि निर्भीक और अपने कक्ष से च्युत नहीं होते अर्थात् अटल हैं वैसे ही मेरे प्राण ही तुम निर्भीक हो जाओ।

३. यथा: सूर्यश्च चन्द्रश्च न विभीतो न रिष्यतः

एवा मे प्राण मा विभेः॥ अथर्व वेद काण्ड २॥ सूक्त १५॥ मन्त्र ३॥

अर्थ – जैसे सूर्य चन्द्र कभी अपने गति में टलते नहीं है ठीक वैसे ही हे मेरे प्राण तुम अटल और निर्भीक हो जाओ।

४. यथा: ब्रह्म च क्षत्रं च न विभीतो न रिष्यतः

एवा मे प्राण मा विभेः॥ अथर्व वेद काण्ड २॥ सूक्त १५॥ मन्त्र ४॥

अर्थ – जैसे कि ब्रह्मज्ञानी और वीरयोद्धा निर्भीक और अटल रहते हैं वैसे ही हे मेरे प्राण तुम निर्भीक हो जाओ।

५. यथा: सत्यं च अनृतं च न विभीतो न रिष्यतः

एवा मे प्राण मा विभेः॥ अथर्व वेद काण्ड २॥ सूक्त १५॥ मन्त्र ५॥

अर्थ – जैसे कि ब्रह्म और माया निर्भीक और अपने-अपने नीति पर अटल हैं वैसे ही हे मेरे प्राण तुम निर्भीक हो जाओ।

६. यथा: भूतं च भव्यं च न विभीतो न रिष्यतः

एवा मे प्राण मा विभेः॥ अथर्व वेद काण्ड २॥ सूक्त १५॥ मन्त्र ६॥

अर्थ – जैसे कि अतीत और भविष्य निर्भीक रहता है वैसे ही हे मेरे प्राण तुम निर्भीक हो जाओ।

अहिंसा (प्रेम) – सबके साथ साम्य भाव और सम व्यवहार ही प्रेम है। तुम दूसरे से जैसे बर्ताव पाना चाहते हो वैसे ही बर्ताव दूसरे के साथ करो इसी का नाम है प्रेम। यदि देख पाते हो कि एक मनुष्य तुम से सुविधा कि आशा करता है किन्तु प्रतिदान में तुमको दुर्व्यवहार और अविचार दान करना चाहता है तो तुम्हें सावधान हो जाना चाहिए क्योंकि यह आसुरिक लक्षण है। धर्म के नाम से दूसरे किसी बहाना से अच्छी चीज को लेना चाहते हैं और प्रतिदान में खराब चीज को देना चाहते हैं तो इसे हीन प्रकार के आसुरिक लक्षण जानो। ऐसे मनुष्य को तुम हर समय दूर में रखना, वर्तमान युग में भारत के जातियतावादी नेता अनेक अनीतियों का प्रश्रय देश को भाग करने वालों को दे रहे हैं। उसके फलस्वरूप भारत का बहुत नुकसान हो रहा है। योग शास्त्र में कहा है कि किसी से अहिंसा का बर्ताव करने से उनमें हिंसा नहीं रहता है। किन्तु यह नीति असुरों के साथ नहीं चलता, तुम लोगों को चाहिए कि सदा ही असुरों से बचे रहो।

शान्ति – वैज्ञानिक और दार्शनिक उपासना द्वारा शान्ति लाभ होता है। नित्य यथा समय ब्रह्म उपासना में ब्रती हो जाओ इसी के द्वारा शान्ति वृद्धि होती है।

तेज – यह सर्व श्रेष्ठ दैवी सम्पद है। जो असुर बदमाश गुण्डा आदि नीच प्रकृति के मनुष्य हैं, उनके दमन के लिए शक्ति अर्जन ही तेज हैं। इसके पहले हम कर्म धर्म अध्याय में शक्तिशाली, दुर्बल और आसुरिक – यह तीन प्रकार के कर्म लक्षण के विषय में कहा है। इस दैवीभाव अध्याय में भी तुम लोग तीन प्रकार के मनोभाव देख पाओगे। आसुरिक, दुर्बल और शक्तिशाली। तेज हीन दैवीभाव सदा ही दुर्बल मनोवृत्ति के लक्षण हैं। तेज हीन मनुष्य कापुरुष हुआ करते हैं। तेज हीनता समस्त प्रकार की दैवी सम्पद ग्रहण के अयोग्य बनाते हैं। हमारे देश में जातियता वादी नेता लोग अहिंसा के नाम पर तेज हीनता को लाये हैं।

जो लोग दुर्बल, असुर या असुर समर्थक दुष्ट प्रकृति के मनुष्य हैं वे लोग तेजस्वी मनुष्य को क्रोधी कहने की चेष्टा करते हैं। यह चेष्टा मूर्खता और स्वार्थ के लिए ही करते हैं। तुम लोग विवेक के साथ ही सभी बातों का विचार करना। तेजस्वी लोग सदा संयत भाषी होते हैं। समस्त वेद में गीता आदि उच्चस्तर के धर्म शास्त्र में दुष्ट और आसुरिकों के विरुद्ध में सावधानता और विरोधिता के ऊपर जोर दिये हैं। सभी शास्त्रों में अन्न, वस्त्र और धन वृद्धि द्वारा समाज रक्षा के अनुकूल निर्देश दिया गया। सत्य, प्रेम, शान्ति, अभय और तेज यह पाँच दैवी सम्पदायें बहुत ही ऊँचे श्रेणी का चरित्र गठन की भित्ति हैं। इसे याद रखना।

दम्भ – यह आसुरिक मनोवृत्ति है। अपने को खूब मोटे ताजा समझ और दूसरे को हीन समझने का नाम है दम्भ। दम्भ, मूर्खता, कुशिक्षा और अधर्म मूलक अज्ञान वृत्ति है।

दर्प – दर्प तो दम्भ का ही परिणति है, जिसके मन में दम्भ है वही सज्जनों के ऊपर निष्ठुरता और अपमान जनक व्यवहार दिखाते हैं उसी को दर्प कहते हैं।

अभिमान – अहंकारी मनुष्य बहुत ही प्रेम हीन, युक्तिहीन और स्वार्थी होते हैं।

क्रोध – कोई विषय है जिसमें तुम्हारा न्यायतः अधिकार नहीं है फिर भी उसे तुम पाना चाहते हो, और उसमें कोई विरोधी खड़े होने पर तुम सहन नहीं कर सकोगे। वहाँ जो प्रतिरोध वृत्ति मन में उदय होती है उसी का नाम है क्रोध। क्रोधी मनुष्यों को वाधा देने के लिए जो मनुष्य खड़े होते हैं उसी को तेजवान मनुष्य जानो वे ईश्वर तुल्य हैं।

पारुष्य याने निष्ठुरता – युक्ति नहीं है अधिकार भी नहीं है प्रयोजन भी नहीं है तब भी सज्जन को पीड़न और अशान्ति देने के अनुष्ठान का नाम है बर्बरता या पारुष्य। बर्बर राजा या नेता शक्तिमान असुर मात्र है। ऐसे पशु लोग ईश्वर को भी एक बर्बर प्रस्तुत करके धर्मशास्त्र और दल बनाते हैं। धर्म ते नाम पर या इजम के नाम में पृथ्वी पर बर्बरता या पारुष्य बहुत हुआ है।

देवता विज्ञान का यह ही मूल विज्ञान है। इस पृथ्वी पर दैवी भाव को अपने चरित्र में जो लोग अधिक प्रतिफलित करते हैं जिनका चरित्र जगत के जनमंगलकारी है और असुरों के विरोधी होता है वही देवता है। सूरज, चन्द्र, नदी, हवा, अग्नि प्रभृति अनेक प्रकार के मंगल के कारण हमारे लिए हैं। उसी कारण ये भी देवता हैं। जो लोग असुर होते हैं उनका मन पशुतुल्य होता है। वे सब मंगल कारक कारणों को कभी देवता नहीं मानते हैं यदि ये लोग इन सब वस्तुओं में देवता माने तो उन लोगों की आसुरिक वृत्ति कम हो जायेगी। वे लोग दुनियाँ में आये हैं अत्याचार करने। वे लोग कभी अपने में संशोधन नहीं करना चाहते हैं इन सब लक्षणों द्वारा मनुष्य पहचाना और शक्ति का अर्जन करना चाहिए।

सूर्य, चन्द्र, गंगा, यमुना, हिमालय आदि मंगलमय प्रकृति को हमलोग सिर्फ देवता ही नहीं मानते हैं बल्कि उनलोगों को हमारे अन्तर या शरीर के एक-एक मूल्यवान अंश भी बनाकर रखे हैं। इन सब मूल्यवान अंशों को शक्तिमान रखने के लिये हमारे धर्म में नाना प्रकार की प्रक्रिया योग-विधान व संध्या पूजादि के विधान में है। जैसे सूर्य = चक्षु (Optic nerve), चन्द्र = मन, गंगा = इड़ानाड़ी, जिस नाड़ी में ज्ञान का प्रभाव होता है। यमुना = पिंगला, सरस्वती = सुषुम्ना, हिमालय = मेरुदण्ड और सुषुम्ना पथ में स्थित सुशीतल पदार्थ। मेरुदण्ड निर्माण कुछ अस्थि पर्वत द्वारा होता है जिसमें शीतल पदार्थ भरा रहता है। उसी के मध्य में ब्रह्मनाड़ी है। इसी कारण हिमालय हमारे लिए एक दिव्य तीर्थ है। अनेक अस्थि द्वारा निर्मित होने के कारण मेरुदण्ड को पर्वत कहते हैं। हमलोग हिमालय को अर्थात् मेरुदण्ड को समस्त प्रकार के देवता गंधर्व आदि के आश्रय का स्थान कहते हैं। देवता उपासना का अर्थ यही होता है कि शरीर के मूल्यवान अंशों के सहायता द्वारा ज्ञान और कर्मशक्ति को बढ़ाना चाहिए। उनलोगों की पवित्रता की रक्षा करने से हमारा शरीर व हमारा देश पवित्र होता है।

निर्गुण ब्रह्म, सगुण ब्रह्म और देवताओं के विषय में तुम्हारी धारणा और भी स्पष्ट कर सकते हो यथा— ब्रह्मनाड़ी ब्रह्म या आत्मा है। तुम कितना ही वेदान्त क्यों न पढ़ो जब तक योग के द्वारा मनको ब्रह्मनाड़ी में प्रवेश न करा सकते हो तब तक तुम्हारे मन की दीनता-भाव नष्ट नहीं हो सकती। इसी कारण ब्रह्मनाड़ी ही हमारे लिए ब्रह्म, ईश्वर या शक्ति है। इस ब्रह्मनाड़ी के मस्तिष्क स्थित अंश में पाँच सगुण ब्रह्म का केन्द्र है यथा – गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव और शक्ति।

लक्ष्मी, सरस्वती, कार्तिक आदि कैसे देवता हैं उनके लिए प्रश्न तुम्हारे मनमें आ सकता है। विष्णु स्तर की शक्ति ही लक्ष्मी है।

समाज रक्षा के लिए अन्न वस्त्र और धनका प्रयोजन है। इस कारण लक्ष्मी विष्णु शक्ति का अंश है। सरस्वती ज्ञान शक्ति। वेद वेदान्त दर्शन योग तन्त्र आदि का समष्टि

सरस्वती है। कार्तिक वीरत्व के प्रतीक; तेज रूपी दैवी भाव। इन्द्र = असुरनाशक और सुख के युग के प्रतिष्ठायक नेता या राजा के प्रतीक। जो कि तेज का प्रतीक है। प्राण = वायु। रुद्र = मन और शरीर की उष्णता। अग्नि = तेज क्षुधा जठराग्नि इत्यादि।

तुमलोग छान्दोग्य उपनिषद् को पाठ करोगे तो देख पाओगे कि अनेक प्रकार की उपासना के उपदेश उसमें विद्यमान हैं किन्तु सब उपासना ही ॐ मन्त्र में और उसे ब्रह्म ज्ञान या ब्रह्मनाड़ी समझकर करने के लिये उपदेश दिया गया है। तुमलोग ब्रह्मनाड़ी के ध्यान द्वारा और ॐ मन्त्र से सब उपासना ही कर सकोगे। उसके बाद जब कि तुम्हारा मन धीरे धीरे उन्नत ज्ञानभूमि में प्रवेश करते रहेगा उस समय देवता, असुर, गन्धर्व, सगुण ब्रह्म, निर्गुण ब्रह्म सभी तुम ठीक ठीक समझ सकोगे। उस समय यह भी समझ सकोगे की शरीर तत्व और मनस्तत्व के सूक्ष्म और सूक्ष्मतर ज्ञान लाभ भी ब्रह्मज्ञान और देवता, गन्धर्व, असुर, सगुण ब्रह्म सभी मनस्तत्व के विभिन्न स्तर हैं। इन लोगों के ज्ञान के बिना हमलोगों की तृप्ति नहीं हो सकती और हमारे समाज धर्म, राजधर्म, शिक्षा और किसी प्रकार के कार्य भी मनुष्यों के लिए मंगलकारक नहीं हो सकेगा।

सिन्धु का जल, नदी एवं नहर में जाने पर भी सिन्धु का जल है। ऐसे ही निर्गुण ब्रह्म, सगुण ब्रह्म एवं देवता एक ही ब्रह्म का विस्तार मात्र है। तुमलोगों को चाहिये कि असुरवाद से सदा दूर रहो या उसको समाज से उखाड़ कर फेंक दो। क्योंकि असुरवाद से ब्रह्मज्ञान सभी समय दूर में रहता है। ब्रह्मनाड़ी को ध्यान करके तुमलोग किसी भी देवता की उपासना करो वह तुम्हारे लिए शुभ दायक होगा।

पितृ उपासना

माता-पिता उनलोगों के पिता-माता और भी पूर्व पुरुष के धारा पर यदि हमलोग आलोचना करें तो देखेंगे कि हम किसी न किसी ऋषि की सन्तान हैं। ऋषिगण सभी प्रजापति के मानस पुत्र हैं, यह प्रजापति व्यापक ईश्वर के निम्नतम स्वरूप है। इसको समष्टि की मानस भूमि कहा जाता है। इस प्रजापति के उच्च स्तर का नाम है हिरण्यगर्भ या विष्णु। इस हिरण्यगर्भ की समष्टि को चित्तभूमि कहा जाता है। इस हिरण्यगर्भ से उन्नत स्तर का नाम है रुद्र स्तर या शिव स्तर। यहाँ पर समस्त जीवों का अहं समष्टि रहता है। पंच महाभूत की सूक्ष्मतम कण भी यहीं रहता है। इस शिवभूमि के ऊपर के स्तर का नाम है शक्तिस्तर या ब्रह्मस्तर या पुरुषोत्तम स्तर।

हिरण्यगर्भ से आरम्भ करके शक्तिस्तर पर्यन्त प्रत्येक स्तर में और भी स्तर भेद है। इतना जान रखो कि हम तुम और हमारा तुम्हारा शरीर यहाँ पर एक अनादि ब्रह्मशक्ति का एक स्थूल परिणति है। तुम, हम और हमलोगों के पिता माता से लेकर ब्रह्मशक्ति के स्तर तक यह जो सृष्टि की क्रमधारा है इस क्रमधारा को पितृ जगत कहते हैं। इस धारा की उपासना को पितृ उपासना कहते हैं। सिन्धु का जल और सिन्धु संयुक्त नहर के जल को एक ही जल समझो। जो लोग नहर के पास में रहते हैं नाव में चढ़कर धीरे धीरे सिन्धु पहुँच जाते हैं। ठीक उसी तरह सिद्ध ब्रह्मज्ञानी महात्मा लोग ब्रह्मज्ञान के स्तर में रहते हैं। जो लोग उनके अपेक्षाकृत निम्न स्तर के महात्मा हैं वे लोग दैवी सम्पद या देवता भाव की धारा को ग्रहण कर ब्रह्मज्ञान के स्तर का कुछ आभास लाभ करते हैं। जिन लोगों में दैवी भाव कम है वे लोग पितृधारा अवलम्बन करके ब्रह्मज्ञान की ओर अग्रसर होते हैं। पितृधारा जैसे सिन्धु नहर का ही शाखा प्रशाखा है।

जो लोग राजनीति, धर्मनीति, शिक्षानीति, विज्ञाननीति के केन्द्र में अवस्थित है वे लोग भी एक-एक शक्तिशाली पुरुष हैं। राजनीति = शक्तिस्तर। धर्मनीति = शिवस्तर। समाजनीति = विष्णुस्तर। शिक्षानीति = सूर्यस्तर। विज्ञाननीति = गणेशस्तर। इसी प्रकार एक एक मनुष्य खण्ड ईश्वरीय शक्ति में से शक्तिमान रहते हैं। सबसे निम्न में पृथ्वी स्थित स्थूल धारा है जिसमें साधारण मनुष्य रहते हैं। हम लोग किसी भी धारा में रहे हमलोगों को सब समय ब्रह्मनाड़ी को केन्द्र करके अग्रसर होना पड़ता है। तभी हमलोगों की उपासना का लक्ष्य उच्च होता है।

अब तुमलोग पूछ सकते हो कि ईसाई और मुसलमान लोग अल्ला या गाँड की उपासना करते हैं, वह कौन स्तर है? कुरान का अल्ला या बाइबेल का गाँड एक ही वस्तु है। किन्तु उनलोगों के उपासना के साथ वैज्ञानिक या दार्शनिक दृष्टि नहीं है। वे लोग जैसे चाहें विश्वास करें उससे तकरार करना हमारी नीति नहीं है। गाँड रविवार को विश्राम करते हैं, आल्ला विश्राम करते हैं शुक्रवार। यहूदियों का गाँड विश्राम करते हैं शनिवार। इससे मालुम होता है कि इन तीनों में एकता नहीं है। इन लोगों में दैवी भाव कहाँ तक है उसका चर्चा करना हमारा काम नहीं है। कुरान में एक महीना रोजा रखने का आदेश है किन्तु उससे ब्रह्मचर्य या संयम का अंश नहीं है। रोजा में अवाध रूप में स्त्री-सम्भोग का आदेश है। अतः हमारे दार्शनिकता, धर्मतत्व में गाँड और आल्ला में भेद बहुत है।

पितृ धारा को केन्द्र करके जो उपासना होता है उसमें शरीर की शुद्धता की वृद्धि होती है। इसी कारण श्राद्ध और तर्पण आदि में दीर्घ समय व्यापी ब्रह्मचर्य धारण करना पड़ता है। तुमलोग जान रखो कि व्यायाम, स्वास्थ्यरक्षा का विधिपालन और ब्रह्मचर्य द्वारा शरीर की शुद्धि होती है। इसको ब्रह्मज्ञान का ही अंग माना गया है। इसी का नाम पितृ धारा में ब्रह्म उपासना है। पितृ धारा में शरीर शुद्धि, दैवी धारा में भाव शुद्धि, शक्ति

और ब्रह्म धारा में नीति शुद्धि के पथ को अवलम्बन करके हमलोग ब्रह्म और ब्रह्मशक्ति के उपासना में व्रती होते हैं। जो लोग सीधे ब्रह्मज्ञान के पथ पर चलना चाहते हैं, वे लोग विवाह आदि संसार धर्म में प्रवेश न करके योग एवं ब्रह्मचर्य द्वारा आत्म शुद्धि करते हुए ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करते हैं। हमारे शास्त्र में पितृ धारा, दैव धारा, शक्ति धारा और आत्म शुद्धि इत्यादि सभी पथ का अनुशीलन सबको करना पड़ता है। यह सब धारा के सम्बन्ध में जितना तुमलोग आलोचना करोगे उतना ही हिन्दू धर्म के मर्म और विज्ञान के देख कर मुग्ध हो जाओगे।

प्रेत उपासना

प्रेत उपासना को समझाना कुछ कठिन है, किन्तु शास्त्र में जिसकी आलोचना है, हमें भी उस पर कुछ कहना पड़ेगा। प्रेत के सम्बन्ध में अत्यधिक किंवदन्ती समाज में प्रचलित है। उसी कारण प्रेत के विषय में आलोचना करने से अनेक मनुष्य भयभीत हो जाते हैं। हम कह देना चाहते हैं कि प्रेतों से डरने का कुछ नहीं है। मनुष्यों के मृत्यु के बाद शरीर रह जाती है और आत्मा चली जाती है। शरीर का उपादान धीरे-धीरे अपना-परिणति को प्राप्त करता है। किन्तु आत्मा का कुछ परिवर्तन नहीं होता। वह सब समय अमर ही रह जाता है। एक मनुष्य को जैसा तुम देख रहे हो शरीर छोड़ने के बाद उसकी स्थिति ठीक वैसी ही रह जाती है। विशेष यह है कि शरीर से आत्मा अलग हो गया है। शरीर रहना या न रहना ज्ञानी की दृष्टि में एक ही रूप है। शरीर का आकार, मन, प्राण, बुद्धि, विवेक सब आत्मा के साथ अच्छेद रूप में जड़ित रहता है। वैसे ही शरीर त्यक्त आत्मा को यदि भोग, मोह और कामादि का विशेष प्रबल आकर्षण रह जाय तो वह पृथ्वी के बहुत निकट चला आता है। वे लोग कुछ दिन तक अपने को शरीर हीन अवस्था की परिस्थिति के साथ मिला नहीं सकते। जिससे उनके मन में आसक्ति रहती है और वह अपने परिजनों के पास में रहना भी चाहती है। परिजनों में किसी समय एक या दो ऐसे भी रहते हैं कि उसे देख लेते हैं, जिससे परिजनों को बहुत ही भय लगता है। वे उस प्रेत से बचना भी चाहते हैं। वह पितृ पूजा, पिण्ड दान और गया पिण्ड भी करते हैं। इसी को प्रेत अवस्था कहते हैं। आत्मा के लिए प्रेत अवस्था दुख एवं अशान्ति दायक है। प्रेत दशा के उच्च और उच्चतम दशा भी हैं। वे लोग किसी के डराते नहीं क्योंकि वे लोग अपने अवस्था को समझते हैं और शान्ति में रहना चाहते हैं।

इसके पहले हम तुमलोगों को ईश्वरीय ज्ञान के अनेक स्तरों के विषय में कहा गया था। जैसे— १। प्रजापति स्तर या समष्टि मन, २। हिरण्य गर्भ या समष्टि चित्त या विष्णु, ३। तान्मात्रिक स्तर (शिव स्तर), ४। शक्तिस्तर। पहले हम कह चुके हैं कि सब

स्तरों का शाखा स्तर भी है। प्रत्येक स्तर में आत्मार्ये रहती हैं। हमारा मन जितना उच्च दर्जे में चला जाता है, हमारे मन के मानसिक स्तर के साथ उतना ही उच्च स्तर के आत्माओं का संयोग होता है। यह सब आत्मार्ये हमारे विचार, विवेक, त्याग, योग, वीरत्व और आत्मज्ञान इत्यादि के विषय में हम लोगों को अलक्षित रूप में सहायता भी करते हैं। अनेक समय अनेक विषय की जटिलता हम लोगों में आ जाती है और अलौकिक शक्ति द्वारा उसका मीमांसा भी हो जाता है, क्योंकि उन्नत स्तर के आत्मा लोग हम लोगों की मदद करते हैं।

एकमात्र शक्तिपूजा के मन्त्रों में उन्नत स्तर के भूतपूजा की विधि देख पाते हैं। दुर्गा पूजा में इस अंश को भूतपूजा कहते हैं। उन्नत स्तर के भूतपूजा के मन्त्रों को अधिकतर वेद से ही लिया गया है।

अनेक मूर्तिपूजक साधक पाये जाते हैं, वे बड़े सज्जन व भक्तिमान भी हैं। किन्तु व्यापक ईश्वर तत्व को नहीं जानते। उन लोगों की धारणा यह है कि मूर्ति ही ईश्वर है। उन लोगों की भक्ति के प्रभाव में अनेक समय उन्नत स्तर के आत्मा लोग अभीष्ट मूर्ति को धारण करके दर्शन देते हैं। अनेक भक्तिमान साधक और मूर्ति उपासक ध्यान करते-करते शरीर भी त्याग करते हैं। वे सब देव-देवी के मूर्ति धारण कर देव मन्दिर में या अपने स्तर के अनुसार कहीं अवस्थान करते हैं। वे सब महात्मागण भक्तों को दर्शन भी देते हैं। ऐसे शक्तिमान प्रेतों की शक्ति बहुत अधिक नहीं है। तुमलोग सब समय दार्शनिकता, युक्ति और ब्रह्मज्ञान की तरफ अग्रसर होने की चेष्टा करना। अनेक साधक अपने समाधि या कब्र के निकट प्रेत शरीर धारण कर अवस्थान करते हैं और बहुत काल तक अपने प्रभाव विस्तार पूर्वक भक्ति, पूजा आदि भी ग्रहण करते हैं। अनेक समय अनेक शक्तिशाली नेता द्वारा अप्रत्याशित भूल होकर एक जाति का सर्वनाश होते हुए भी देखा गया है। हिटलर के जीवन में ऐसा ही एक भूल हुआ था, यह उनके मन के प्रेत जगत् के प्रभाव द्वारा ही हुआ था, इसमें कोई सन्देह नहीं। काली, कृष्ण, गौंड व अल्लाह दर्शनकारी अनेक भक्त हैं जो कि प्रेत दर्शक मात्र हैं। तुमलोगों को प्रचलित सभी किस्म की उपासना का रहस्य बताया गया और अब तुमलोग सब समय शक्तिवाद का अनुसरण करते हुए ब्रह्म उपासना की ओर विकास लक्ष्य में अग्रसर होना। १। स्वास्थ्यरक्षा एवं ब्रह्मचर्य के विधान और व्यायाम द्वारा शरीर को शुद्ध रखना पड़ेगा। २। दैवी सम्पत्ति के अनुशीलन द्वारा मन की तेजस्विता एवं उदारता की वृद्धि करना पड़ेगा। ३। संघवद्ध रहकर उन्नत नीतिज्ञान को संसार में प्रतिष्ठा करना पड़ेगा और आसुरिकों को कठोर नीति द्वारा दमन करना पड़ेगा। ४। ब्रह्मनाड़ी ध्यान द्वारा योगानुशीलन और आत्मशुद्धि आयत्व करना पड़ेगा। आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान लाभ करने के लिए अग्रसर होना पड़ेगा। ५। उन्नत प्रेत जगत् तुमलोगों को आप से आप मदद देने रहेंगे। उसके लिए किसी प्रकार

की उपासना का प्रयोजन नहीं है। दुर्गा मूर्ति, काली मूर्ति, तारा मूर्ति और दस महाविद्या की मूर्ति पर व प्राचीन सब देव-देवी पर विशेष श्रद्धा रखते चलो। यथा विधि शक्ति पूजा होनी चाहिए, उसके फलस्वरूप उन्नत स्तर के भूतगण तुम्हें सदा ही मदद देते रहेंगे। किसी भी प्रकार के महामारी, राष्ट्रविप्लव और समाज विप्लव के समय महाशक्ति की पूजा करके नेतागण निश्चय ही शक्ति अर्जन करने की चेष्टा करेंगे। महाशक्ति की पूजा विधि और मूर्तियाँ अत्यन्त आश्चर्यजनक आविष्कार हैं।

शीतला मूर्ति

इसके पहले तुम लोगों को महावीर हनुमानजी, शिव और नारायण मूर्ति के विषय में कहा गया है। हमारे देश में दो प्रकार की मूर्तियाँ हैं। एक तो यन्त्र मूर्ति है और दूसरी शिल्प मूर्ति। शिवलिंग नारायण शिला पताका ये सब यन्त्र मूर्तियाँ हैं। तन्त्रशास्त्र में अनेक प्रकार की यन्त्र मूर्तियाँ हैं। तुम लोग दुर्गापूजा और काली पूजा में यन्त्र अंकित करने का विधान देखने से सब समझ सकोगे। शिल्प मूर्तियों में हाथ-पैर, चक्षु, मुख सभी रहता है।

तुम लोग शीतला मूर्ति देखे होंगे। वसन्तरोग (चेचक) के प्रकोप के समय में इस मूर्ति को बनाकर शक्ति पूजा होता है। एक गदहा, एक सूप, एक झाड़ू, एक जलपूर्ण घड़ा और एक महामान्य शक्तिमूर्ति उसमें तुम लोग देख पाओगे।

गदहा – प्राचीन काल में शहर और गाँव का कूड़ा ढोने के लिए प्रयोग होता था। उसे अच्छत पशु मानते हैं। इनमें अनेक गुण हैं। यह जीव गर्मी के दिन में बहुत शीतल रहता है। इसके शरीर में गर्मी का ताप नहीं लगता और इन लोगों को कभी वसन्तरोग नहीं होता।

सूप – रास्ते का मैला और कूड़ा उठाने के लिए इसका व्यवहार होता है। आजकल कार्पोरेशन टिन के सूप को व्यवहार करते हैं।

झाड़ू – मकान-गृह, रास्ता, दीवाल आदि को साफ करने के लिए झाड़ू का प्रयोग होता है। जलपूर्ण कलसी नाला सड़ा हुआ स्थान धोने के लिए जल और झाड़ु का प्रयोग कैसे होता है वह तुम लोग जानते हो।

शक्ति मूर्ति – इसका अर्थ प्रत्येक को अपने शक्ति प्रयोग द्वारा मकान गृह, रास्ता, शहर, सब स्थान को स्वच्छ रखना चाहिए। इसके द्वारा चेचक आदि कठिन रोग उत्पन्न नहीं होगा।

कैसे इस प्रकार की शीतला मूर्ति का आविष्कार हुआ था, वह हम लोग नहीं जानते। हमारी समझ में आता है कि किसी जमाने में एक श्रेष्ठ महिला गाँव और शहर

का व्यापक रोग के समय उसको परिष्कार करके रोग हटाने के व्रत को ग्रहण किया था। यह आदर्श इतना कृतकार्य हुआ कि वह किसी भी गाँव में जाती और सफाई करती थी तो गाँव रोग से मुक्त हो जाता था। परवर्ती काल में हमलोग उन्हीं का आदर्श लेकर शहर और वस्ती को साफ करके जनपद को रोग से मुक्त करते हैं। तुमलोग शीतला महाशक्ति की उपासना के समय भी गायत्री ब्रह्मनाड़ी ध्यान और ब्रह्मस्तोत्रादि पाठ करना क्योंकि यह साक्षात् ब्रह्म शक्ति की आराधना है। काली, दुर्गा प्रभृति शक्ति मूर्ति ठीक ऐसे ही समाज सेवा का श्रेष्ठ आदर्श ज्ञापक मूर्तियाँ हैं। समाज-सेवा ईश्वर-उपासना ये सब प्रकार की शक्ति उपासना ही है, देवता उपासना, मूर्ति विज्ञान में इसी बात का प्रचार हुआ है। ध्यान, ज्ञान और योग के साथ समाज सेवा का श्रेष्ठ और शक्तिशाली आदर्श तुम अवलम्बन करो। यही ईश्वर भक्ति है।

हमारे देश में ग्रह, नक्षत्र, राशि, राग, रागिनी और योगादि क्रिया का भी मूर्ति आविष्कार किया गया है। तुमलोग अपने मकान पर दस महाविद्या और इन सब मूर्तियों को रखो और इनके रहस्य के विषय में सोचो।

अस्त्र प्रतीक (कृपाण)

शिव, नारायण, शीतला मूर्ति प्रभृतिओं के सम्बन्ध में कहा गया है अब तुमलोगों को अस्त्र प्रतीक (कृपाण) के सम्बन्ध में कुछ कहेंगे। त्रिशूल, कृपाण, शंख, चक्र, गदा, पद्म, अंकुश, नागपाश, दण्ड (जण्डि), घण्टा, वीणा, प्रभृति को अस्त्र प्रतीक कहते हैं। तुमलोग दुर्गापूजा देखने से देख पाओगे कि अनेक प्रकार के अस्त्र प्रतीक के पूजा का विधान उसमें है। एक-एक अस्त्र एक एक देवता स्वरूप है। जैसे— कृपाण = महाशक्ति दुर्गा = तेज। त्रिशूल शिव = शान्ति या ज्ञान। चक्र = विष्णु (संगठन)। अंकुश = गणेश (संयम)। देवता पूजा के अध्याय में देख पाओगे कि दैवी भाव और असुर भाव का आदर्श पर पृथ्वी का कल्याण व अकल्याण निर्भर करता है। प्रत्येक राजा के गृह में कृपाण पूजा की व्यवस्था है। कृपाण का अन्य नाम था भवानी। अभी तक हमारे देश में उच्च प्रतिष्ठित वंश में कृपाण का पूजा हुआ करता है। तुमलोग शिवाजी के भवानी (कृपाण) का नाम सुना होगा। कथित है कि शिवाजी भवानी की कृपा से सहज में ही युद्ध को जय कर सकते थे। श्री रामदास स्वामी कृपाण को शिवाजी का प्रिय बनाये थे। गुरु गोविन्द सिंह कृपाण को शिख समाज का रक्षक बनाये थे। नेपाली क्षत्रियगण कृपाण के प्रसाद से आज भी स्वाधीन जाति के सम्मान से सम्मानित हैं। कृपाण के उत्सव और कृपाण का जलूस विजया दशमी में निकालने का प्रधान दिन है। आत्म विकाश के पथ में मनुष्य जिस समय ठीक-ठीक आत्मज्ञान को प्राप्त करते हैं, उस समय उनके कार्य द्वारा समाज

की रक्षा और असुर का नाश के आदर्श प्रतिष्ठा लाभ करते हैं। कृपाण की पूजा द्वारा वीरत्व और एकता का अर्जन करना चाहिए।

उपासना में अग्नि, जल, और ब्रह्मनाड़ी

जब तुमलोग पूजा पद्धति को पढ़ोगे तो देख पाओगे कि सभी पूजा में यज्ञ का विधान है और सब पूजा ही में जल का यथेष्ट प्रयोग होता है। अग्नि, जल और ब्रह्मनाड़ी का ध्यान आदि के साथ मन्त्र का यथा-यथ प्रयोग ही पूजा का असल अवलम्बन है। और सब वस्तु और उपचार नैवेद्य आदि सब ही गौण अवलम्बन है। वे न देने पर भी उपासना चलता है।

अग्नि – तेज ही श्रेष्ठ देवी सम्पद है। तेज और अग्नि एक ही चीज है। शरीर के भीतर मूलाधार और मणिपुर चक्र में इसका केन्द्र विद्यमान है।

जल का प्रयोग सन्ध्या विधान में विशेष रूप में स्थान पाया है। इससे शान्ति वृद्धि होती है। ब्रह्मनाड़ी के ध्यान से मन को एकाग्र और तेजस्वी बनाता है।

ज्ञान धर्म

तुम लोगों के लिए ज्ञानधर्म को समझना कुछ कठिन होगा। पृथ्वी में मात्र हिन्दू धर्म ज्ञानधर्म है। और किसी भी धर्म में दार्शनिकता नहीं है। अन्य धर्म से यदि तुम 'क्या' और 'क्यों' पूछे तो विश्वास वादी लोग तुम लोगों के ऊपर अत्यन्त असहिष्णु होकर आक्रमण करेंगे। क्योंकि इसका जवाब देने से उनके धर्म की भित्ति टूट जायेगी। किन्तु हिन्दू धर्म के लिए यह बात नहीं है। हिन्दू धर्म में युक्तिवाद विद्यमान है। इसी कारण हिन्दू धर्म पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ धर्म है। जिस धर्म में ज्ञान धर्म और दार्शनिकता नहीं है वह धर्म पशुओं के लिए या बर्बर मनुष्यों के लिए हो सकता है। ज्ञान धर्म में युक्तिहीन विश्वास वादिता और पाखण्डपन का स्थान नहीं है। यह सृष्टि क्यों? तुम हम क्यों? बालक वृद्ध क्यों? यह पृथ्वी ग्रह नक्षत्र आदि क्यों? कोई पैर से चलते हैं और कोई उड़ते हैं। अनेक जीव हैं जो कि एक ही स्थान में रहकर जीवन व्यतीत कर देते हैं। ऐसा क्यों? ऐसे ही प्रश्न में मनुष्यों का मन सदा ही व्यस्त रहा करता है। मनुष्यों के कर्म, उपासना और ज्ञान, समस्त रीतिनीति के मूल में क्या है? ईश्वर, जीव, पृथ्वी, प्रकृति, आत्मा सभी विषयों में मनुष्य योग्य उत्तर की इच्छा करते हैं, किन्तु तुमलोग आश्चर्य चकित होंगे कि उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर हिन्दूधर्म छोड़कर किसी भी धर्म में नहीं है। मन जिसके द्वारा इन सब प्रश्नों का मीमांसा पाते हैं उसका नाम है ज्ञान।

मनुष्यों के ज्ञान की तृप्ति के उपाय हिन्दूशास्त्र में तीन प्रकार से निर्दिष्ट हैं। (१) अनुभूति, (२) युक्ति, (३) ऋषि या वेद वाक्य।

‘अनुभूति’ यदि समझना चाहो तो योग शास्त्र का मन्थन करना पड़ेगा और योगाभ्यास भी करना पड़ेगा। ‘युक्तिज्ञान’ को जानना चाहते हो तो दर्शन शास्त्र का आलोचना करना पड़ेगा। ‘ऋषिवाक्यों’ को समझना चाहो तो वेद पाठ करना पड़ेगा। योगाभ्यास और साधना का अवलम्बन रहे तो गीता, चण्डी, उपनिषद और रुद्री का आलोचना करने से तुम अनेक चीज को जान जाओगे।

कितना ही शास्त्र क्यों ना पड़ो जब तक अनुभूति नहीं मिलती है तब तक मन को तृप्ति मिलना कठिन है। सब ज्ञान के मूल में अनुभूति ज्ञान प्रधान है। हम उसके विषय में धीरे-धीरे कहते हैं।

ग्रन्थि भेद ज्ञान

पहले तुम लोगों को ब्रह्म नाड़ी के सम्बन्ध में कहा गया है। ब्रह्म नाड़ी स्थित भूः भुवः स्वः महः जनः तपः और सत्यम् इत्यादि ही हर एक मर्मस्थान में किस प्रकार के मनोविज्ञान अवस्थान करते हैं उसके सम्बन्ध में योग शास्त्र और तन्त्रशास्त्र में देख पाओगे (क्रम विकास अष्टम अध्याय देखो)। ब्रह्मनाड़ी में हमारी आत्मा रहने पर भी आत्म हम लोगों को सीधे परिचालित नहीं करती। यदि आत्मा या ब्रह्म नाड़ी परिचालित करते तो हमारे प्रत्येक मनुष्यों की चिन्ता और कर्म धारा श्री कृष्ण जौसा या गीता ज्ञान के समकक्ष होता। असली बात यह है कि ब्रह्म नाड़ी या हमारी आत्मा एक-एक प्रकार की ग्रन्थि द्वारा आवृत रहता है। कुवासना, कुमोह, कुधर्म, कुचेष्टा फिर उच्चलक्ष्य, अध्यात्म प्रेम, युक्ति वाद, सुधर्म, सुबुद्धि, विकास चेष्टा आदि विभिन्न भावापन्न मनुष्य हम लोग देखते हैं।

ब्रह्म ग्रन्थि – भविष्यत् की आशा, आकांक्षा और भोग की कल्पना में हमारा मन सदा ही डूबा रहता है। तुम देख पाओगे कि हम लोग कितना आशा और कल्पना करते हैं, फिर यह भी देखोगे कि एक भी आशा पूर्ण नहीं हो रही है। तब भी कल्पना करके हम लोग हैरान हो जाते हैं। कल्पना को हम लोग त्याग भी नहीं कर सकते। इसका क्या कारण है जानते हो? इसका कारण यह है कि मन एक ग्रन्थि में आबद्ध रहता है। उस ग्रन्थि का नाम है ब्रह्म ग्रन्थि। नाभी चक्र में यह ग्रन्थि रहता है। योग के क्रिया या योगियों की सहायता के बिना इस बृथा कल्पना की ग्रन्थि भेद करना सहज नहीं है। यह ग्रन्थि भेद होने के बाद मन का योग शक्ति अर्थात् मन का स्वाभाविक व्यापकत्व हमारे आयत्व में आ जाता है और हमारे मन का आराम भी बड़ जाता है। इस ग्रन्थि भेद के

बाद हम लोगों के मन की शक्ति बहुत बड़ जाती है। हम लोग अनेक विषय में निश्चिन्त भी रह जाते हैं। भविष्य की वृथा कल्पना ब्रह्म ग्रन्थि भेद होने के बाद समाप्त हो जाती है। योग शास्त्र में इसे मणिपूर ग्रन्थि कहते हैं।

विष्णुग्रन्थि – ब्रह्म ग्रन्थि के रहस्य भेद होने के बाद कुछ दिन पर्यन्त मन बहुत ही आराम में रहता है। यदि मोह का सम्बन्ध कहीं न रहे या ऐसे सम्बन्ध हम लोग किसी से न करें तो मन का आराम नहीं जा सकता, किन्तु देखा गया है कि किसी अज्ञान शक्ति के इशारे पर स्नेह, प्रेम की प्ररणा से मन कहीं बढ़ हो गया है और मन अपने स्वाभाविक योग-शक्ति को भी खो दिया है, तो मन को आयत्त्व में रखना भी कठिन हो जाता है। युक्ति, उपाय, विवेक, विचार सब कहीं बह जा रहे हैं और अन्तःकरण क्षत-विक्षत हो रहा है। योग के अनुशीलन द्वारा और शक्तिशाली योगी गुरु की सहायता द्वारा मन की इस ग्रन्थि को भी भेद किया जा सकता है। पूर्वोक्त ब्रह्म ग्रन्थि भेद होने के बाद मन जितना व्यापक निर्मल हो गया था वह विष्णु ग्रन्थि भेद होने कि बाद मन की व्यापकत्व और निर्मलत्व और भी वृद्धि हो जायेगी और मन की आराम स्थिति भी बड़ जायेगी। यह महः लोक की ग्रन्थि है। ब्रह्म ग्रन्थि भेद के बाद कुछ दिन मन की स्थिति इतना निर्मल रहता है कि मालूम होता है कि अब मेरा ब्रह्मज्ञान हो गया। फिर विष्णु ग्रन्थि के बाद भी मन में विश्वास हो जाता है कि अब मेरा ब्रह्मज्ञान हो गया, किन्तु कुछ समय बाद देखा जायेगा कि अब भी अज्ञान ग्रन्थि विद्यमान है। इसके पहले हम नारायण शिला के विषय में इस विष्णु ग्रन्थि की ही बात कहे थे। यह ग्रन्थि ही हिरण्य गर्भ ग्रन्थि है और यही विष्णु ग्रन्थि है।

रुद्र ग्रन्थि – विष्णु ग्रन्थि भेद के बाद साधक को मनोविज्ञान के अनेक रहस्य आयत्त में आ जाता है। पहले साधक मानते हैं कि अब हमारा ठीक-ठीक ज्ञान और शक्ति आयत्त में आ गया है। किन्तु कार्य क्षेत्र में कुछ दिन बाद देखा जायेगा कि अनेक विक्षेप है जिसके ऊपर हमारा बिल्कुल आयत्त नहीं है। उस समय कारण को ढूँढ़ने से मालूम हो जायेगा कि एक केन्द्र हमारे मन में है जो कि मोह के बीजों को पकड़ के रक्खे हैं और मन की चंचलता और आराम को वाधा दे रहा है। चेष्टा द्वारा 'अहं' ग्रन्थि भी भेद होने से समस्त प्रकार का पक्षपातित्व और दुर्वलत्व से हमारा मन मुक्त हो जाता है। इस अवस्था में हमारे ठीक-ठीक तत्व ज्ञान का स्फूरण हो सकता है। अब हमारा मन हर एक प्रकार 'क्यों' और 'क्या' प्रश्न का ज्ञान लाभ कर सकते हैं। ऐसी ही सब ग्रन्थि के भेद हो जाने के बाद अनुशीलन द्वारा सब ज्ञान ही आयत्त में आ जायेगा। साधु चरित्र पाठ करने से देख पाओगे कि अनेक महापुरुषों के भीतर भी वैषम्य व्यवहार और पक्षपातित्व बहुत है। इससे तुम लोग विस्मित हो जाओगे कि ग्रन्थि ज्ञान को जानते हैं ऐसे महात्मा बहुत ही कम हैं। मस्तिष्क के मध्य स्थित अहं केन्द्र को भित्ति करके रुद्र

ग्रन्थि है। (मस्तिष्क केन्द्र चित्र में ४ चिह्नित केन्द्र के एक हिस्से में अहं केन्द्र रहता है।) यह तपः लोक की ग्रन्थि है। इस ग्रन्थि भेद के बाद हमारे ठीक-ठीक सत्य ज्ञान लाभ होता है। मस्तिष्क के मध्यस्थित शिव-पिण्ड-ध्यान द्वारा इस ग्रन्थि को भेद करने की शक्ति को आयत्त करना पड़ता है। इसी का नाम आज्ञा चक्र ग्रन्थि है।

मर्म रहस्य ज्ञान और मर्म भेद ज्ञान दो ही 'अध्यात्मज्ञान' हैं। ऐसे दो प्रकार के ज्ञान न रहे तो जीवन सुन्दर और पूर्ण नहीं होता है। हमारे जीवन एकाधार में ऐसे ही दो जीवन का समष्टि है। मर्म केन्द्र हमारे जीवन को कैसे परिचालित करना चाहते हैं और मर्म भेदित आत्मा या ब्रह्मनाड़ी हम लोगों के जीवन को किस प्रकार परिचालना करते हैं इसको जो जान पाते हैं वही ठीक-ठीक जानी हैं। इसके सम्बन्ध में वेद, तन्त्र और योग शास्त्र में विस्तृत रूप में आलोचना है। हम गीता से कुछ श्लोक उद्धृत कर इसके रहस्य को व्यक्त करेंगे। गीता में इन सब मर्म केन्द्र संयुक्त शरीर को क्षेत्र कहकर प्रकाश किये हैं। इन सब मर्म को जानने वाला आत्मा को क्षेत्रज्ञ नाम दिया है।

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।

एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥ १३-१॥

अर्थ – हे कौन्तेय अर्जुन, इस शरीर को क्षेत्र कहते हैं। इस क्षेत्र के जानने वाले को क्षेत्रज्ञ कहा जाता है।

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।

क्षेत्र क्षेत्रज्ञयोजानं यत्तज् ज्ञानं मतं मम॥ १३-२॥

अर्थ – हे भारत, हमें अर्थात् आत्मा को सर्व क्षेत्र का क्षेत्रज्ञ जानना चाहिए। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के सम्बन्ध में जो ज्ञान है उसी का नाम है ज्ञान।

तत् क्षेत्रं यच्च यादृक् च यद्विकारी यतश्च यत्।

स च यो यत् प्रभावश्च तत् समासेन मे शृणु॥ १३-३॥

अर्थ – वह क्षेत्र कैसा है, और उसका विकार किस रूप में है, उस विकार को कैसे संयम किया जाता है उसका प्रभाव किस प्रकार का है संक्षेप में उसको सुनो –

ऋषिभिर्वहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।

ब्रह्मसूत्र पदेश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चतैः॥ १३-४॥

अर्थ – ऋषिगण उस क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के सम्बन्ध में अनेक प्रकार से वेद मन्त्र में कहे हैं और ब्रह्मसूत्र पद द्वारा उसका युक्तियुक्त वर्णन किया है।

महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च।

इन्द्रियाणि दशैकञ्च पञ्च चेन्द्रिय गोचराः॥ १३-५॥

अर्थ – पंच महाभूत, अहंकार, बुद्धि, अव्यक्त, दस इन्द्रिय, पाँच प्रकार के विषय (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द) है।

इच्छाद्वेषः सुखं दुखं संघातश्चेतना धृतिः।

एतत् क्षेत्रं समासेन सविकार मुदाहृतम्॥ १३-६॥

अर्थ – इच्छा, द्वेष, सुख, दुख, संघात, चेतना (ज्ञान), धृति संक्षेप में यही क्षेत्र है।

तुमलोग इन सभी लक्षणों को जान रखो। पंच महाभूत क्षिति, अप, तेज, मरुत्, व्योम। क्षिति का केन्द्र मूलाधार, अपका केन्द्र स्वाधिष्ठान, तेज का केन्द्र मणिपुर, मरुत् का केन्द्र अनाहत, व्योम का केन्द्र विशुद्धाख्य में। अहं केन्द्र मस्तिष्क में है (मस्तिष्क केन्द्र चित्र ४ नः)। बुद्धि केन्द्र आज्ञा केन्द्र में है (मस्तिष्क केन्द्र चित्र ७ नः)। दस इन्द्रियों का सभी केन्द्र शिवपिण्ड में है। बाहर जगत स्थित रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्दज्ञान विभिन्न इन्द्रिय द्वारा पहले मस्तिष्क के भीतर विज्ञानमय कोष में प्रवेश करते हैं। मस्तिष्क के कोन कोन केन्द्र मनोमय कोष में रहता है वह तुमलोगों को समझना कठिन होगा। (क्रम विकास देखो) इच्छा का प्रधान केन्द्र मणिपुर में है। द्वेष, सुख, दुख हृदय में रहता है। संघात प्राण केन्द्र में रहता है (मस्तिष्क केन्द्र चित्र ९ नः)। चेतना = ज्ञान (मस्तिष्क केन्द्र चित्र ५ नः केन्द्र), धृति बुद्धि केन्द्र (मस्तिष्क केन्द्र चित्र ७ नः केन्द्र) और शान्ति केन्द्र (मस्तिष्क केन्द्र चित्र ४ नः केन्द्र) के मिश्र शक्ति।

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्न लोकमिमं रविः।

क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत॥ १३-३३॥

अर्थ – हे भारत जिस प्रकार एक ही सूरज समस्त पृथ्वी को आलोकित करते हैं ठीक उसी प्रकार क्षेत्री एक ही है और सब क्षेत्रों को प्रकाशित करते हैं।

क्षेत्र क्षेत्रज्ञयोरेव मन्तरं ज्ञान चक्षुषा।

भूत प्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम॥ १३-३४॥

अर्थ – ज्ञान चक्षु द्वारा क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का भेद जान सकते हो। और जो लोग पंचभूत का प्रकृति और उससे मुक्ति का उपाय जानते हैं वे लोग आत्मा को भी जान सकते हैं।

ग्रन्थिज्ञान और ग्रन्थिभेद विज्ञान ही क्षेत्र ज्ञान है। आत्मा इस शरीर में कैसा निर्मल और निर्लिप्त है यदि तुम उसको जान सकोगे तो क्षेत्रज्ञ का ज्ञान भी तुम्हें लाभ होगा। ग्रन्थि और ग्रन्थिभेद ज्ञान दो एक बात में स्पष्ट नहीं हो सकता, यह बहुत ही विज्ञान सम्मत ज्ञान है और असली ज्ञान है।

दार्शनिक ज्ञान

वैशेषिक, न्याय, सांख्य, पातंजल, दैवीमीमांसा, कर्ममीमांसा और ब्रह्ममीमांसा उपरोक्त सात हमारे दर्शनशास्त्र हैं। यह छोड़कर भी हमारे यहाँ अनेक दर्शनशास्त्र हैं। इसमें दैवीमीमांसा दर्शन इस समय नहीं मिलता है। इसके अनुकूल में नारदीय भक्तिसूत्र और साण्डिल्य सूत्र का सामान्य अंश मिलता है। ब्रह्मसूत्र का भक्तिवाद व्याख्या भी अनेक हुआ है। अतः दैवीमीमांसा दर्शन का अभाव अब नहीं रह गया। हमारे ख्याल से ज्योतिषशास्त्र ही दैवी मीमांसा दर्शन है। ज्ञान के अनेक भूमि होने के कारण दर्शनशास्त्र भी अनेक है।

सांख्य, पातंजल और ब्रह्मसूत्र के ज्ञान रहे तो सब दर्शनशास्त्रों का ज्ञान संक्षेप में हमलोग जान सकते हैं।

सांख्य के मत में सृष्टि में निम्नलिखित तत्व है। १. पुरुष (ज्ञ), २. अव्यक्त (प्रकृति), ३. महत (व्यक्त), ४. अहंतत्व, ५. मन (मनोमय कोष ही मन है, इनके अन्तर्गत मन, बुद्धि, चित्त और अभिमान यह चार मार्ग हैं), ६. पंच महाभूत (क्षिति, अप, तेज, मरुत, व्योम) ७. दस इन्द्रियों (चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वचा, वाक्, पाणि, पाद, उपस्थ, गुदा) सब मिलाकर पच्चीस हुए। इसी का अन्य नाम है, २४ तत्व। इन लोगों में मात्र पुरुष ही क्षेत्रज्ञ और सभी क्षेत्र हैं। इसके लक्षण और तत्व के सम्बन्ध में विस्तारित आलोचना यहाँ पर सम्भव नहीं है।

पातंजली इन सब तत्व के ऊपर और भी एक तत्व स्वीकार किये हैं जिसका नाम है 'ईश्वर'। ईश्वर २४ तत्वों के समष्टिभूत एक तत्व है।

वेदान्त में शंकरभाष्य के मतानुसार ईश्वर एक सक्रिय ब्रह्म है। इसका दूसरा नाम है 'माया उपहित चैतन्य'। इस मत में ईश्वर और २४ तत्व सभी माया है। और इन लोगों का अस्तित्व नहीं है। इन सब में एक निष्क्रिय ब्रह्म सत्य मात्र है। हमलोग उपासना काण्ड में निर्गुण ब्रह्म और सगुण ब्रह्म दोनों के विषय में कहे हैं। जो जिसे ठीक समझे उसे व माने। हमलोग दोनों को मानते हैं। बार बार आलोचना करने के बाद यह धर्मशिक्षा तुम लोगों के लिए कठिन नहीं मालूम होगा।

महामन्त्र ज्ञान

वेद में ब्रह्मतत्व के विषय में कुछ मन्त्र है जिसको महामन्त्र कहते हैं।

१— ॐ तत्त्वमसि (सामवेद)। अर्थ — तुम्हीं ब्रह्मतत्व के स्वरूप हो।

- २- ॐ प्रज्ञानम् आनन्दम् ब्रह्म (सामवेद)। अर्थ - प्रज्ञान और आनन्द ही ब्रह्म है।
- ३- ॐ अहं ब्रह्मास्मि (यजुर्वेद)। अर्थ - मैं ही ब्रह्म हूँ।
- ४- ॐ अयमात्मा ब्रह्म (अथर्ववेद)। अर्थ - यह आत्मा ही ब्रह्म है।
- ५- ॐ सर्वं खल्विदम् ब्रह्म। अर्थ - सब निश्चय ही ब्रह्म है। इस महामन्त्र को तुमलोग जातीय ध्वनि के रूप में प्रयोग में लाना।
- ६- ॐ सत्यम् ज्ञानम् आनन्दम् ब्रह्म। अर्थ - ब्रह्म सत्य ज्ञान और आनन्द रूप है।
- ७- ॐ सत्यम् ज्ञानम् अनन्तम् ब्रह्म। अर्थ - ब्रह्म सत्य ज्ञान और अनन्त स्वरूप है।
- ८- ॐ सत्यम् ज्ञानम् अमृतम् ब्रह्म। अर्थ - ब्रह्म सत्य ज्ञान और अमृत स्वरूप है।
- ९- ॐ सत्यम् ज्ञानम् अभयम् ब्रह्म। अर्थ - ब्रह्म सत्य ज्ञान और अभय स्वरूप है।
- १०- ॐ तत् सत् ॐ। अर्थ - ज्ञान स्वरूप ब्रह्म, उपासना स्वरूप ब्रह्म, कर्म स्वरूप ब्रह्म है।
- ११- ॐ हरिः ॐ। ॐ = निर्गुण ब्रह्म, हरिः = सगुण ब्रह्म, ॐ = निर्गुण ब्रह्म।

सृष्टि के विभिन्न स्तर का ज्ञान

सृष्टि में कुल चार स्तर हैं - (१) सृष्टि का शक्ति स्तर, (२) सृष्टि का ज्ञान-विज्ञान स्तर, (३) सृष्टि का दैव स्तर, (४) सृष्टि का स्थूल स्तर।

१। सृष्टि का शक्ति स्तर - इस स्तर के अन्तर्गत तीन स्तर हैं।

(क) निर्गुण ब्रह्म स्तर।

(ख) सगुण ब्रह्म या माया उपहित चेतन या ईश्वर इस स्तर में शक्तिक्रिया में क्रियाशील रह कर सृष्टि, स्थिति और लय क्रिया का कार्य होता रहता है।

(ग) अव्यक्त - अव्यक्त कैसा है, इस तत्त्व को जानने के लिए तुम्हारे लिए असुविधा होगी, तुमलोग जान लो कि अव्यक्त है एक ज्योतिहीन आवरण, जिसके एक ओर में सगुण और निर्गुण ब्रह्म और दूसरे ओर में सृष्टि चक्र है। इस सृष्टि चक्र का आधार ही अव्यक्त है।

२। सृष्टि के ज्ञान विज्ञान स्तर में महत, पंचतन्मात्र और हमारे सब अहंकार अवस्थान करते हैं। इस स्तर के अन्तर्गत दो स्तर खींचा जा सकता है। (क) महत (ज्ञान जगत), (ख) तन्मात्र जगत।

(क) महत या ज्ञानमय या ध्वनिमय या शब्द ब्रह्म। सगुण ब्रह्म स्तर में कई एक शक्ति के मिश्रण में यह ज्ञानमय स्तर सृष्टि होता है। महत के आश्रय में पंचतन्मात्र और हमारे समस्त जीवों के अहं बीज सृष्टि होता है। पंच तन्मात्र कणा और जीव बीजकणा महत जगत में सृष्टि होता है किन्तु ये महत जगत में रहते नहीं हैं। यह तन्मात्र जगत में चले जाते हैं।

(ख) तन्मात्र जगत – इस जगत में सृष्टि का तन्मात्र उपादान और जीवों का अहं बीज रूप में स्थित रहता है। हमारे शरीर और विश्व ब्रह्माण्ड सृष्टि के लिए जो क्षिति आदि मूल कणाओं (तन्मात्र) का प्रयोजन होता है सभी यहाँ रहते हैं। यह शान्ति जगत है। इस स्थान में अहंकार भी रहता है।

३। सृष्टि का दैव स्तर – यह ही सृष्टि का हिरण्यगर्भ है। यहाँ पर जीवों का बीज सुखमय रूप लाभ करता है। एक बीज में और एक अंकुर में जितने भेद हैं, बीज जगत का जीव बीजों के साथ सुखमय आवरण में आवरित जीव बीज में उतना ही भेद है। इस दैव सृष्टि के अन्तर्गत और भी एक स्तर है। उसका नाम प्रजापति स्तर है। हिरण्यगर्भ हमारे समष्टि चित्त है या समष्टि का सुखमय स्तर है। और प्रजापति हमारे समष्टि के मन का स्तर है।

४। सृष्टि का स्थूल स्तर – इसको सृष्टि का विश्वरूप कहा जाता है। पृथ्वी, ग्रह, नक्षत्र और हमारे शरीर का स्थूल अंश इस स्तर के अन्तर्गत है। आजकल सूर्य को केन्द्र करके इस सृष्टि के विषय में अनेक आलोचना चल रहा है।

सृष्टि के स्थूल स्तर में हमारा शरीर अवस्थित है। दैव सृष्टि के स्तर में हमारा मन, प्रेम, कल्पना और स्वप्न का जगत अवस्थित है। सृष्टि के विज्ञान जगत के निकटवर्ती स्थान में हमलोग सुषुप्ति के समय में अवस्थान करते हैं। किन्तु सृष्टि के विज्ञान और ज्ञान के स्तर में हम बिना समाधि के नहीं पहुँच सकते हैं। सृष्टि के शक्ति स्तर में हमारी आत्मा रहती है। इस स्तर में हम सभी की आत्मा एक ही आत्मा है।

स्थूल सृष्टि के स्तर को विश्व कहते हैं। दैव सृष्टि के स्तर को तैजस कहते हैं। और विज्ञान सृष्टि के स्तर को प्राज्ञ कहते हैं। सृष्टि के शक्ति स्तर को तूर्या कहते हैं। तूर्या निष्क्रिय अवस्था का नाम है। इसके पहले हम तर्पण में ब्रह्म (शक्ति स्तर), रुद्र (विज्ञान), विष्णु (हिरण्य गर्भ), प्रजापति (समष्टिमन या ब्रह्मा) प्रभृति तर्पण के कथा में तुम लोगों को कहा है। इस प्रकार से सृष्टि के विभिन्न स्तर अवस्थित हैं।

उपनिषद का ज्ञान

१। तदेजति तन्नैजति तदूरे तद्वन्तिके ।

तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः॥ ईश ५॥

अर्थ – आत्मा चल है एवं आत्मा अचल है, आत्मा बहुत दूर और बहुत निकट भी है। आत्मा सभी वस्तु के अन्तर में बाहर में अवस्थित है। चल = क्रियाशील या सगुण ब्रह्म। अचल = निष्कल ब्रह्म। आत्मा दूर में = हमलोग जब तक ज्ञानहीन हैं तब तक हमलोग आत्मा से दूर ही में रहते हैं। हमलोग ज्ञानी हो जाय तो हमारे लिए आत्मा निकट में हो जायगा।

२। यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति ।

सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ॥ ईश ६॥

अर्थ – जो आत्मा को सर्व भूत में देखते हैं, और सर्वभूत को आत्मा में देखते हैं वे किसी से घृणा नहीं करते हैं।

३। स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम् अस्नाविरँ शुद्धमपापविद्धम् ।

कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूःयाथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥ ईश ८॥

अर्थ – आत्मा अशरीर (नाड़ी, मस), आत्मा निर्मल, आत्मा अपाप विद्ध, आत्मा ज्ञानमय, आत्मा प्रभू, आत्मा सर्वश्रेष्ठ, आत्मा स्वयम्भू, आत्मा सर्वव्यापी, आत्मा के नियम में प्रजापति गण माने सगुण ब्रह्म गण अपने अपने कर्तव्य को सम्पादन करते हैं।

४। तं दुर्दर्शं गूढमनुप्रविष्टं गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम् ।

अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति ॥ कठ ४१॥

अर्थ – आप (आत्मा) दुर्ज्ञेय हैं। आप गुह्य हैं, आप सर्वभूत के अभ्यन्तर में प्रविष्ट हैं और सबके बुद्धि रूप गुहा में अवस्थित हैं। आप सनातन हैं और अध्यात्मयोग माने समाधि द्वारा धीर व्यक्ति आत्मा को अवगत होकर हर्ष और शोक अतिक्रम करते हैं।

५। सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति

तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति

तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्॥ कठ ४४॥

अर्थ – समस्त वेद जिस तत्त्व को एकमात्र लक्ष्य या पाने योग्य समझकर निर्देश करते हैं। समस्त प्रकार की तपस्या जिसके प्राप्ति के लिए होता है। जिसे प्राप्ति करने के

लिए साधुगण ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करते हैं। हम संक्षेप में कहते हैं कि 'ॐकार' ही वही तत्व है।

६। एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म एतद्ध्येवाक्षरं परम् ।

एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत् ॥ कठ ४५॥

अर्थ – यह अक्षर ॐ ही ब्रह्म स्वरूप है। यह अक्षर ही परम तत्व है। इस अक्षर को जानकर जो जैसी इच्छा करे उसको वही सिद्ध हो जाता है।

७। एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम् ।

एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते ॥ कठ ४६॥

अर्थ – यह ॐकार ही श्रेष्ठ अवलम्बन है। इस अवलम्बन को जान सकोगे तो ब्रह्म तुल्य पूज्य हो जाओगे।

८। अशरीरं शरीरेष्वनवस्थेष्ववस्थितम् ।

महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति ॥ कठ ५१॥

अर्थ – आत्मा शरीर में ही है किन्तु आत्मा शरीर नहीं है। आत्मा महत और व्यापक है। धीर व्यक्ति आत्मा को जान कर दुख को अतिक्रम करते हैं।

९। अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं

तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत् ।

अनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं

निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते ॥ कठ ६९॥

अर्थ – आत्मा जो कि अशब्द, अस्पर्श, अरूप, अगन्ध, नित्य, आदि, अन्तहीन, जो कि महत से भी श्रेष्ठ सत्य है उनको जानकर मृत्यु के बन्धन से मुक्ति प्राप्त करते हैं।

१०। अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो

रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव ।

एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा

रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च ॥ कठ ९५॥

अर्थ – एक अग्नि जिस प्रकार दुनिया में प्रवेश करके हर एक रूप के अनुरूप रूप को धारण करते हैं वैसे ही एक ही आत्मा जो कि सर्वभूत के अनंतर में स्थित है वह नानारूप होकर के अवस्थित है। और बाहर में व्याप्त है। (आकाशस्थ) हवा, जल, बर्फ आदि समस्त पदार्थ ही में कुछ न कुछ ताप है। यह ताप ही अग्नि है। यह ताप स्थिति किस प्रकार हमारे अन्तर और बाहर स्थित है और सर्व भूत के भीतर और बाहर में आकाश में व्याप्त होकर स्थित है, उसको समझ सकोगे तो आत्मा का व्यापकत्व भी

समझना सहज होगा। आत्मा के व्यापकत्व को समझने के लिए यह उपमा बहुत ही सुन्दर है।

११। एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा
एकं रूपं बहुधा यः करोति ।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीराः
तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम् ॥ कठ ९८॥

अर्थ – वशी (सर्वनियन्ता) एक है, आप सर्वभूत के अन्तर स्थित आत्मा हैं। आप एक होकर भी अनेकरूप में अपने को सृष्टि करते हैं। उस परमात्मा को जितने धीर व्यक्ति अपने अन्तर के भीतर देखते हैं उन्हीं को शाश्वत सुख को प्राप्ति होती है दूसरे को नहीं।

१२। एको देवः सर्वभूतेषु गूढः,
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः,
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥ श्वेताश्वर ६-११ ॥

अर्थ – आप एकमात्र देवता हैं जो कि सर्वभूत में गोपनरूप से अवस्थित हैं। आप सर्वव्यापी हैं। सर्वभूत के अन्तर आत्मा हैं। आप सर्वकर्म के नियामक हैं। समस्त सृष्टि आपमें अवस्थित है। आप साक्षीस्वरूप, आप चैतन्य स्वरूप, आप निराला और निर्गुण परमेश्वर हैं।

उपनिषद ही हिन्दूधर्म का मूल है। उपनिषद के विज्ञानवाद व्याख्या में बौद्धवाद प्रतिष्ठित है। गीता उपनिषद के शक्तिवाद व्याख्या के स्वरूप है। हमारे देश में वैष्णव चिन्ता में और रवीन्द्रनाथ के लेख में उपनिषद का भाववाद परिकल्पना बहुत स्पष्टरूप में स्थान पाया है। उपनिषद का शक्तिवाद स्वरूप हमारे शक्तिवाद भाष्य गीता में देखो। उससे हमारे जातीय जीवन के सर्व दुर्बलता टूट जायेगा। आचार्य शंकर उपनिषद का शक्तिवाद परिकल्पना को अर्थात् गीता को ब्रह्मवाद का व्याख्या किये थे। आचार्य शंकर के उपनिषद के टिप्पणी भी ब्रह्मवाद के भित्ति पर प्रतिष्ठित है। गीता और उपनिषद के टिप्पणी लिखने के पहले सबको चाहिए कि वेद के संहिता भाग को पाठ करें।

कर्म, उपासना और ज्ञान के सम्बन्ध में जितने तत्व को प्रकाश किया गया उससे तुमलोग अपने जीवन को ज्ञानमय और कर्ममय करने कि लिए सब कुछ समझ सकोगे। हमारा धर्म बहुत महान है। हमारा समाज भी महान है। हमारे धर्म और समाज प्रवर्तक

महात्मा लोग बहुत उच्चकोटि के मनुष्य हैं। वे लोग हमारे जन्मभूमि के प्रत्येक अणु-परमाणु को महान और पवित्र बना दिये। तुमलोग यह सब बातें सोचो व समझकर अपने जीवन को सुखमय बनाओ। मूर्खता, बर्बरता और आसुरिकता का उच्छेद करो और मानव जीवन के आनन्द को लौटाओ।

धर्म ग्रन्थ

यदि तुमलोगों से पूछा जाय कि तुम्हारे धर्मग्रन्थ का क्या नाम है? तुम गर्व के साथ जवाब दो कि वेद ही हमारा धर्मशास्त्र है। इस वेद के विषय में तुमलोगों को कुछ धारणा रहनी चाहिए। हम उस विषय पर अब कहेंगे।

आत्मा के आश्रय में ज्ञान सदाकाल विद्यमान है। यह ज्ञान ही वेद है। जैसे:- एक वस्त्र को बनाने के लिए यथेष्ट बुद्धि शक्ति, कर्म शक्ति और ज्ञान शक्ति का प्रयोजन है वैसे ही अन्तकरण में और समाज जीवन में शान्ति को प्रतिष्ठित रखने के लिए यथेष्ट ज्ञान और कर्म शक्ति का प्रयोजन है। सर्वप्रकार के लौकिक और अलौकिक प्रयोजन की स्थापना के लिए जितने प्रकार ज्ञान का प्रयोजन है, वेद वे सभी ज्ञान के समष्टि हैं। ऋषिगण आत्मध्यान द्वारा और गवेषणा द्वारा समस्त प्रकार के ज्ञान को आयत्त करते थे, इसी का नाम है तपस्या। उनलोगों के वे सब ज्ञान राशि मन्त्र के आकार में वेद में विद्यमान है। आत्मा में स्थित चिरसत्य ज्ञान को जानने के लिए जो तपस्या करते हैं, वही ऋषि हैं। दुनिया में हमीलोग सिर्फ कह सकते हैं कि वेद की अधिकारी हमलोग हैं और उससे हम गर्वित हैं। हमलोग ही कह सकते हैं कि ऋषि हमारे आदि पिता हैं। वेद की सब शाखा इस समय नहीं पायी जाती है। जितने मिलती है उसका ही संग्रह एक प्रकाण्ड ग्रन्थ है।

वेद, अनुभूति और ज्ञान एक ही बात है। वेद का और एक नाम है 'श्रुति'। एकयुग में ऋषिगण वेद के सत्य को तपस्या द्वारा प्राप्त करते थे। इस कारण वेद का नाम वेद है। किन्तु परवर्ती काल में गुरु तथा आचार्य के पास में श्रवण करके इसको आयत्त किया जाता था। जिस कारण वेद का अन्य नाम है श्रुति। वेद के चार भाग हैं। यथा - ऋग, साम, यजु व अथर्व। संगीत, पद्य और गद्य तीन प्रकार में वैदिक मन्त्र को पाया जाता है। जिस कारण वेद के एक नाम है 'त्रयी'। वेद को भित्ति करके शासन विज्ञान प्रस्तुत होने से उसका नाम होता है 'स्मृति'। दर्शनशास्त्र और समाज व्यवस्था मूलक ग्रन्थ सभी स्मृति नामक ग्रन्थ से ख्यात है। प्रत्येक वेद के तीन भाग हैं। यथा - संहिता, ब्राह्मण और उपनिषद्। स्तुति प्रधान मन्त्र के समूह ही संहिता है।

संहिता में स्तुति कथा के रूप में सब प्रकार का ज्ञान निहित है। हमारे सब प्रकार के कर्तव्य और अकर्तव्य इन मन्त्रों में पाये जाते हैं। ब्राह्मण भाग में यज्ञादि का विधान और संहिता भाग का व्याख्या दिया गया है। संहिता भाग में भी कुछ कुछ उपनिषद पाया जाता है। अनेक पण्डितों की धारणा है कि उपनिषद संहिता भाग से कुछ आधुनिक है। हमलोग इसे स्वीकार नहीं करते क्योंकि संहिताभाग में भी उपनिषद है। यह तो सत्य बात है कि वर्तमान समय में जितने उपनिषद पाए जाते हैं उसमें अनेक उपनिषद आधुनिक हैं। इन सब उपनिषदों के सत्य और संहिता भाग में प्राप्य सत्य एक ही रूप है। अतः हम निश्चय करके कह सकते हैं कि उपनिषद और संहिता एक ही युग का ज्ञान है। नाना प्रकार के उपधर्म, शाखाधर्म और पूजारीवाद नामक लौकिकधर्म को प्रतिष्ठा देने के लिए भी कुछ उपनिषद लिखि हुआ है। संहिता के माफिक ब्राह्मण और उपनिषद के अनेक अंश अप्राप्य हैं। वेदको समझने के लिए षडंग वेद को पढ़ना पड़ता है।

(१) शिक्षा – अक्षर और शब्द उच्चारण के विज्ञान सम्बन्धीय ग्रन्थ को शिक्षा कहते हैं। याज्ञबल्क्य, पाणिनी, कत्यायणी प्रभृति महर्षिगण द्वारा लिखित शिक्षा ग्रन्थ है।

(२) निरुक्त – वैदिकशब्द के कोष। महर्षि यास्क के कोष मिलते हैं। दुनिया में यही प्रथम अभिधान है।

(३) कल्प – यज्ञादि की व्यवस्था, औषध आदि का विधान। महर्षि विश्वामित्र और वशिष्ट के कल्प ग्रन्थ है।

(४) छन्द – वैदिक मन्त्रों के उच्चारण विज्ञान। यह पद्य विषयक है।

(५) व्याकरण – वैदिक भाषा का विज्ञान। महर्षि पाणिनी का व्याकरण है।

(६) ज्योतिष – ग्रह नक्षत्र, पृथ्वी और राशियों के गति और स्थिति सम्बन्धीय तथ्यपूर्ण विराट् ग्रन्थ – वेद को भित्तिकर के दुर्बल वाद का प्रश्रय न हो सके इसके लिए इन सब वैज्ञानिक ग्रन्थों का पाठ वेद पाठ के अंग रूप हैं। चन्द्र, सूर्य, पृथ्वी और ग्रहों की गति के सम्बन्ध में हमारे ऋषि लोग पूर्ण ज्ञानी थे। ज्योतिष उसी का वैज्ञानिक ग्रन्थ है।

उपवेद – वेद का विशेष सम्बन्धीय उपवेद है। सामवेदका उपवेद –गान्धर्व वेद (संगीत विषयक), यजुर्वेद का उपवेद – धनुर्वेद (अस्त्र शास्त्र तथा रण विद्या विषयक), ऋग वेद का उपवेद – आयुर्वेद (शरीरतत्व और चिकित्सा विषयक)। अथर्व वेद का उपवेद – अर्थवेद (राजनीति, कूट नीति सर्व प्रकार के जड़ विज्ञान, वाणिज्य और धन विज्ञान विषयक)।

स्मृति – मनु, पराशर, याज्ञबल्क्य, शंख प्रभृति महर्षि लोगों का स्मृति शास्त्र है। दर्शन शास्त्र भी स्मृति नाम में प्रसिद्ध है।

पुराण – अठारह पुराण प्रसिद्ध हैं। तथा – ब्राह्म, पाज्य, वैष्णव, शैव, भागवत, नारदीय, मार्कण्डेय अग्निपुराण, भविष्य पुराण, ब्रह्म वैवर्त पुराण, लिंग पुराण, वाराह पुराण, स्कन्ध पुराण, वामन पुराण, कूर्म पुराण, मत्स्य पुराण, गरुड़ पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण, यह छोड़ के भी कुछ उप पुराण भी हैं। पुराणों में अनेक वैदिक तत्त्वों की मीमांसा है। इतिहास, विज्ञान, योग, और तन्त्र शास्त्र आदि का भी अनेक मीमांसा पुराणों में है। बहुत विषय हैं जिसका माने नहीं समझ में आता है। अनेक पुराण में कुछ प्रक्षिप्त कथा भी हैं। किसी-किसी ब्राह्मण ग्रन्थ में मीमांसा पुराणों को उपवेद कहा गया है। पुराणों को मन्वन्तर के इतिहास विषयक ग्रन्थ जानो। समस्त पृथ्वी में एक युग में हिन्दू धर्म प्रचलित रहा, पुराण में उसका आभास मिलता है।

रामायण और महाभारत – ये ऐतिहासिक ग्रन्थ हैं। इन दोनों में कुछ काव्य भाव भी हैं। पुराणों की अनेक कथा इसमें मिलती हैं। हिन्दुओं की प्राचीन सभ्यता की सभी बातें रामायण महाभारत में मिलती हैं। गीता महाभारत के ही एक अध्याय का नाम है।

तन्त्रशास्त्र – तन्त्रशास्त्र के प्रधान प्रवर्तक महर्षि कपिल हैं। कपिल का आश्रम सागर संगम में रहा। प्रतिवर्ष मकर संक्रान्ति के दिन इस स्थान में एक विराट मेला होता है। इसमें भारत के सभी प्रान्तों से मनुष्य आते हैं। और भारत के बाहर से भी अनेक देश के धर्मार्थी यहाँ पर एकत्रित होते हैं। तन्त्रशास्त्र में तीन प्रकार के चिन्ता धारा मिलते हैं। उसके एक धारा में अत्यन्त उच्च स्तर की दार्शनिकता और योग विद्या की बात है। शक्ति स्तर के सब योग विद्या एक मात्र तन्त्र शास्त्र में ही है। तन्त्र के एक दिक् हैं जिसमें मारण, उचाटन, वशीकरण, स्तम्भन और रोग आदि के शान्ति विधान हैं। अनेक लोगों की धारणा है कि यह सब ही तन्त्र का असल विषय है। तन्त्र का और एक दिक् है जो कि शिव स्तर के योग विद्या से परिपूर्ण है। सब तन्त्र शास्त्र ही आनुष्ठानिक विद्या के अन्तर्गत है। गुरु बिना इसमें प्रवेश कठिन है। किसी-किसी ब्राह्मण ग्रन्थ में तन्त्र को उपवेद कहा है। वेद जैसे लौकिक एवं अलौकिक विषय का तथ्यपूर्ण विराट ग्रन्थ है, तन्त्र भी वैसे ही लौकिक-अलौकिक सब प्रकार के जीवन के लिए विराट चिन्ताराशि है। समाज, राजनीति, ज्योतिष, चिकित्सा, शरीर तत्व, रसायन, संगीत किसी भी ओर देखो, देख पाओगे कि तन्त्र वेद के ज्ञान को उच्च आनुष्ठानिक स्थान में प्रतिष्ठा दे रहे हैं। अनेक स्थान की चिन्ता धारा इतनी गम्भीर है कि मालूम होता है कि वेद की तरह तन्त्र भी एक मौलिक चिन्ता धारा की संस्थान है। और मालूम होता है कि यह वेद से भी प्राचीन है। इसके पहले हम शिव मूर्ति के बारे में कहते हैं। यह मूर्ति भी तन्त्र का दान है। सब तरह की मूर्ति तन्त्र का दान है। तुम यदि महानिर्वाण तन्त्र का पाठ करते हो तो तन्त्र के विषय में बहुत कुछ जान लोगे। बहुत छोटा तन्त्र में ज्ञान संकलिनी तन्त्र बहुत अच्छा तन्त्र है। बंगदेशीय पूजा विधान में तान्त्रिक योग विद्या प्रचुर परिमाण में विद्यमान है।

ऐसा देख पाओगे, भारतवर्ष, तिब्बत, अफगानिस्तान, पारस्य, अफ्रिका, अमेरिका प्रभृति पृथ्वी के सब देश में और सभी जगह तान्त्रिक विद्या का केन्द्र पाया जाता है। भारत में बंग, नेपाल, महाराष्ट्र, काश्मीर में तन्त्र विद्या बहुत प्रसिद्ध लाभ किया था। समस्त एसिया, अफ्रिका, अमेरिका सर्वत्र तान्त्रिक साधना प्रचलित था। अभी तक है।

योग शास्त्र – यह तन्त्र विद्या का ही एक शाखा है। शक्ति स्तर का योग विद्या के लिए तन्त्र छोड़कर और कहीं कुछ नहीं है। शिव स्तर के योग विद्या के लिए जो योग शास्त्र है, उसे 'अष्टांग योग' कहते हैं। दार्शनिक ज्ञान को प्राप्त करने के लिए यह आनुष्ठानिक योग शास्त्र है। मन की क्रमशः उच्चस्तर में विकसित करने के लिए अष्टांग योग बहुत अच्छा पथ है। शिव संहिता, अष्टावक्र संहिता आदि ग्रन्थावली योग के विषय में अच्छा विचार दिया है।

रुद्री – संहिता (वेद) भाग का सारांश रुद्री है। इसमें वेद का ज्ञान विषयक सभी बातें छोटी आकार में विद्यमान है। इस रुद्री पाठ द्वारा विश्वनाथ की आरती हुआ करती है जिसमें छोटे आठ अध्याय हैं। वेद का कर्म धर्म, उपासना धर्म और ज्ञान धर्म का सारांश रुद्री में मिलेगा। यह असुर के विरुद्ध में युद्ध विषयक ग्रन्थ है। इसके दूसरे अध्याय को पुरुष सूक्त कहते हैं। इसके विश्वरूप स्तुति जानो।

गीता – द्वापर युग का विप्लव ग्रन्थ महाभारत का अंश गीता है। इसमें वेद का कर्म विज्ञान, उपासना विज्ञान और ज्ञान धर्म की सभी बातें स्थान पाई हैं। असुर के विरुद्ध में युद्ध करना ही पड़ेगा इस नीति को भित्ति करके जो योग दार्शनिकता और मनोविज्ञान हिन्दूधर्म के भित्ति स्वरूप है इसकी पूर्ण आलोचना गीता में है। हमारे लिखित गीता के शक्तिवाद भाष्य सबके लिए लाभदायक होगा।

चण्डी – यह सत्ययुग का समाज विप्लव का इतिहास है। यह इतिहास मनोविज्ञान के स्तरों के साथ स्थान पाया है। जिस कारण इसकी प्रयोजनीयता हमारे समाज जीवन के लिए बहुत ही उपादेय है। आत्मा को या महाशक्ति को माँ कहकर उपासना करने का रहस्य चण्डी में बहुत अच्छा तरह स्थान पाया है। बंगाल का दुर्गापूजा अब समस्त पृथ्वी में फैल गया है। और इसका आधार चण्डीग्रन्थ है। असुरों के विरुद्ध लड़ने के लिए रुद्री, गीता और चण्डी एक ही नीति के समर्थक हैं। गायत्री उपासना को चण्डी का ही उपासना जानो, चण्डी भक्ति प्रधान उच्चस्तर का शक्तिवाद ग्रन्थ है। इसमें राजनीति, समाजनीति और दार्शनिक विज्ञान परिपूर्णता के साथ स्थान पाया है। वेद भिन्न और सब ग्रन्थों के विषय में जो कुछ कहा गया है सबको वेद का शाखा जानो। चण्डी में दार्शनिकता से परिपूर्ण चार स्तुतियाँ हैं। उसमें कम से कम एक या दो स्तुति तुमलोग आयत्त करके रखोगे।

स्वास्थ्य धर्म

स्वास्थ्य धर्म हमारे जीवन का सबसे श्रेष्ठ भित्ति है। यह कर्मधर्म के अन्तर्गत है। मस्तिष्क और मेरुदण्ड के भीतर प्राण केन्द्र है। वैज्ञानिक व्यायाम द्वारा प्राण केन्द्र सतेज रहता है। मस्तिष्क के भीतर और भी केन्द्र के विषय में कहा गया है। संक्षेप में वे सब केन्द्रों का विषय चित्र द्वारा समझाया जाता है। ९ = प्राणकेन्द्र, १ = कर्मकेन्द्र या मन, २ = सूर्यकेन्द्र या प्रेमकेन्द्र, ३ = विष्णुकेन्द्र = समाजकेन्द्र, ४ = शिव केन्द्र = धर्मकेन्द्र। सुषुप्ति के स्तर ५ = ज्ञानकेन्द्र, ६ = अव्यक्तकेन्द्र, ७ = गणेश या विवेक या विज्ञानकेन्द्र, १० = ब्रह्मनाड़ी या शक्तिनाड़ी। तुमलोग यदि चिन्ता करके देखो तो समझ में जायेगा। यदि सब केन्द्र शक्तिशाली रहे तो जीवन सुखमय एवं आनन्ददायक व शान्तिमय रहेगा। प्राणकेन्द्र को सतेज रखना ही स्वास्थ्य धर्म है। हमारे शास्त्र में इसे हठ योग कहते हैं। हठ योग सभी स्वास्थ्य धर्म मूलक है। हठयोग में सूर्यनमस्कार और पद्मासन, स्वस्तिकासन, सर्वांगासन, पश्चिमोत्तान आसन और शवासन सब आसनों में विशेष फलदायक और प्रयोजनीय आसन है। इन सबों का दो-दो तीन-तीन मिनट अभ्यास शरीर के लिए अच्छा फलदायक है। आजकल स्कूल कालेजों में हमारे देश में भी हठयोग का बहुल प्रचलन हो रहा है। इस बात को कह देना चाहिए कि आसन के अभ्यास के लिए अधिक समय लगाना ठीक नहीं है। हमारे देश में जितना स्वास्थ्य विषयक क्रियायें हैं जैसे दण्ड, बैठक इत्यादि सभी से मेरुदण्ड व ब्रह्मनाड़ी का सम्बन्ध रहता है। शरीर, मन, विवेक, प्रेम, सुख, शान्ति, धर्मज्ञान चर्चा, शक्ति चर्चा सभी का मूल आत्मा या ब्रह्मनाड़ी है। भारत छोड़ और सभी देशों में जो शरीर चर्चा होती है उसमें ब्रह्मनाड़ी का संयोग कम रहता है। उनलोगों का शरीर चर्चा का लक्ष्य शरीर की पेशियों को कड़ा और मजबूत बनाना है। हमारे देश के शरीर चर्चा का मूल ब्रह्मनाड़ी है। मेरुदण्ड से सम्बन्ध रखे बिना व्यायाम शरीर को नुकसान पहुँचाता है। पेशियों को मजबूत बनाने के कुछ दिन बाद पेशियों में वातों का आश्रय हो जायेगा। हमारे देश में व्यायाम का लक्ष्य बिल्कुल दूसरे प्रकार का है।

प्रत्येक ग्रामों में बालक, युवक और सब मनुष्य पवित्र स्थान में एक चित्त होकर समवेतरूप में व्यायाम का अनुष्ठान कर सकते हैं। पश्चिम देशीय व्यायाम में खर्च बहुत है। जमीन भी बहुत अधिक लगती है। हमारे जैसे गरीब देश के लिए अधिक व्ययसाध्य व्यायाम ठीक नहीं है। जो लोग पेट भर नमक रोटी आहार करते हैं उनके लिए भी हमारे देश का व्यायाम लाभदायक है। हम यहाँ पर ऐसे अच्छे अच्छे व्यायाम की विधि बतायेंगे जो कि शिशु, वृद्ध, नर-नारी सबके लिए प्रयोजनीय है। समवेतरूप से व्यायाम करने के

लिए कुछ नियम प्रवर्तन किया जा रहा है। आजकल यह सभी व्यायाम सरकार भी अभ्यास करवा रही है। हम तब भी कुछ व्यायाम के नियम को नीचे लिखते हैं।

१। आराम से खड़े हो जाओ (stand easy) पैर में ३०" का अन्तर रहेगा। हाथ पीछे बाधा रहेगा और कहीं खड़े हो जाओ और बांये पैर से शरीर का भार दे दो।

२। सम्यक (form single ring):- एक के पीछे दूसरे खड़े हो जाओ। खड़े होने के समय ही मनुष्य में दो हाथ से अधिक जमीन खाली रहेगा।

३। पुरस योजय:- ऊपर लिखित व्यायाम की तरह अर्थात् जो दो मनुष्य के मध्य में जो खाली जमीन रहती है उसके दो हाथ की दूरी पर खड़े हो जाओ। और दाहिने और बायें देखकर लाइन को सीधी बनाओ।

४। स्वस्थ:- सुख से खड़े हो जाओ। बायें पैर को यथा स्थान पर रक्खो, इस आदेश के बाद इधर-उधर देख सकते हो और हाथ पैर भी हिला सकते हो। और बात भी कर सकते हो।

५। दक्षय (alert):- सीधा होकर खड़े हो जाओ। दोनों पैर एक जगह रक्खो, नजर १०० गज सामने में रक्खो। दोनों हाथ उरू स्थान में रक्खो, ऊंगली आपस में सटी रहेगी।

६। सिद्धय:- प्रस्तुत हो! यह 'दक्ष' के समकक्ष है। यथा 'दक्ष' की अवस्था में खड़े होकर बाम पैर में शरीर का वजन रक्खो।

७। सावधान:- आदेश के लिए प्रस्तुत हो जाओ। यदि किसी को अन्यमनस्क देखा जाता है तो यह आदेश दिया जाता है। यह आदेश मिलने पर बायें पैर पर भार देकर खड़ा होना पड़ता है और आगे की ओर सतेज दृष्टि रखनी पड़ेगी।

८। प्रचल:- आगे चलो (Forward)।

९। वेगचल:- दौड़ो।

१०। दक्षिण:- दाहिने पैर को बढ़ाओ।

११। वाम: बायें पैर को बढ़ाओ।

१२। एक पद प्रस्सर:- एक पद अग्रवर्ती हो जाओ। आगे बायें पैर को रखना पड़ेगा।

१३। द्विपद प्रस्सर:- दो पैर अग्रवर्ती हो जाओ।

१४। त्रिपद प्रस्सर:- तीन पैर अग्रवर्ती हो जाओ।

१५। चतुर्पद प्रस्सर:- चार पैर अग्रवर्ती हो जाओ।

१६। उपवेशय:- बैठो।

१७। उत्तिष्ठय:- खड़े हो जाओ।

१८। मण्डलय:- गोलाकार में खड़े हो जाओ अर्थात् घेर लो।

- १९। गण विभागः— एक, दो, एक, दो कहते रहो। Number in twos: लाईन के बायें ओर पहले व्यक्ति दो कहेंगे और उसके आगे ऐसे ही गिनती चलेगी।
- २०। द्विततीः— एक नम्बर दो पैर आगे आवेंगे।
- २१। अंश भागः— एक दो तीन, फिर एक दो तीन।
- २२। त्रिततीः— तीन भाग हो जाओ, एक नम्बर दो पाँव आगे जायेंगे और दो नम्बर अपने स्थान पर रहेगा और तीन नम्बर दो पैर पीछे रहेगा।
- २३। गण भागः— एक, दो, तीन, चार, एक, दो, तीन, चार।
- २४। चतुर्ततीः— चार भाग हो जाओ। एक नम्बर चार पाँव आगे और दो नम्बर अपने स्थान पर और तीन नम्बर दो पैर आगे, चार नम्बर दो पैर पीछे।
- २५। वाम् द्विग (Eyes left):— बायें तरफ देखते हुए लाईन सीधा बनाओ।
- २६। दक्षिण द्विग (Eyes right):— दक्षिण दिशा को देखते हुए लाईन सीधा करो।
- २७। स्तब्धः— खड़े हो जाओ।
- २८। भंग छक्षमः— अलग-अलग हो जाओ।
- २९। समक्षमः— सामने-सामने खड़े हो जाओ। यह आदेश मिलने पर लाईन में खड़े हो जाओ। और एक का मुंह दूसरे के सामने रहे।
- ३०। विपरीतम्:— विपरीतमुखी खड़े हो जाओ। इस आदेश द्वारा ही दो लाईन में रहने वाले परस्पर विपरीत मुंह करके खड़े हो जाओ।
- ३१। अग्रानुतिष्ठः— आगे की लाईन के साथ में सामने खड़े हो जाओ।
- ३२। अध्यात्म अनुष्ठान में सिद्धयः— इस आदेश को मिलने से ब्रह्मनाड़ी में मन को रखना पड़ेगा।
- ३३। स्वस्तिकासने उपवेशयः स्वस्तिकासन में बैठो।
- ३४। (क) पूर्वाभिमुखम् भव (ख) उत्तराभिमुखम् भव (ग) इशानाभिमुखम् भव इत्यादि।
- ३५। मूलाधार में कुण्डलिनी नामक महाशक्ति का ध्यान करो।
- ३६। सहस्रार (शिवपिण्ड) में परमब्रह्म का ध्यान करो।
- ३७। मूलाधारात् सहस्रार पर्यन्त व्याप्तम् ब्रह्मनाड़ीम् ध्यात्वा त्रिधा, गायत्री तथा ब्रह्मस्तोत्रम् पठेत्।

☼ समाप्त ☼